अथ

श्रावण मास माहात्म्य

भाषा टीका सहित

टीकाकार—पण्डित दौलतराम गौड़ वेदाचार्य ।

प्रकाशक—ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर,
राजादरवाजा, वाराणसी-१

फोन नं० ६०२४२ मूल्य

अथ

श्रावणमासमाहात्म्य

भाषा टीका सहित

टीकाकार—पण्डित दौलतराम गौड़, वेदाचार्य

प्रकाशक—ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर

राजादरवाजा, वाराणसी।

मूल्य (७)

विषय-सूची

वि०

२

॥ समाप्तः ॥

सू०

अथ श्रावणमास माहात्म्य

शौनक जी ने सूतजी से पूछा है—सूत, हे महाभाग, हे व्यास शिष्य, हे महामते, आपके मुख से अनेक आख्यान सुने ॥१॥ मुझे तृप्ति नहीं हुई फिर भी सुनने की इच्छा बढ़ती है । कार्तिक मास का माहात्म्य तुला के

श्रीगणेशाय नमः । शौनक उवाच । सूत सूत महाभाग व्यासशिष्य महामते ।
त्वदीयवदनाम्भोजान्नानाख्यानानि शृण्वताम् ॥ १ ॥ तृप्तिर्न जायते भूयः श्रवणेच्छा प्रवर्धते ॥
कार्तिकस्य च माहात्म्यं तुलासंस्थे दिवाकरे ॥ २ ॥ माघमासस्य माहात्म्यं मकरस्थे दिवाकरे ॥
वैशाखमासमाहात्म्यं तथा मेषगते रवौ ॥ ३ ॥ तत्र तत्र च ये धर्माः कथिताः सर्वशस्त्वया ॥
एतेभ्योऽप्यधिकः कश्चिन्मासश्चेत्तव सम्मतः ॥ ४ ॥ धर्म ईशप्रियो नित्यं तं त्वं कथय साम्प्रतम् ॥

सूर्य होने पर, मकर के सूर्य हो जाने पर माघमास का माहात्म्य और मेष के सूर्य हो जाने पर वैशाखमास का माहात्म्य कहा ॥२॥ उन महीनों के जो धर्म हैं उनको आपने कहा अत्र । इन मासों से भी कोई उत्तम महीना आप को सम्मत

हो ॥३॥ आप को धर्म और ईश्वर प्रिय हैं, अतः उसे आप कहें। जिसके सुनने मात्र से मेरी अन्यत्र श्रवण करने की इच्छा न हो और व्यास गण श्रद्धालु श्रोता से कोई बात गुप्त नहीं रखते हैं ॥४॥ सूतजी ने कहा—आप सब मुनि गण सुनें, आपके कहने से मैं प्रसन्न हूँ और आपके लिये मुझे कोई भी गुप्त नहीं है ॥५॥ दम्भ रहित होना,

यच्छ्रुत्वा पुनरन्यत्र श्रोतुमिच्छा न नो भवेत ॥ श्रद्धालोः श्रोतुरग्रे तु वक्ता गोप्यं न कारयेत् ॥ ५ ॥ सूत उवाच–शृणुध्वं मुनयः सर्वे भवतां वाक्यगौरवात् ॥ तुष्टोऽहं न च गोप्यं मे भवदग्रे तु किञ्चन ॥ ६ ॥ अदाम्भित्वं तथास्तिक्यमशठत्वं सुभक्तता ॥ ७ ॥ शुश्रूषत्वं विनीतत्वं ब्रह्मण्यत्वं सुशीलता ॥ ध्रुवत्वं च शुचित्वं च तपस्वित्वानसूयते ॥ ८ ॥ एते द्वादशसंख्याका गुणाः श्रोतुः प्रकीर्तिताः ॥ ते सर्वेऽपि भवत्स्वेव तुष्यंस्तत्त्वं ब्रवीम्यतः ॥ ९ ॥ सनत्कुमारो मेधावी धर्मजिज्ञासुरानतः ॥ ईश्वरं परिपप्रच्छ भक्त्या परमया युतः ॥ १० ॥ सनत्कुमार

आस्तिकबुद्धि होना, शठता न होना, परमात्मा में भक्ति होना, सुनने की इच्छा होना, नम्रता होना, ब्राह्मण भक्त होना, सुशील स्वभाव होना, धैर्य होना, पवित्रता होना, तपस्वी होना, दोषारोपण रहित होना, ये बारह गुण श्रोता के कहे गये हैं। वे सब गुण आप लोगों में ही हैं इससे मैं प्रसन्न हो आप से तत्त्व बात को कहता हूँ ॥६—९॥ धर्म को जानने की अभिलाषा से मेधावी सनत्कुमार ने ईश्वर को नमस्कार कर परमभक्ति द्वारा पूछा ॥१०॥ सनत्कुमारजी ने कहा

हे देवों के देव महादेव, योगियों के ध्येय चरणकमल, आपसे बहुत व्रत तथा धर्मों को सुना ॥ ११ ॥ लेकिन इस समय मेरे हृदय में एक श्रवण करने की अभिलाषा विद्यमान है जो बारह मासों में अधिक उत्तम मास कहा हो ॥ १२ ॥ तथा आपको अत्यन्त प्रसन्न करनेवाला हो और सब कर्मों का सिद्धि दाता हो तथा दूसरे मास में किये जाने वाले

उवाच—देवदेव महादेव योगिध्येयपदाम्बुज ॥ व्रतानि बहुशस्त्वत्तः श्रुता धर्माश्च सर्वशः ॥ ११ ॥ तथापि श्रोतुमिच्छैका वर्तते हृदि साम्प्रतम् ॥ द्वादशस्वपि मासेषु मासः श्रेष्ठतमः स्मृतः ॥ १२ ॥ तव प्रीतिकरोऽत्यन्तं सिद्धिदः सर्वकर्मणाम् ॥ अन्यमासे कृतं कर्म तदेवास्मिन्कृतं यदि ॥ १३ ॥ स्यादनन्तफलं देव तं मासं वक्तुमर्हसि ॥ तत्रत्यान् सर्वधर्मांश्च लोकानुग्रहकाम्यया ॥ १४ ॥ ईश्वर उवाच—सनत्कुमार वक्ष्यामि सुगोप्यमपि सुव्रत ॥ सुश्रूषत्वेन भक्त्या च प्रीतोऽस्मि विधिनन्दन ॥ १५ ॥ द्वादशस्वपि मासेषु श्रावणो मेऽति वल्लभः ॥ श्रवणार्हं यन्माहात्म्यं

कर्म यदि इस महीने में किये जाँय ॥ १३ ॥ हे देव, जिसमें कर्मों के करने मात्र से अनन्त फल की प्राप्ति हो ऐसे उस मास को कहें संसार के कल्याणार्थ मास के समस्त धर्म को कहें ॥ १४ ॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, हे सुव्रत, हे ब्रह्मा के पुत्र, आपकी सेवा, भक्ति से प्रसन्न हो मैं आपसे अत्यन्त गुप्त बात कहूँगा ॥ १५ ॥ बारह महीनों में श्रावण महीना मुझे अत्यन्त प्रिय है जो श्रावणमास का माहात्म्य सुनने योग्य हो जाने के कारण मास

का श्रावण नाम हुआ ॥ १६ ॥ पूर्णिमा को श्रवण नक्षत्र के योग हो जाने से भी मास का श्रावण नाम कहा। जो श्रवणमात्र से सिद्धि देनेवाला है। अतः श्रावण नाम कहा ॥ १७ ॥ आकाश के समान स्वच्छ हो जाने से नभा नाम कहा उस मास के धर्मों की गणना करने के लिए भूमि पर कौन समर्थ हो सकता है ॥ १८ ॥ जिसके संपूर्ण फलों को

ततोऽसौ श्रावणो मतः ॥ १६ ॥ श्रवणर्क्षं पौर्णमास्यां ततोऽपि श्रावण स्मृतः ॥ यश्च श्रवणमात्रेण सिद्धिदः श्रावणोऽप्यतः ॥ १७ ॥ स्वच्छत्वाच्च नभस्तुल्यो नभा इति ततः स्मृतः ॥ तत्रत्यधर्मगणनां कर्तुं कः शक्नुयाद् भुवि ॥१८॥ सर्वतो यत्फलं वक्तुं चतुरास्योऽभवद्विधिः ॥ द्रष्टुं यत्फलमाहात्म्यं सहस्राक्षोऽभवद्वृषा ॥ १९ ॥ अनन्तो यत्फलं वक्तुं सहस्रद्वयजिह्वकः ॥ किं बहूक्तेन कोऽप्येतद् द्रष्टुं वक्तुं न च क्षमः ॥ २० ॥ एतत्कलामपि मुने लभते नान्यमासकः ॥ सर्वो व्रतमयश्चैव सर्वो धर्ममयः स्मृतः ॥ २१ ॥ न कोऽपि वासरो यत्र व्रतशून्यः प्रदृश्यते ॥ प्रायेण तिथयश्चापि

कहने के लिये ब्रह्मा हुए। जिस श्रावणमास के माहात्म्य को देखने के लिये इन्द्र हुए ॥ १९ ॥ भगवान् अनन्त जिसके फल को कहने के लिये दो सहस्र जिह्वा धारण की। अधिक कहने से क्या इस मास को देखने तथा कहने में किसी को भी सामर्थ्य नहीं है ॥ २० ॥ हे मुने, अन्य मास इस मास की कला को भी नहीं प्राप्त कर सकते। संपूर्ण

प्राय व्रतरूप है । सारा श्रावणमास धर्मरूप है ॥ २१ ॥ इस महीने में कोई भी दिन व्रत शून्य नहीं ...

मास में सब तिथि व्रतवाली हैं ॥ २२ ॥ यहाँ पर मैं जो कहता हूँ वह अर्थवाद नहीं है । अतः दुःखी, जिज्ञासु भक्त, अर्थी और मुमुक्षु ॥ २३ ॥ इन चारों जनोंसे अपनी-अपनी अभीष्ट सिद्ध से यह मास सेवन योग्य है । सनत्कुमार ने कहा— हे भगवान्, आपने जो कहा इस मास में कोई भी दिन व्रत शून्य नहीं हैं ॥ २४ ॥ इस महीने में तिथि भी

व्रतवत्योऽत्र मासि वै ॥२२॥ अत्रोच्यते मया यद्यदर्थवादो न सोऽत्र हि ॥ आर्तैर्जिज्ञासुभिर्भक्तैस्तथार्थार्थिमुमुक्षुभिः ॥ २३ ॥ चतुर्विधैरपि जनैः सेव्यः स्वस्वेष्टकाङ्क्षिभिः ॥ सनत्कुमार उवाच ॥ भगवन् यस्त्वया प्रोक्तो व्रतशून्यो न वासरः ॥२४॥ प्रायेण तिथिरप्यत्र तन्ममाचक्ष्व सत्तम ॥ कस्यां तिथौ किं व्रतं स्यात् कस्मिन्वारे च किं व्रतम् ॥ २५ ॥ तत्र तत्राधिकारी कः किं फलं कीदृशो विधिः ॥ केन केनापि चाचीर्णमुद्यापनविधिश्च कः ॥२६॥ को देवः कोऽत्र पूज्यः स्यात् सामग्री पूजनस्य का ॥ प्रधान पूजनं कुत्र जागरश्चापि तद्विधिः

व्रतशून्य नहीं हैं । हे श्रेष्ठ, उसको आप मुझसे कहें । कौन तिथि में कौन व्रत होता है तथा किस वार में कौन व्रत होता है ॥ २५ ॥ उस व्रतका अधिकारी कौन है । फल क्या है । विधि क्या है । किसने किसने व्रत को किया । उद्यापन विधि क्या है ॥२६॥ देवता कौन है । पूज्य कौन है । पूजन सामग्री क्या है । प्रधान पूजन किसका है । जागरण विधि क्या है ॥ २७ ॥ किस व्रत का कौन समय है । हे प्रभो, वह मुझसे कहें । श्रावणमास कैसे आपको

प्रिय हुआ। किस कारण से पवित्रतम कहा गया ॥ २८ ॥ इस महीने में अवतार कौन श्रेष्ठ माना गया। यह मास श्रेष्ठ कैसे हुआ। इस मास में कौन अनुष्ठान करने योग्य है। हे प्रभो, मुझसे कहें ॥ २९ ॥ आपके समक्ष मुझ मूर्ख को प्रश्न करने का कितना ज्ञान हो सकता है। पूछने से जो रह गया है वह सब मुझसे कहें ॥ ३० ॥ हे कृपालो, कृपा

॥ २७ ॥ कस्य व्रतस्य कः कालस्तत्सर्वं वद मे प्रभो ॥ त्वत्प्रियश्च कथं मासः पवित्रः केन हेतुना ॥ २८ ॥ मासेऽस्मिन्नवतारः कः श्रेष्ठश्चायं कुतोऽभवत् ॥ अस्मिन्मासे च के धर्मा अनुष्ठेया वद प्रभो ॥ २९ ॥ प्रश्नेऽपि च कियज्ज्ञानं ममाज्ञस्य तवाग्रतः ॥ अशेषेण समाचक्ष्व पृष्टादन्य यद्भवेत् ॥ ३० ॥ जनानां तारणार्थाय कृपालो कृपया वद ॥ रवौ सोमे भौमवारे बुधे सुरगुरौ कवौ ॥ ३१ ॥ शनैश्चरदिने चापि तत्सर्वं वद मे प्रभो ॥ सर्वेषामादिभूतस्त्वमादिदेवस्ततः स्मृतः ॥ ३२ ॥ एकस्य विधिबाधाभ्यामन्यबाधाविधा यथा ॥ अन्येषामल्पदेवत्वान्महादेवस्ततः

कर प्राणियों के उद्धारार्थ कहें। रविवार, सोमवार, मङ्गलवार, बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार और शनिवार को जो व्रतादि किया जाता हो वह सब दया कर हे प्रभो, मुझसे कहें ॥३१॥ क्योंकि आप सबके आदि कारण हैं अतः आदिदेव आप कहे जाते हैं ॥ ३२ ॥ एक विधि जैसे बाँधकर दूसरे विधि का विधान हो जाता है। इसी तरह अन्य देवताओं के छोटे देवता होने से आप महादेव कहे जाते हैं ॥ ३३ ॥ पीपल के पेड़ में ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तीनों देवों का निवास

है। उसमें भी आप का निवास सबसे ऊपर में कहा है। आप कल्याण स्वरूप होने से शिव हैं। पाप समूह नाशक होने से हर हैं ॥३४॥ आप आदिदेव होने से श्वेत वर्ण हैं। क्योंकि शुक्लवर्ण में विकार प्राप्त होने से अन्य वर्ण होते हैं ॥३५॥ आप कर्पूर वर्ण के तुल्य गोरे वर्ण होने से आप आदिदेव हैं। पहले गणपति का अधिष्ठान रूप चार दल

स्मृतः ॥३३॥ देवत्रयाश्रयेऽश्वत्थे उपर्यास्ते स्थितिस्तव ॥ शिवस्त्वं शिव रूपत्वादघौघहरणाद्धरः ॥ ३४ ॥ तव चैवादिदेवत्वं प्रमाणं शुक्लवर्णकः ॥ प्रकृतौ शुक्लवर्णोऽन्ये वर्णाः स्युर्विकृतिं गताः ॥ ३५ ॥ यतः कर्पूरगौरस्त्वमादिदेवस्ततो ह्यसि ॥ गणपत्याधारभूतान्मूलाधाराच्चतुर्दलात् ॥ ३६ ॥ स्वाधिष्ठानाभिधात्पद्मात्षड्दलाद्ब्रह्मदैवतात् ॥ मणिपूराद्दशदलान्मण्डलाद्विष्णवधिष्ठितात् ॥ ३७ ॥ उपरि द्वादशदलेऽनाहताख्ये हृदि स्थिते ॥ तव स्थितिर्बोधयन्ती सर्वेषां हृदये स्थिताम् ॥३८॥ ब्रह्मविष्णूपरिष्टात्त्वं वदतीदं च मुख्यताम् ॥ एकस्य तेऽर्चनाद्देव पञ्चायत-

का मूलाधार नामका चक्र है ॥३६॥ उसके ऊपर अधिष्ठान रूप छः दल का ब्रह्मा का अधिष्ठान नामका दूसरा चक्र है। उसके ऊपर अधिष्ठानरूप दस दल का भगवान् विष्णु का मणिपूर नामक तीसरा चक्र है ॥३७॥ उसके ऊपर हृदयमें अधिष्ठान रूप बारह दल का अनाहत नामक चौथा चक्र है। सबके हृदय में होनेवाले उस चक्र में आपकी स्थिति कही है ॥३८॥ ब्रह्मा तथा भगवान् विष्णुके ऊपर आपका निवास हो जाने से मुख्यतः कहा गया है। केवल आपके

पूजन से 'पञ्चायतन' का अर्चन हो जाता है ॥ ३९ ॥ यह सब अन्य देवों में नहीं है। स्वयं आप शिव है। आपके वाम जंघा में पार्वती का निवास है, गणपति का ॥ ४० ॥ दक्षिण जंघा में, नेत्र में सूर्य का, हृदय में भगवान् हरि का निवास है। अन्न ब्रह्ममय कहा गया है। भगवान् हरि जलरूप कहे जाते हैं ॥ ४१ ॥ हे ईशान, जब आप उस अन्न

नपूजनम् ॥ ३९ ॥ जायतेऽन्यसुरे चैवं सम्भवो नहिं सर्वथा ॥ स्वयं शिवस्त्वं वामोरौ शक्तिर्गणपतिस्तथा ॥ ४० ॥ दक्षिणोरावक्ष्णि सूर्यो हृदये भक्तराड्हरिः ॥ अन्नस्य ब्रह्मरूपत्वाद्रसात्मत्वाद्धरेरपि ॥ ४१ ॥ भोक्तृत्वाच्च तवेशान श्रेष्ठत्वे कस्य संशयः ॥ विरक्तत्वं शिक्षयति श्मशाने पर्वते स्थितिः ॥ ४२ ॥ उतामृतत्वस्येशानमन्त्रलिंगेन सूक्तके ॥ पौरुषे प्रतिपाद्योऽसि इति प्राहुर्महर्षयः ॥ ४३ ॥ जगत्संहारकं हलाहलम् केन धृतं गले ॥ महाप्रलयकालाग्निं भाले धर्तुं च कः क्षमः ॥ ४४ ॥ भवान्धकूपपतने हेतुः केन हतः स्मरः ॥ किं वर्ण्यं भागधेयं

जल के भोक्ता हैं तो आपकी श्रेष्ठता में किसको सन्देह हो सकता है। आपका श्मशान और पर्वत में निवास ही सब प्राणियों को विरक्तता की शिक्षा दे रहा है ॥ ४२॥ 'उतामृतत्वस्येशान—' मन्त्र आपके बोधक हैं। इन पुरुषसूक्त मन्त्रों से कहे जाते हैं। ऐसा महर्षिगण चाहते हैं ॥ ४३ ॥ संसार का संहार कारक हलाहल को अपने कंठ में किसने

अन्धकूप में गिरने का कारण कामदेव का किसने वध किया। आप ऐसे हैं, यों आप के भाग्य का कौन वर्णन कर

ते यद्वक्तुमीदृशो भवान् ॥ ४५ ॥ त्वां स्तोतुं जन्मकोट्यापि वराकोऽहं न च क्षमः ॥ कृत्वा मयि कृपामेव मत्प्रश्नान् वक्तुमर्हसि ॥ ४६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

ईश्वर उवाच—साधु साधु महाभाग विनीतोऽसि विरिञ्चिज ॥ श्रोता गुणयुतो यस्माच्छ्र-द्धालुर्भक्तिभूषितः ॥ १ ॥ श्रावणे मासि विषये यत्पृष्टं भवताऽनघ ॥ अपृष्टमपि ते वक्ष्ये प्रेम्णा परमया मुदा ॥ २ ॥ प्रियो भवति चाद्वेष्टा नम्रस्त्वं च तथाविधः ॥ पञ्चमो मस्तकश्छिन्नः

सकता है ॥ ४५ ॥ मैं तुच्छ आपकी स्तुत्यर्थ करोड़ों बार जन्म लेकर भी समर्थ नहीं हूँ। मेरे ऊपर दया कर मेरे प्रश्नों को कहने के योग्य आप हैं ॥ ४६ ॥

शङ्करजी ने सनत्कुमारजी से कहा—हे महाभाग, यथोचित है,—ब्रह्माके पुत्र आप नम्र हैं। जिस कारण आप श्रद्धालु हैं, भक्ति से भूषित हैं। समस्त गुणों से युक्त श्रोता हैं ॥ १ ॥ हे अनघ, श्रावणमास के बारे में आपने जो पूछा वह तथा विना प्रष्टव्य भी मैं प्रसन्नता से आप से कहता हूँ ॥ २ ॥ शत्रुता रहित प्राणी प्रिय होता है तथा आप

वैसे ही नम्र हैं। आपके पिता ब्रह्मा उद्दण्ड थे अतः उनका पाँचवाँ सिर कट गया ॥ ३ ॥ उस मत्सरता को छोड़ मेरी शरण आये। हे तात, मैं आप से कहूँगा एकाग्र मन होकर सुनो ॥ ४ ॥ हे योगिन्, श्रावणमास में नियम से रहकर मनुष्य चार बजे सायंकाल भोजन करे। एक महीने तक रुद्राभिषेक करे ॥ ५ ॥ अपनी प्रिय किसी वस्तु को छोड़ दे।

प्रोद्धतस्य पितुस्तव ॥ ३ ॥ त्वं च तं मत्सरं त्यक्त्वा मां यतः शरणं गतः ॥ अतो वक्ष्यामि ते तात भूत्वा चैकमनाः शृणु ॥ ४ ॥ कुर्यान्नक्तव्रतं योगिन् श्रावणे नियतो नरः ॥ रुद्राभिषेकं कुर्वीत माससमात्रं दिने दिने ॥ ५ ॥ स्वप्रीतिविषयस्यापि कस्यचित्त्यागमाचरेत् ॥ कोटि पत्रैश्च धान्यैश्च तुलसीमञ्जरीदलैः ॥ ६ ॥ बिल्वपत्रैर्लक्षपूजां शङ्करस्य समाचरेत् ॥ कोटिलिंगादिकर्तव्यं ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ॥ ७ ॥ धारणापारणो कुर्यादुपोषणमथापि च ॥ पञ्चामृताभिषेकं च मम प्रीतिकरं परम् ॥ ८ ॥ अस्मिन्मासे कृतं यद्यत्तदानन्त्याय कल्पते ॥ भूमि-

पुष्प, फल, धान्य, तुलसी की मञ्जरी युक्त दल ॥६॥ बिल्वपत्रों से भगवान् शङ्कर की लक्षपूजा करे। कोटिलिङ्ग आदि का निर्माण तथा अर्चन करे। ब्राह्मणों को भोजन कराए ॥ ७ ॥ नियम से धारण, पारण को करे। उपवास करे। मुझे पञ्चामृत से अभिषेक अति प्रिय है उसे भी करे ॥ ८ ॥ इस मास में जो जो क्रिया जाता है वह अनन्त फल को देनेवाला है। हे मुने, भूमि पर सोये ...

करे । ओदन रहित अन्न का भोजन करे या हविष्यान्न भोजन करे ॥ १० ॥ पत्तल में भोजन करे तथा व्रती सागमात्र का त्याग करे । हे मुनि सत्तम, भक्ति युक्त हो व्रत को करे ॥ ११ ॥ सदाचारी हो भूमिपर शयन करे । प्रातः स्नान करे । इन्द्रियों को वश में रखे । एकाग्र मन हो रोज मेरी पूजा करे ॥ १२ ॥ इस महीने में मन्त्रों का पुरश्चरण भी

शायी ब्रह्मचारी सत्यवादी भवेन्मुने ॥ ९ ॥ न नयेन्मासमेनं तु व्रतबन्ध्यं कदाचन ॥ अनोदनं समश्नीयाद्धविष्यान्नमथापि वा ॥ १० ॥ पत्रे चैव समश्नीयाच्छाकमात्रं त्यजेद्व्रती ॥ किञ्चित्व्रती सर्वथा स्याद्भक्तिमान्मुनिसत्तम ॥ ११ ॥ सदाचारी भूमिशायी प्रातः स्नायी जितेन्द्रियः ॥ मत्पूजां प्रत्यहं कुर्यादेकाग्रकृतमानसः ॥ १२ ॥ पुरश्चरणमप्यत्र मन्त्राणां सिद्धिदं परम् ॥ शिवषडक्षरमन्त्रस्य गायत्र्याश्च जपं चरेत् ॥ १३ ॥ प्रदक्षिणां नमस्कारान् वेदपारायणं तथा ॥ कृतं फलति सद्यो वा वाञ्छितार्थफलप्रदम् ॥ १४ ॥ जपः पुरुषसूक्तस्य अधिकं फलदो भवेत ॥ ग्रहयज्ञः कोटिहोमो लक्षहोमोऽयुतस्तथा ॥ कृतः फलति सद्योऽत्र

उत्तम सिद्धि देनेवाला है । षडाक्षर शिवमन्त्र और गायत्रीमन्त्र का जप करे ॥ १३ ॥ प्रदक्षिणा, नमस्कार या वेदपाठ करे तो सद्यः वाञ्छित फल देनेवाला है ॥ १४ ॥ पुरुषसूक्त जपे तो अधिक फल देनेवाला है । ग्रहयज्ञ, कोटिहोम, लक्षहोम तथा अयुत होम करने पर सद्यः फलता है और इच्छित फल देनेवाला होता है ॥ १५ ॥ जो इस महीने में

एक दिन भी व्रत (नियम) से रहित व्यतीत करता है, वह महाप्रलय तक घोर नरक को जाता है ॥ १६ ॥ जैसा यह महीना मुझे प्रिय है, वैसा कोई भी मुझे प्रिय नहीं। यह महीना कामना के अनुसार फल देनेवाला है। फलों को देने वाला तथा निष्काम मनुष्य का किया हुआ कर्म मोक्षफल को देनेवाला है ॥ १७ ॥ हे सत्तम, उस समय में जो धर्म

वाञ्छितार्थफलप्रदः ॥ १५ ॥ अस्मिन्मासे चैकदिनं यो वन्ध्यं व्रततो नयेत् ॥ स याति नरकं घोरं यावदाभूतसम्प्लवम् ॥ १६ ॥ यथायं मे प्रियो मासस्तथा किञ्चिन्न मे प्रियम् ॥ काम्यश्च फलदश्चायं निष्कामस्य तु मोक्षदः ॥ १७ ॥ तत्र तत्र तु ये धर्मास्तन्मत्तः शृणु सत्तम ॥ रवौ रविव्रतं सोमे मत्पूजा नक्तभोजनम् ॥ १८ ॥ प्रथमं सोममारभ्य व्रतं स्याद्रोटकाभिधम् ॥ सार्धमासत्रयं तत्स्यात्सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ १९ ॥ भौमे मंगलगौर्याश्च तदह्नोर्बुधजीवयोः। शुक्रे जीवन्तिकायाश्च आञ्जनेयनृसिंहयोः ॥ २० ॥ शनौ व्रतं समादिष्टं

कहे गये हैं उनको मुझसे सुनो। रविवार को सूर्य का व्रत, सोमवार को मेरी पूजा, नक्त भोजन करे ॥ १८ ॥ श्रावण महीने के पहले सोमवार से प्रारम्भ कर साढ़े तीन महीने तक होनेवाला सम्पूर्ण कामना की अर्थसिद्धि को देनेवाला रोटक नाम का व्रत होता है ॥१९॥ मङ्गलवार के दिन मङ्गलागौरी का व्रत होता है। बुधवार को बुध का व्रत, बृहस्पति-वार को बृहस्पति का व्रत, शुक्रवार को 'जीवन्तिका' देवी का व्रत होता है। हनुमान तथा नृसिंह का शनिवार का व्रत कहा

गया है। हे मुने, अब तिथियों में होनेवाले व्रतों को सुनो। श्रावणमास के शुक्लपक्ष की द्वितीया को औदुम्बर नाम का व्रत होता है॥ २०-२१॥ श्रावणमास की शुक्लपक्ष तृतीया को गौरीव्रत नाम का व्रत होता है श्रावण शुक्ल चतुर्थी को दूर्वा गणपति नामका व्रत होता है॥ २२॥ हे मुने, इसी का अन्य नाम विनायक चतुर्थी व्रत भी है। श्रावण शुक्लपक्ष की

तिथिष्वथ मुने शृणु॥ नभःशुक्लद्वितीयायां व्रतमौदुम्बराभिधम् ॥ २१॥ गौरीव्रतं तृतीयायां श्रावणे शुक्लपक्षके॥ तथा शुक्लचतुर्थ्यां तु दूर्वागणपतिव्रतम् ॥ २२॥ विनायकीति तस्याश्च संज्ञा स्यादपरा मुने॥ नागानां पूजने शस्ता पञ्चमी शुक्लपक्षके॥ २३॥ इमां मानवकल्पादिं जानीहि मुनिसत्तम॥ सूपौदनव्रतं षष्ठ्यां सप्तम्यां शीतलाव्रतम् ॥ २४॥ पवित्रारोपणं देव्या वसौ भूते यथा भवेत्॥ शुक्लकृष्णनवम्यान्तु नक्तव्रतविधिः स्मृतः ॥ २५॥ दशम्यां शुक्लपक्षे तु आशा संज्ञं व्रतं भवेत्॥ पक्षद्वये विशेषोऽस्मिन्नेकादश्योस्तु

पञ्चमी नाग पूजन में उत्तम कही गई है॥ २३॥ हे मुनिश्रेष्ठ, इसका अन्य नाम मानवकल्पादि है। ऐसा जानो। षष्ठीके दिन 'सूपौदन' नामक व्रत और सप्तमी को शीतला देवी का व्रत होता है॥ २४॥ अष्टमी और चतुर्दशी तिथि में देवी का पवित्रारोपण करे। श्रावणमास की कृष्ण तथा शुक्ल पक्ष की नवमी को 'नक्तव्रत' का विधान कहा है॥ २५॥ शुक्ल पक्ष दशमी को 'आशा नामक' व्रत होता है॥ २६॥ कोई मनुष्य इस महीने की दोनों पक्ष की एकादशी को

'आशाव्रत' का होना मानते हैं। श्रावण शुक्लपक्ष की द्वादशी को भगवान् हरि का 'पवित्रारोपण' करना कहा है, अतः द्वादशी को भगवान् हरि का 'श्रीधर' नाम से अर्चन उत्तम गति प्राप्त कराता है ॥२७॥ श्रावण शुक्ल पूर्णिमा को 'उत्सर्जन उपाकर्म, सभादीप, उपाकर्म की सभा में रक्षाबन्धन, श्रावणीकर्म, सर्पबलि तथा हयग्रीव नामक भगवान् विष्णु का कथन ॥ २६ ॥ पवित्रारोपणं शुक्लद्वादश्यां तु हरेः स्मृतम् ॥ द्वादश्यां श्रीधरं पूज्यं परां गतिमवाप्नुयात् ॥ २७ ॥ उत्सर्जनमुपाकर्म, सभादीपस्तथैव च ॥ उपाकर्मसभायां तु रक्षा-बन्धस्तथापरः ॥ २८ ॥ श्रावणीकर्म तत्रैव तथा सर्पबलि, स्मृतः ॥ हयग्रीवस्यावतारः पूर्णिमायां तु सप्तकम् ॥ २९ ॥ नभःकृष्णे तु सङ्कष्टचतुर्थीव्रतमुच्यते ॥ ज्ञेया मानवकल्पादिः श्रावणे कृष्णपञ्चमी ॥ ३० ॥ पूर्णावतारः कृष्णस्य कृष्णाष्टम्यां द्विजोत्तम ॥ अवतारः समभवद्व्रतं तस्य महोत्सवः ॥ ३१ ॥ अमायां श्रावणे मासि पिठोराव्रतमुच्यते ॥ कुशानां ग्रहणं चैव वृषभाणां च पूजनम् ॥ ३२ ॥ शुक्लाद्यातिथिमारभ्य तत्तत्तिथिषु देवता ॥ वह्निर्देवः प्रतिपदि अवतार कहा है। ये सात काम श्रावण शुक्ल पूर्णिमा को होते हैं ॥ २८-२९ ॥ श्रावण मास की कृष्ण चतुर्थी को 'सङ्कष्ट चतुर्थी व्रत' तथा श्रावण कृष्ण पञ्चमी को 'मानवकल्पादि' होता है ॥ ३० ॥ हे द्विजोत्तम श्रावण कृष्णपक्ष अष्टमी को भगवान श्रीकृष्ण का श्रीकृष्ण नाम से पूर्ण अवतार हुआ है। उस दिन व्रत तथा महोत्सव करे ॥ ३१ ॥ श्रावण मास के

अमावास्या तिथि में 'पिठोरावत' होता है। कुशोत्पाटन कहे हैं। और वृषभों का अर्चन करे ॥ ३२ ॥ शुक्ल पक्ष की प्रथम तिथि से प्रारम्भ कर सब समस्त तिथियों के अलग २ देवता होते हैं। प्रतिपदा तिथि के अग्नि, द्वितीया के ब्रह्मा, ॥ ३३ ॥ तृतीया के गौरी, चतुर्थी के गणनायक, पञ्चमी के सर्प, षष्ठी के स्कन्द, सप्तमी के सूर्य, अष्टमी तिथि के शिव

द्वितीया ब्रह्मदेवता ॥ ३३ ॥ तृतीयायास्तथा गौरी चतुर्थ्यां गणनायकः ॥ सर्पाधिपा पञ्चमी स्यात्षष्ठी स्यात्स्कन्ददेवता ॥ सप्तम्यां भास्करो देवः शिवदेवाष्टमी तिथि : ॥ ३४ ॥ दुर्गाधिपा तु नवमी दशम्यन्तकदेवता ॥ एकादश्यधिपाश्चैव विश्वेदेवाः प्रकीर्तिता ॥ ३५ ॥ द्वादश्याश्च हरिः कामस्त्रयोदश्यधिपो मतः। चतुर्दश्यां शिवश्चैव पौर्णमास्याः शशी पतिः ॥ ३६ ॥ अमायाः पितरो देवा एते तिथ्यधिपाः स्मृताः ॥ स देवस्तत्र पूज्यो तस्य देवस्य या तिथिः ॥ ३७ ॥ अगस्त्यस्योदयो मासे प्रायेणात्रैव जायते ॥ कथयामि च तं कालं शृणुष्वैकमना मुने ॥ ३८ ॥

हैं ॥ ३४ ॥ नवमी तिथि की दुर्गा, दशमी के यम और एकादशी के विश्वेदेव स्वामी हैं ॥ ३५ ॥ द्वादशी के भगवान् हरि, त्रयोदशी के कामदेव, चतुर्दशी के शिव, पूर्णिमा के चन्द्रमा स्वामी हैं ॥ ३६ ॥ अमावास्या के पितर स्वामी हैं। इस क्रमसे ये देवता तिथियों के स्वामी कहे गये हैं। जिस देव की जो तिथि है, उस तिथि में वह देवता अर्चन योग्य कहा है ॥ ३७ ॥ हे मुने, इसी मास में प्रायः अगस्त्य (नक्षत्र) का उदय होता है। मैं उस समय को कहता हूँ। एकाग्र

मनसे आप सुनें ॥ ३८ ॥ सिंह राशिपर सूर्य के संक्रमण दिन से बारह अंश चालीस घटी बीत जाने पर अगस्त्य ऋषि का उदय होता है ॥ ३९ ।- अगस्त्य ऋषि के लिये सात दिन पूर्व ही से अर्घ्य दे। बारह मास में सूर्य नारायण अलग २ नाम से तपते रहते हैं ॥ ४० ॥ श्रावण मास में 'गभस्ति' नाम से तपते हैं, उनका पूजन भी इस महीने भक्ति

सिंहसंक्रांतिदिवसाद्यदा द्वादश यान्ति वै ॥ चत्वारिंशच्च घटिकास्तदाऽगस्त्योदयो भवेत् ॥ ३९ ॥
सप्ताहानि ततः पूर्वे अगस्त्यार्घ्यं समाचरेत् ॥ द्वादशेष्वपि मासेषु आदित्यो भिन्नसंज्ञया ॥ ४० ॥
तपते श्रावणे तत्र गभस्तिरिति संज्ञितः ॥ तत्पूजनं च कर्तव्यं मासेऽस्मिन्भक्तितत्परैः ॥ ४१ ॥
चतुर्षु यानि मासेषु व्रतानि विहितानि च ॥ श्रावणे च त्यजेच्छाकं दधि भाद्रपदे तथा ॥ ४२ ॥
दुग्धमाश्वयुजे मासि कार्तिके द्विदलं त्यजेत् ॥ इत्यादीनि समस्तानि तानि कर्तुमशक्नुवन् ॥ ४३ ॥
एकस्मिन् श्रावणे मासि कुर्वंस्तत्फलभाग्भवेत् ॥ उद्देशोऽयं मया प्रोक्तः संक्षेपात्तवमानद ॥ ४४ ॥
अत्रत्यानां व्रतानां तु धर्माणां मुनिसत्तम ॥ केनापि विस्तरो वक्तुं नालं वर्षशतैरपि ॥ ४५ ॥

द्वारा तत्पर हो करे ॥ ४१ ॥ श्रावण से चार महीनों में जिन व्रतों का विधान कहा है उसको कहते हैं। श्रावण में साग का त्याग, भाद्रपद में दही, आश्विन में दूध और कार्तिक मास में दाल का त्याग करे। इत्यादि सम्पूर्ण विधान करने में यदि सामर्थ्य नहीं है, तो श्रावण मास में [illegible]

यह आप से मैंने अति संक्षेप से उपदेश किया ॥४२-४४॥ हे मुनिश्रेष्ठ, इस मास में होने वाले व्रत और धर्मों का सविस्तार रूप से वर्णन कोई सौ वर्ष में भी नहीं कर सकता ॥४५॥ मेरे प्रीत्यर्थ या भगवान् हरिके प्रीत्यर्थ सम्पूर्ण व्रत

मम प्रीत्यै हरेर्वापिकुर्याद्व्रतमशेषतः ॥ आवयोर्नहि भेदोऽस्ति परमार्थविचारतः ॥४६॥ कल्पयन्त्यत्र ये भेदं ते वै निरयगामिनः ॥ सनत्कुमार तस्मात्त्वं श्रावणे धर्ममाचर ॥४७॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमास माहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासव्रतोद्देशकथनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

सनत्कुमार उवाच ॥ भगवन्व्रतसङ्घस्य उद्देशः कथितस्त्वया ॥ तृप्तिर्न जायते स्वामिन्विस्तराद्वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ यच्छ्रुत्वा कृतकृत्योऽहं भविष्यामि सुरेश्वर ॥ ईश्वर उवाच ॥ नक्तव्रतेन योगीश श्रावणं यो नयेत्सुधीः ॥ २ ॥ द्वादशेष्वपि मासेषु स नक्तफलभाग्भवेत् ॥

करे। परमार्थरूप से विचार करने पर मेरे तथा हरि में कुछ भी भेद नहीं है ॥४६॥ जो प्राणी इसमें भेद की कल्पना करते हैं, वे नरक गामी होते हैं। हे सनत्कुमार, आप श्रावणमासमें धर्म सेवन करो ॥४७॥

सनत्कुमारजी ने कहा—हे भगवन्, आपने व्रत समुदाय का उद्देश्य कहा। हे स्वामिन्, इससे तृप्ति नहीं हुई। अतः आप सविस्तार कहें ॥१॥ हे सुरेश्वर, जिसे सुन मैं कृतकृत्य हो जाऊँ। ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे योगीश, जो विद्वान् श्रावणमास 'नक्तव्रत' कर बिताता है ॥२॥ वह बारह महीनों में नक्तव्रत करने का फल भोगता है। दिन

की समाप्ति के तीन घटी पहले भोजन को 'नक्तव्रत' कहा जाता है ॥३॥ उस नक्तभोजन में—सूर्यास्त के पहले तीन घटी समय का त्याग कर अवशिष्ट समय लिया है। सूर्यास्त के तीन घटी तक 'सन्ध्याकाल' कहा है ॥४॥ आहार, मैथुन, निद्रा तथा चौथा स्वाध्याय इन कार्यों को सायंकाल न करे ॥५॥ गृहस्थ एवं संन्यासी के भेद से नक्त भोजन

दिनावसानपूर्वं तु नक्तं स्याद्रात्रिभोजनम् ॥ ३ ॥ तत्राद्य त्रिघटिं त्यक्त्वा कालः स्यान्नक्तभोजने ॥ ततः सन्ध्या त्रिघटिका अस्तादुपरि भास्वतः ॥ ४ ॥ चत्वारीमानि कर्माणि सन्ध्यायां परिवर्जयेत ॥ आहारं, मैथुनं, निद्रा, स्वाध्यायं, च चतुर्थकम् ॥ ५ ॥ गृहस्थयतिभेदेन द्व्यवस्थां चैव मे शृणु ॥ आत्मनो द्विगुणीच्छाया मन्दीभवति भास्करे ॥ ६ ॥ यतेर्नक्तं तु तत्प्रोक्तं न नक्तं निशि भोजनम् ॥ नक्षत्रदर्शनान्नक्तं गृहस्थस्य बुधैः स्मृतम् ॥ ७ ॥ यतेर्दिनाष्टमे भागे रात्रौ तस्य निषिध्यते ॥ नक्तं निशायां कुर्वीत गृहस्थो विधिसंयुतः ॥ ८ ॥ यतिश्च विधवा चैव विधुरश्च

की दो प्रकार की अवस्था मुझसे सुनो। जब सूर्यनारायण के मन्द होने पर अपने देह की छाया द्विगुणित हो ॥६॥ उस समय संन्यासी के लिए नक्तभोजन व्रत कहा है। रात्रिमें भोजनको नक्तभोजन नहीं कहा गया है। पण्डितों ने गृहस्थ के लिये नक्षत्र के उदय होने पर रात्रिभोजन को 'नक्तभोजन व्रत' कहा है ॥७॥ संन्यासियों के लिये—रात्रि काल में भोजन निषिद्ध होने से दिन के अष्टम भाग में भोजन का विधान है। गृहस्थी विधि द्वारा रात्रि में नक्तव्रत

करे ॥ ८ ॥ संन्यासी, विधवा, तथा विधुर पुरुष सूर्यनारायण के अस्त होने के पहले भोजन करें जो पुत्रवान् है वह आश्रमहीन तथा स्त्री विहीन पुत्रवान् विधुर यदि है तो वह रात्रि में भोजन करे ॥ ९ ॥ क्योंकि जो पुत्रवान् हैं वह भी आश्रमी होता है। यों विद्वान् स्वाधिकारानुसार नक्तव्रत करे ॥ १० ॥ श्रावणमास में नक्तव्रत को करनेवाला

ससूर्यकम् ॥ विधुरश्चेत्पुत्रवान् स्यात्स तु रात्रौ समाचरेत् ॥ ९ ॥ अनाश्रमोऽप्याश्रमी स्याद-पत्नीकोऽपि पुत्रवान् ॥ एवं यथाधिकारं तु कुर्यान्नक्तव्रतं सुधीः ॥ १० ॥ अत्र नक्तव्रती मासे परां गतिमवाप्नुयात् ॥ तिथौ प्रतिपदि प्रातः श्रावणे समुपस्थिते ॥ ११ ॥ सङ्कल्पयेन्मासमेकं श्रावणे प्रत्यहं त्वहम् ॥ प्रातःस्नानं करिष्यामि ब्रह्मचर्यव्रते स्थितः ॥ १२ ॥ भोक्ष्यामि नक्तं भूशय्यां करिष्ये प्राणिनां दयाम् ॥ प्रारब्धेऽस्मिन्व्रते देव यद्यपूर्णे म्रिये ह्यहम् ॥ १३ ॥ तदा सम्पूर्णतां यातु प्रसादात्ते जगत्पते ॥ इति सङ्कल्प्य मेधावी मासे नक्तव्रतं चरेत् ॥ १४ ॥ एवं

प्राणी उत्तम गति प्राप्त करता है। पहले श्रावणमास के आ जानेपर प्रतिपदा तिथि में प्रातःकाल सङ्कल्प करे; मैं श्रावण में एक महीने तक ब्रह्मचर्य में रह प्रतिदिन सुबह स्नान करूँगा ॥११-१२॥ नक्तव्रत, रात्रि शयन तथा प्राणियों पर दया करूँगा ॥ हे देव, यदि इस व्रतारम्भ होनेपर समाप्ति (व्रतपूर्ति) के पूर्व ही मैं मर गया तो ॥ १३ ॥ हे जगत्पते ! उस समय आपके प्रसाद से व्रत परिपूर्ण हो। यों बुद्धिमान मासारम्भ में सङ्कल्प कर नक्तव्रत करे ॥ १४ ॥ नक्तव्रत करता हुआ

जीव मेरा अतिप्रिय हो जाता है। अतिरुद्र से या महारुद्र से ब्राह्मण द्वारा या स्वयं रुद्र से एक महीने तक जो अभिषेक कराता है। हे वत्स, उसपर मैं प्रसन्न होता हूँ। क्योंकि मुझे जलधारा प्रिय है ॥ १६ ॥ या रुद्र से हवन करे क्योंकि वह मुझे प्रीतिवाला है। तथा जो अपने को अधिक रुचिकर भोजन या उपभोग्य चीज हो ॥ १७ ॥ उसे संकल्प कर

नक्तव्रतं कुर्वन्मम प्रियतमो भवेत् ॥ विप्रद्वाराऽतिरुद्रेण महारुद्रेण वा स्वयम् ॥ १५ ॥ अभिषेकं मासमात्रं रुद्रेण प्रत्यहं चरेत् ॥ तस्य प्रीणाम्यहं वत्स जलधाराप्रियो यतः ॥ १६ ॥ कुर्याद्रुद्रेण वा होमं मम प्रीतिकरं परम् ॥ स्वस्य यद्रोचतेऽत्यतं भोज्यं वा भोग्यमेव वा ॥ १७ ॥ सङ्कल्प्य द्विजवर्याय दत्त्वा मासे स्वयं त्यजेत् ॥ अतः परं शृणु मुने लक्षपूजाविधिं परम् ॥ १८ ॥ श्रीकामो बिल्वपत्रैश्च दूर्वाभिः शान्तिकामुकः ॥ आयुःकामेन कर्तव्यं चम्पकैः पूजनं हरेः ॥ १९ ॥ विद्याकामेन कर्तव्यं मल्लिकाजातिभिस्तथा ॥ शिवविष्णवोः प्रसन्नत्वं तुलसीभिः प्रसिध्यति ॥ २० ॥

ब्राह्मण को देकर इस महीने में त्यागे। हे मुने, अब उत्तम लक्षपूजा विधि सुनो ॥ १८ ॥ लक्ष्मी की इच्छा वाला मनुष्य बिल्वपत्रों से, शान्ति की कामना वाला दूर्वाओं से तथा आयुष की इच्छा वाला चम्पा के पुष्पों से भगवान् हरि का अर्चन करे ॥ १९ ॥ विद्या की इच्छा वाला 'मल्लिका' तथा चमेली पुष्पों से अर्चन करे। तुलसीदलों से शिव और भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं ॥

के लिए उत्तम धान्य से अर्चन करे ॥२१॥ देव के संमुख रङ्गवल्ली, पद्म, स्वस्तिक और चक्र आदि बनाकर विभु का अर्चन करे ॥२२॥ यों संपूर्ण कामनाओं की सिद्धि के लिये सब पुष्पों से अर्चन करे। यदि लक्षपूजा करता है तो शङ्कर प्रसन्न हो जाते हैं ॥२३॥ अन्त में उद्यापन करे मण्डप बनाकर मण्डप के तीसरे भाग में वेदी बनाये

पुत्रकामेन कर्तव्यं बार्हतैः पूजनं शुभम् ॥ दुःस्वप्नप्रशमार्थाय शस्तधान्यैः प्रपूजयेत् ॥ २१ ॥
रंगवल्ल्यादिभिर्देव देवस्याग्रे विनिर्गितैः ॥ पद्मादिभिः स्वस्तिकाद्यैश्चक्राद्यैः पूजयेद्विभुम् ॥ २२ ॥
एवं हि सर्वपुष्पैश्च सर्वकामार्थसिद्धये ॥ लक्षपूजां प्रकुर्याच्चेत्सुप्रसन्नो हरो भवेत् ॥ २३ ॥
उद्यापनं ततः कार्यं मण्डपं चैव साधयेत् ॥ वेदिका च प्रकर्त्तव्या मण्डपस्य त्रिभागतः ॥
पुण्याहवाचनं कृत्वा आचार्यं वरयेत्ततः ॥ २४ ॥ गीतवादित्रनिर्घोषैर्ब्रह्मघोषेण भूयसा ॥
प्रविश्य मण्डपे तस्मिन् रात्रौ जागरणां चरेत् ॥ २५ ॥ वेदिकायां प्रकर्तव्यं लिंगतोभद्रमुत्तमम् ॥
तन्मध्ये तण्डुलैः कुर्यात्कैलासं च सुशोभनम् ॥ २६ ॥ कलशं स्थापयेत्तत्र ताम्रं चैव महाप्रभम् ॥

पुण्याहवाचन कर आचार्य वरण करे ॥२४॥ मण्डप में प्रवेश कर रात में गान-बाजा शब्द से और वेद पाठ से जागरण करे ॥२५॥ वेदी पर उत्तम 'चतुर्लिंगतोभद्र' बनाकर उसके मध्य भाग में चावल से सुन्दर कैलास बनावे ॥२६॥ उस वेदी पर खूब चमकीला ताँबे का कलश स्थापन कर उसमें पञ्चपल्लव तथा सूक्ष्म वस्त्र को

रखे ॥२७॥ उस पर पार्वती पति की सुवर्ण प्रतिमा को पञ्चामृत स्नान पूर्वक स्थापित कर अर्चन करे ॥२८॥ नैवेद्य युक्त धूप, दीप, गीत, वाद्य, नृत्य, तथा वेद, शास्त्र, पुराण द्वारा रात में जागे ॥२९॥ सुबह स्नान करे पवित्र शाखोक्त विधान से वेदी बनाये ॥३०॥ तिल, घृत, पायस, से मूलमन्त्र, गायत्री, शिवसहस्रनाम से हवन करे ॥३१॥

पञ्चपल्लवसंयुक्तं न्यसेद्वस्त्रं सुसूक्ष्मकम् ॥ २७ ॥ सौवर्णीं प्रतिमां तत्र स्थापयेत्पार्वतीपतेः पूजां तत्र प्रकुर्वीत पञ्चामृतपुरस्सरैः ॥ २८ ॥ धूपैर्दीपैः सनैवेद्यैर्गीतवादित्रनृत्यकैः ॥ वेदशास्त्रपुराणैश्च रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ २९ ॥ ततः प्रभातसमये सुस्नातः सुशुचिर्भवेत् ॥ स्थण्डिलं कारयेत्तत्र स्वशाखोक्तविधानतः ॥ ३० ॥ होमं च सतिलाज्येन पायसेन च कारयेत् ॥ मूलमन्त्रेण गायत्र्या शिवनाम्नां सहस्रकैः ॥ ३१ ॥ येन मन्त्रेण पूजा तु कृता तेनैव होमयेत् ॥ शर्कराघृतमिश्रेण चरुणा जुहुयात्ततः ॥ ३२ ॥ ततः स्विष्टकृतं हुत्वा पूर्णाहुतिमनन्तरम् ॥ आचार्यं पूजयेत्सम्यग्वस्त्रालङ्कारभूषणैः ॥ ३३ ॥ ब्राह्मणान्पूजयेत्पश्चात्तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ॥

जिस मन्त्र से पूजन किया उसी मन्त्र से हवन करे। शर्करा-घृत-युक्त चरु से हवन करे ॥३२॥ फिर स्विष्टकृत् हवन कर पूर्णाहुति करे। प्रातः वस्त्र, अलङ्कार, भूषण से आचार्य का अर्चन करे ॥३३॥ ब्राह्मणों का पूजन कर दक्षिणा दे।

का अर्चन करे। यदि एक महिने तक दीप जलाया हो तो उसे दान में दे ॥३५॥ संपूर्ण इच्छाओं की सिद्धि के लिए सोने की बत्ती चाँदी का दीवा बनाकर गोघृत से संयुक्त कर दान दे ॥३६॥ देवता से क्षमा प्रार्थना कर सौ ब्राह्मण भोजन करावे। हे मुने, यों जो मेरा अर्चन करता है मैं उस पर प्रसन्न हो जाता हूँ ॥३७॥ यदि श्रावण मास में

येन येन प्रकुर्याच्च लक्षपूजामुमापतेः ॥ ३४ ॥ तत्तद्दद्यात्सुवर्णेन कृत्वा शम्भुं प्रपूजयेत ॥ यदि दीपः कृतस्तेन तद्दानं चैव कारयेत् ॥ ३५ ॥ सुवर्णवर्त्तिकां कृत्वा दीपमात्रं च रौप्यकम् ॥ गोघृतेन समायुक्तं सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ३६ ॥ क्षमापयेत्ततो देवं ब्राह्मणान्भोजयेच्छतम् ॥ एवं यः कुरुते पूजां तस्य प्रीणाम्यहं मुने ॥ ३७ ॥ तत्रापि श्रावणे कुर्यात्तदानन्त्याय कल्पते ॥ स्वप्रीतिविषयः कश्चित्पदार्थस्त्यज्यते यदि ॥ ३८ ॥ मदर्पणधिया चात्र मासि तस्य फलं शृणु ॥ इहामुत्र च तत्प्राप्तिर्भवेल्लक्षगुणाधिका ॥ ३९ ॥ सकामत्वे तु चैवं स्यान्निष्कामत्वे परा गतिः ॥ रुद्राभिषेकं कुर्वाणस्तत्रत्याक्षरसङ्ख्यया ॥ ४० ॥ प्रत्यक्षरं कोटिवर्ष रुद्रलोके

ये कार्य किये जाँय तो अनन्त फल देनेवाले हैं। यदि इस महीने में अपनी किसी प्रिय वस्तु का त्याग ॥३८॥ मुझे अर्पण बुद्धि द्वारा करता है तो उसका फल सुनो। इस लोक और परलोक में वह वस्तु लाखगुणा अधिक मिलती है ॥३९॥ फल की इच्छा से त्याग करने पर वह फल होता है। निष्काम करने पर उत्तम गति प्राप्त होती है।

जो अक्षर संख्या से रुद्रीपाठ करता हो वह ॥४०॥ प्रति अक्षर करोड़ साल तक रुद्रलोक में जाकर अर्चित होता है। पञ्चामृत के अभिषेक से मोक्ष प्राप्त करता है ॥४१॥ उस श्रावण मास में भूमि पर सोने वाले को क्या फल है उसे सुनो, मूँगा अथवा हाथी के दाँत की बनी हुई या हे द्विजश्रेष्ठ ! चन्दन की बनी हुई तथा नवरत्न जड़ाऊ की हुई

महीयते ॥ पञ्चामृतस्याभिषेकादमृतत्वं समश्नुते ॥ ४१ ॥ तस्मिन्मासे भूमिशायी फलं तस्यापि मे शृणु ॥ प्रवालनिर्मितां श्रेष्ठां गजदन्तभवामपि ॥ ४२ ॥ पाटीरनिर्मितां चापि खचितां नवरत्नकैः ॥ निःसीममृदुपक्षीन्द्रविशेषांद्विजसत्तम ॥ ४३ ॥ वरवस्त्रेण सञ्छन्नां तूलिकां चात्र शोभनाम् ॥ दशोपबर्हणैर्युक्तांशय्यां स लभते शुभाम् ॥ ४४ ॥ रम्याङ्गनासमायुक्तां रत्नदीपविभूषिताम् ॥ ब्रह्मचर्येण चाप्यत्र वीर्यपुष्टिर्भवेद्दृढा ॥ ४५ ॥ ओजो बलं देहदार्ढ्यं यद्धर्मस्योपकारकम् ॥ प्रत्यक्षं वै भवेत्तस्य ब्रह्मप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४६ ॥ निष्कामस्य सकामस्य स्वर्गं देवाङ्गना शुभा ॥ अत्र

अत्यन्त मृदु गरुड़ चिह्न संपन्न ॥४२-४३॥ उत्तम कपड़े की रुई से भरी गद्दे युक्त रमणीक झालरदार तकियों से संपन्न शय्या प्राप्त करता है ॥४४॥ वह शय्या सुन्दर स्त्री से और रत्नों के दीपक से विभूषित मिलती है। इस मास में जो ब्रह्मचर्य से रहता है उसके वीर्यकी अधिक पुष्टि होती है ॥४५॥ तेजस्विता, बल, शरीर-दृढ़ता और जो धर्म कार्य में उपकारक है उसे प्राप्त कर [illegible]

सकामी प्राणी को सुन्दर अप्सरा मिलती है। इस महीने में जो मौनव्रत ग्रहण करता है वह श्रेष्ठ वक्ता हो जाता है ॥४७॥ वह मौनव्रत दिन रात या दिन में का हो या भोजन के समय का हो। मौनव्रत में घण्टा तथा पुस्तक दान करे ॥४८॥ तो सब शास्त्रों की जानकारी कर लेता है। वेद और वेदाङ्ग का पारगामी हो जाता है। बुद्धि में बृहस्पतिके

मौनव्रतधरो महान्वक्ता प्रजायते ॥ ४७ ॥ अहोरात्र्रदिने वापि भुक्तिकालेऽथवा पुनः ॥ घण्टायाः पुस्तकस्यापि व्रतान्ते दानमाचरेत् ॥ ४८ ॥ सर्वशास्त्रप्रवीणः स्याद्वेदवेदाङ्गपारगः ॥ वाचस्पतिसमोबुद्धौ मौनमाहात्म्यतो भवेत् ॥ ४९ ॥ मौनिनः कलहो नास्ति तस्मान्मौनव्रतं परम् ॥ ५० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे नक्तव्रतलक्षपूजाभूमिशयनमौनादिव्रतकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

ईश्वर उवाच ॥ सनत्कुमार वक्ष्यामि धारणापारणाव्रतम् ॥ पुण्याहं वाचयेत्पूर्वमारभ्य

तुल्य मौनव्रत माहात्म्य से हो जाता है ॥४९॥ मौनव्रत करने वाले जीव का किसी के साथ कलह नहीं होता इसलिये मौनव्रत उत्तम है ॥५०॥

! ईश्वरने सनत्कुमारजी से कहा—सनत्कुमार, धारण पारण व्रत को मैं कहूँगा, उसे आप सुनो। पहली प्रतिपत्

तिथि में पुण्याहवाचन करा ॥१॥ मेरे प्रसन्नार्थ धारण-पारण व्रत का संकल्प करे। एक दिन धारण दूसरे दिन पारण करे ॥२॥ धारण में उपवास तथा पारणमें भोजन विहित है। व्रत करने वाला प्राणी मास की समाप्ति में उद्यापन करे ॥३॥ प्रथम श्रावण मास की समाप्ति में कीर्तन पुण्याहवाचन करा। हे मानद, आचार्य और अन्य ब्राह्मणों का

प्रतिपद्दिनम् ॥ १ ॥ सङ्कल्पयेन्मम प्रीत्यै धारणापारणाव्रतम् ॥ एकस्मिन्धारणं कुर्यात्पारणं च तथापरे ॥ २ ॥ उपवासो धारणे स्यात्पारणे भोजनं भवेत् ॥ समाप्ते मासि चैवात्र कुर्यादुद्यापनं व्रती ॥ ३ ॥ समाप्ते श्रावणे मासि पुण्याहं कारयेत्पुरा ॥ आचार्यं वरयेत्पश्चाद्ब्राह्मणांश्चैव मानद ॥ ४ ॥ पार्वतीशङ्करस्यापि प्रतिमां स्वर्णनिर्मिताम् ॥ पूर्णकुम्भे तु संस्थाप्य पूजयेन्निशि भक्तितः ॥ ५ ॥ रात्रौ जागरणं कुर्यात्पुराणश्रवणादिभिः ॥ प्रातरग्निं समाधाय होमं कुर्याद्यथा-विधि ॥ ६ ॥ त्र्यम्बकेणैव मन्त्रेण जुहुयाच्च तिलौदनम् ॥ तथैव शिवगायत्र्या जुहुयाच्च घृतौ-दनम् ॥ ७ ॥ षडक्षरेण मन्त्रेण पायसं जुहुयात्ततः ॥ पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा होमशेषं समापयेत्

वरण करे ॥४॥ पार्वती शङ्कर की सोने की प्रतिमा को घट के ऊपर स्थापित कर रात में भक्ति द्वारा अर्चन करे ॥५॥ रात में पुराण का श्रवण कीर्तन आदि द्वारा जागे। सुबह अग्नि रख कर हवन करे ॥६॥ 'त्र्यम्बकं यजामहे—' इस मन्त्र से तिल और चावल की आहुति दे। 'वामदेवाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥' इससे घृत

तथा चावल की आहुति दे ॥ ७ ॥ षडाक्षर ॐ नमः शिवाय मन्त्र से खीर की आहुति दे । फिर पूर्णाहुति होम कर शेष कार्य समाप्त करे ॥८॥ ब्राह्मणों को भोजन करा आचार्य का अर्चन करे । हे महाभाग, इस तरह व्रत को करने मात्र से ब्रह्महत्या आदि पातकों से मुक्त हो जाता है इसमें सन्देह नहीं । अतः श्रेष्ठ श्रावणमास व्रत करे । हे मुने, आदरपूर्वक

॥ ८ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादाचार्यं चैव पूजयेत् । एवं कृत्वा महाभाग ब्रह्महत्यादिपातकैः ॥ ९ ॥ मुच्यते नात्र सन्देहस्तस्मात्कुर्यान्महाव्रतम् ॥ शृणु मासोपवासस्य श्रावणे विधिमादरात् ॥ १० ॥ सङ्कल्पयेत्तु प्रतिपद्दिने प्रातर्व्रतं मुने ॥ नारी वा पुरुषो वापि संयतात्मा जितेन्द्रियः ॥ ११ ॥ ततोऽर्चयेदमायां तु शङ्करं लोकशङ्करम् ॥ सम्पूजयेत्षोडशभिरुपचारैर्वृषध्वजम् ॥ १२ ॥ ब्राह्मणान्पूजयेच्चैव वस्त्रालङ्करणादिभिः ॥ भोजयेच्च यथाशक्त्या प्रणिपत्य विसर्जयेत् ॥ १३ ॥ एवं मासोपवासस्तु मम प्रीतिकरो भवेत् ॥ रुद्रवर्तिविधानं च सम्मितं लक्षसङ्ख्यया ॥ १४ ॥

श्रावण मास में उपवास की विधि सुनें ॥ ९–१० ॥ हे मुने, स्त्री या पुरुष व्रत के लिए संयतात्मा एवं जितेन्द्रिय होकर प्रतिपदा तिथि को सुबह व्रत संकल्प करे ॥ ११ ॥ अमावास्या के रोज लोक शंकर वृषध्वज भगवान् शंकर का सोलह उपचार से अर्चन करे ॥ १२ ॥ ब्राह्मणों का वस्त्र अलंकार आदि द्वारा पूजन करे । यथाशक्ति भोजन कराकर प्रणाम कर विसर्जन करे ॥ १३ ॥ इस तरह मास उपवास का व्रत मुझे प्रीतिदायक है । एक लाख संख्या वाली रुद्रवर्ती विधि

करे ॥ १४ ॥ हे मुने, सावधान होकर सुनो प्राणियों की संपूर्ण सिद्धि को देनेवाला है। सादर रुई द्वारा निर्मित ग्यारह-ग्यारह वत्ती बनावे ॥ १५ ॥ मुझे प्रीतिवाली वे बत्तियाँ 'रुद्रवर्ति' नाम से कही जाती हैं। श्रावण मास के प्रथम रोज से विधि संकल्प करे ॥ १६ ॥ श्रावण मास में देवों के देव महादेव हैं भक्ति से उस गौरीश की एक लाख वत्ती

शृणुष्वावहितो भूत्वा सर्वसिद्धिकरं नृणाम् ॥ कार्पासतन्तुभिः कार्या एकादशभिरादरत् ॥ १५ ॥ वर्तयस्ता रुद्रवर्ति संज्ञाः प्रीतिकरा मम ॥ श्रावणस्याद्यदिवसे सङ्कल्प्य विधिपूर्वकम् ॥ १६ ॥ देवदेवं महादेवं लक्षवर्तिभिरादरात् ॥ नीराजयामि गौरीशं श्रावणे मासि भक्तितः ॥ १७ ॥ पूजयित्वा प्रतिदिनं वर्तीनां तु सहस्रतः ॥ नीराजयेदन्त्यदिने सहस्राण्येकसप्ततिः ॥ १८ ॥ अथवा प्रत्यहं दद्यात्सहस्रत्रयमादृतः ॥ चरमे तु दिने दद्यात्सहस्राणि त्रयोदश ॥ १९ ॥ एकस्मिन्वा दिने रुद्रवर्तिलक्षं प्रदीपयेत् ॥ सुघृतेनापि बहुना स्निग्धास्ता मम वल्लभाः ॥ २० ॥

से आरती करूँगा ॥ १७ ॥ यों संकल्प कर रोज एक हजार बत्ती द्वारा अर्चन करे। समाप्ति पर एकहत्तर हजार वत्ती से आरती करे ॥ १८ ॥ या रोज-रोज तीन सहस्र वत्ती द्वारा आरती करे। अन्तिम दिन तेरह सहस्र वत्ती द्वारा आरती करे ॥ १९ ॥ या एक ही रोज एक लाख रुद्रवर्ति को प्रज्वलित करे। मुझे प्रिय उन बत्तियों को शुद्ध अधिक घृत से सेवन करे ॥ २० ॥ संसार के स्वामी महादेव का अर्चन कर कथा सुने।

सेवन करे ॥ २० ॥ संसार के स्वामी महादेव का अर्चन कर कथा सुने । सनत्कुमार ने भगवान् शंकर से कहा—हे देवदेव, हे जगन्नाथ, हे जगतके आनन्दकारक ॥ २१ ॥ हे प्रभो, मुझ पर दया कर इस व्रतके प्रभाव तथा किसने इस व्रत को किया। उद्यापन की विधि इस व्रत की क्या है यह मुझे कहें ॥ २२ ॥ भगवान् शंकर ने सनत्कुमार जी से कहा—हे ब्रह्म पुत्र, आप अवश्य इस व्रत को सुनें। यह व्रतों में श्रेष्ठ रुद्रवर्ती व्रत महान् पुण्यप्रद है तथा सम्पूर्ण

पूजयित्वा तु विश्वेशं शृणुयाच्च कथां ततः ॥ सनत्कुमार उवाच ॥ देवदेव जगन्नाथ जगदानन्दकारक ॥ २१ ॥ व्रतस्यास्य प्रभावं मे कृपां कृत्वा वद प्रभो ॥ केन चीर्णं व्रतमिदं विधिरुद्यापने कथम् ॥ २२ ॥ ईश्वर उवाच ॥ शृणु वैधात्र यत्नेन व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ रुद्रवर्त्या महापुण्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ २३ ॥ प्रीतिसौभाग्यजननं पुत्रपौत्रसमृद्धिदम् ॥ शङ्करप्रीतिजननं शिवलोकप्रदं परम् ॥ २४ ॥ रुद्रवर्तिसमं नास्ति त्रिषु लोकेषु सुव्रतम् ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ २५ ॥ क्षिप्रानद्यास्तटे रम्ये पुरा उज्जयिनी शुभा ॥ तस्यामासीत्सुगन्धाख्या वारस्त्री ह्यतिसुन्दरी ॥ २६ ॥ तया शुल्कं कृतं स्वीये सुरते तु सुदुःसहम् ॥

उपद्रव नाश करता है ॥ २३ ॥ प्रीति तथा सौभाग्य को देने वाला है। पुत्र, पौत्र एवं समृद्धि देनेवाला है। भगवान् शंकर को अत्यन्त प्रिय है। उत्तम शिवलोक देने वाला है ॥ २४ ॥ तीनों लोक में रुद्रवर्ती के तुल्य अन्य श्रेष्ठ व्रत नहीं है। इस सम्बन्ध में पुरातन कथा मनुष्य कहते हैं ॥२५॥ क्षिप्रा नदी के सुन्दर किनारे पर रमणीय उज्जयिनी नाम की

पुरी है। उस पुरी में सुगन्धा नामवाली बहुत सुन्दरी वेश्या थी ॥ २६ ॥ उस वेश्या ने संसार में अपने सूरत का अति दुःसह सौ मोहर मूल्य की प्रतिज्ञा की ॥ २७ ॥ उस सुगन्धा ने युवा पुरुष तथा ब्राह्मणों के धर्म भ्रष्ट किये, बारंबार बहुत से राजा तथा राजकुमारों को नग्न किया ॥ २८ ॥ उनके भूषणादि ग्रहण कर धिक्कार दे उस वेश्या

सुवर्णानां शतं लोके प्रतिज्ञां कृतवत्यथ ॥ २७ ॥ युवानश्च तथा विप्रा भ्रंशिताश्च सुगन्धया ॥ राजानो राजपुत्राश्च नग्नीकृत्य पुनः पुनः ॥ २८ ॥ तेषां भूषां गृहीत्वा तु धिक्कृतास्तु सुगन्धया ॥ एवं हि बहवो लोका लुण्ठितास्ते सुगन्धया ॥ २९ ॥ तस्यास्तु देहगन्धेन क्रोशमात्रं सुगन्धितम् ॥ रूपलावण्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा धरातले ॥ ३० ॥ षट्त्रिंशद्रागभार्याणां षड्रागाणां च गायने ॥ तत्सन्तत्यो ह्यनन्ताश्च कुशला गानकर्मणि ॥ ३१ ॥ नृत्ये रम्भादिकाः सर्वास्तर्जयन्ती सुरांगनाः ॥ गत्या गजांश्च हंसांश्च विहसन्ती पदेपदे ॥ ३२ ॥ कामबाणान्प्रेर-

सुगन्धा ने निकाल दिया। यों उस सुगन्धा ने बहुत प्राणियों को लूटा ॥ २९ ॥ उस वेश्या के शरीर की सुगन्ध एक कोशतक सुगन्धित हो रही थी। पृथ्वीपर रूप लावण्य तथा कान्ति की ख्याति थी ॥ ३० ॥ गायन के छः राग, छत्तीस रागिणी, उनकी सन्तति असंख्य कहीं हैं, लेकिन वह वेश्या गानकर्म में कुशल थी ॥ ३१ ॥ नाचकार्य में रम्भा आदि देवाङ्गनाओं का अपमान करती थी। पैर की चालसे पद पदपर हाथि तथा हंसों की [illegible] ॥ ३२ ॥

कौतुक वश किसी समय वह वेश्या श्रृंगार तथा कटाक्षों से कामबाण को त्यागती हुई क्षिप्रा नदी गई ॥ ३३ ॥ नदी

कौतुक वश किसी समय वह वेश्या भृकुटि तथा कटाक्षों से कामवाण को त्यागती हुई क्षिप्रा नदी गई ॥ ३३ ॥ वहाँ उसने सब ओर ऋषियों से युक्त सुघर 'क्षिप्रा नदी' को देखा। कुछ ब्राह्मण ध्यान में संलग्न, कुछ जप में लीन, कुछ शिवार्चन में और कुछ विष्णु अर्चन में संलग्न हैं। हे महामुने, उन सबों के मध्य ऋषि वसिष्ठ को उस वेश्या ने

यन्ती कटाक्षैर्भ्रूकृतैश्च तैः ॥ कदाचित्सा गता क्षिप्रां कौतुकाविष्टमानसा ॥ ३३ ॥ ददर्श सा मनोरम्यामृषिभिः परिसेविताम् ॥ केचिद्ध्यानपरा विप्राः केचिज्जपपरायणाः ॥ ३४ ॥ रताः शिवार्चने केचिद्विष्णोः केचित्प्रपूजने ॥ तेषां मध्ये वसिष्ठो हि तया दृष्टो महामुने ॥ ३५ ॥ तस्या धर्मे भवेद्बुद्धिस्तद्दर्शनमहत्त्वतः ॥ विगताशा जीवनेऽपि विषयेषु विशेषतः ॥ ३६ ॥ विनम्रकन्धरा भूत्वा प्रणिपत्य पुनः पुनः ॥ स्वकर्मपरिहाराय पप्रच्छ मुनिपुंगवम् ॥ ३७ ॥ सुगन्धोवाच ॥ अनाथनाथ विप्रेन्द्र सर्वविद्याविशारद ॥ मया कृतानि योगीश पापानि सुब-

देखा ॥३४-३५॥ उनके दर्शन मात्र के प्रभाव से उस वेश्या की धर्म में बुद्धि हो गई। जीवन तथा विषयों से विशेष मन हट गया ॥ ३६ ॥ वह वेश्या विवश हो मुनि श्रेष्ठ वसिष्ठ को बारंबार प्रणाम कर सब पापकर्मों के नाश का उपाय पूछा ॥ ३७ ॥ सुगन्धा ने कहा—हे अनाथ नाथ, हे विप्रेन्द्र, हे सर्व विद्या विशारद, हे योगीश मैंने बहुत पाप किये हैं। हे प्रभो, आप उन संपूर्ण पाप नाशक उपायों को कहें ॥ ३८ ॥ ईश्वर सनत्कुमारजी से बोले—दीनवत्सल वसिष्ठ मुनि ने

उस वेश्या की वाणी को श्रवण कर उसके कर्मों को जानकर आदर पूर्वक वेश्या से कहा ॥ ३६ ॥ हे भद्रे एकाग्र चित्त हो सुनो। तेरे पापों का नाश जिस पुण्य से हटेगा मैं वह सब कहता हूँ ॥ ४० ॥ हे भद्रे, त्रैलोक्य प्रसिद्ध वाराणसी में जाकर त्रैलोक्य में दुर्लभ इस व्रत को करो ॥ ४१ ॥ हे भद्रे, 'रुद्रवर्ती' व्रत महान् पुण्य देने वाला तथा

हून्यपि ॥ तत्सर्वपापनाशाय उपायं ब्रूहि मे प्रभो ॥ ३८ ॥ ईश्वर उवाच ॥ एवमुक्तस्तया विप्रो वसिष्ठो मुनिरादरात् ॥ तस्याः कर्म प्रविज्ञाय सोऽब्रवीद्दीनवत्सलः ॥ ३६ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ शृणुष्वावहिता भूत्वा तव पापस्य संक्षयः ॥ येन जायेत पुण्येन तत्सर्वं कथयामि ते ॥ ४० ॥ गच्छ वाराणसीं भद्रे त्रिषु लोकेषु विश्रुताम् ॥ गत्वा कुरुष्व तत्क्षेत्रे व्रतं त्रैलोक्यदुर्लभम् ॥ ४१ ॥ रुद्रवर्त्या महापुण्यं शिवप्रीतिकरं परम् ॥ कृत्वा व्रतमिदं भद्रे प्राप्स्यसि त्वं परां गतिम् ॥ ४२ ॥ ईश्वर उवाच ॥ ततः सा कोशमादय भृत्यं चैव सुमित्रकम् ॥ गत्वा काशीं व्रतं चक्रे वसिष्ठोक्त-विधानतः ॥ ४३ ॥ ततः सा सशरीरेण तस्मिंल्लिङ्गे लयं ययौ ॥ ४४ ॥ एवं या कुरुते नारी

शिव-प्रीति कर है। हे भद्रे, इस व्रत के करने मात्र से तेरी उत्तम गति होगी ॥ ४२ ॥ भगवान् शंकर ने सनत्कुमारजी से कहा— यों सारी विधि सुन वह वेश्या खजाना, नौकर तथा मित्र को साथ कर काशीपुरी गई। वहाँ पर वसिष्ठजी

॥ ४४ ॥ जो स्त्री इस दुर्लभ व्रत को करती है। वह जो जो वस्तु की इच्छा करती है। उसे निश्चित मिलती है ॥ ४५ ॥ हे सुव्रत, माणिक्यवर्तियों के माहात्म्य सुनो। हे विप्रेन्द्र, माणिक्यवर्तियों के व्रत करने मात्र से स्त्री मेरे अर्धासन की हिस्सेदार होती है ॥ ४६ ॥ वह स्त्री महाप्रलयान्त तक मेरी प्रिया होकर निवास करती है। व्रत पूर्ति के लिए इसकी व्रतो

व्रतमेत्सुदुर्लभम् ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोत्यसंशयः ॥ ४५ ॥ माहात्म्यं शृणु माणिक्यवर्तीनामपि सुव्रत। व्रतेन तासां विप्रेन्द्र मदर्धासनभागिनी ॥ ४६ ॥ जायते मत्प्रिया सा हि यावदाभूतसम्प्लवम् ॥ उद्यापनमथो वक्ष्ये व्रतसम्पूर्तिहेतवे ॥ ४७ ॥ कलशे स्थापयेद्देवमुमया सहितं शिवम् ॥ सुवर्णनिर्मितं देवं वृषभं रौप्यनिर्मितम् ॥ ४८ ॥ विधिना पूजनं कृत्वा रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ ततः प्रभाते विमले स्नात्वा नद्यां विधानतः ॥ ४९ ॥ आचार्यं वरयेद्भक्त्या द्विजैरेकादशैः सह ॥ होमश्चैव प्रकर्तव्यो घृतपायसबिल्वकैः ॥ ५० ॥ रुद्रसूक्तेन गायत्र्या मूलमन्त्रेण वा पुनः ॥ ततः पूर्णाहुतिं हुत्वा आचार्यादीन्प्रपूजयेत् ॥ ५१ ॥ तथैकादश सद्विप्रान्सपत्नीकांस्तु

द्यापनविधि भी कहूँगा ॥४७॥ पार्वती के सहित शंकर की प्रतिमा स्थापित करे। शिव प्रतिमा सोने तथा वृषभ प्रतिमा चाँदी की निर्मित हो ॥ ४८ ॥ विधिद्वारा अर्चन कर रात में जागे। प्रातः काल सविधि नदी में स्नान करे ॥ ४९ ॥ भक्ति द्वारा आचार्य का वरण करे तथा ग्यारह ब्राह्मणों के सहित घी, पायस एवं बिल्व होम करे ॥५०॥ रुद्रसूक्त, रुद्रगायत्री, या

मूलमन्त्रसे होम करे। पूर्णाहुति कर आचार्य आदि की पूजा कर ग्यारह सपत्नीक श्रेष्ठ ब्राह्मणों को भोजन कराये। इस तरह जो स्त्री व्रत करती है वह संपूर्ण पापों से रहित हो जाती है ॥५१-५२॥ विधि से कथा को सुन स्थापित सर्व सामग्री घट प्रतिमा आदि आचार्य को समर्पित करे। जो ऐसा करता है उसे एक हजार अश्वमेध यज्ञ का फल निश्चित मिल जाता है ॥५३॥

भोजयेत् ॥ एवं या कुरुते नारी सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ५२ ॥ कथां श्रुत्वा विधानेन स्थाप्यं सर्वं न्यवेदयेत् ॥ अश्वमेधसहस्रस्य फलं भवति निश्चितम् ॥ ५३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमास-माहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे धारणापारणामासोपवासरुद्रवर्तिकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

ईश्वर उवाच ॥ माहात्म्यं कोटिलिंगानां पुण्यं वक्तुं न शक्यते ॥ एकैकस्यापि लिंगस्य किं पुनः कोटिसङ्ख्यया ॥ १ ॥ अशक्तौ लक्षकं कुर्यात्सहस्रमथवा शतम् ॥ एकस्यापि हि लिङ्गस्य कारणान्मम सन्निधिः ॥ २ ॥ षडक्षरेण मन्त्रेण पूजा कार्या स्मरद्विषः ॥ उपचारैः

ईश्वर ने कहा—हे सनत्कुमार, कोटिलिंग का महात्म्य तथा पुण्य का विधान नहीं कहा जा सकता। जब एक लिंग माहात्म्य की कथा कहना असम्भव है तो कोटिलिंगों के माहात्म्य को कौन कह सकता है ॥ १ ॥ कोटिलिंग के निर्माण में सामर्थ्य न हो तो एक लाख लिंग का निर्माण करे। यदि यह भी न हो तो एक हजार लिंग का निर्माण करे। इसमें भी सामर्थ्य न हो तो सौ लिंग बनावे। इस महीने में एक लिंग के बनाने से भी जीव मेरे पास निवास

करे। इसमें भी सामर्थ्य न हो तो सौ लिंग बनावे। इस महीने में एक लिंग के बनाने से भी जीव मेरे पास निवास

करता है ॥ २ ॥ भक्ति द्वारा मन से सोलह उपचार द्वारा कामदेव के शत्रु भगवान् श्रीशंकर का षडक्षर ॐ नमः शिवाय मन्त्र के सहित अर्चन करे ॥ ३ ॥ ग्रहयज्ञ कर उद्यापन करे ॥ हवन तथा ब्राह्मण भोजन कराये ॥४॥ इस तरह व्रत को करने से असमय में मृत्यु नहीं होती। इस मास का व्रत के सहित लिंगार्चन वन्ध्यात्व को हरण कर संपूर्ण आपत्ति को दूर

षोडशभिर्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ३ ॥ उद्यापनं च कर्तव्यं ग्रहयज्ञपुरःसरम् ॥ सम्पादनीयो होमश्च ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ॥ ४ ॥ नाकालमरणं तस्य वन्ध्यात्वहरणं परम् ॥ सर्वापत्तिक्षयकरं सर्वसम्पत्प्रवर्धनम् ॥ ५ ॥ प्रेत्य कैलासवासश्च आकल्पं मम सन्निधौ ॥ पञ्चामृताभिषेकं च यः कुर्याच्छ्रावणे नरः ॥ ६ ॥ स पञ्चामृतभोजी स्यात्सम्पन्नो गोधनेन च ॥ अत्यन्तं मधुरालापी प्रियश्च त्रिपुरद्विषः ॥ ७ ॥ अनोदनव्रती चैव हविष्याशी च यो नरः ॥ व्रीह्यादिसर्वधान्यानामक्षयोऽसौ निधिर्भवेत् ॥ ८ ॥ पत्रावल्यां तु भुञ्जानः स्वर्णभाजनभोजनः ॥ शाकवर्जनतः स्याद्वै शाककर्ता

करता है। सब ऐश्वर्य की वृद्धि करने वाला है ॥ ५ ॥ जो प्राणी पञ्चामृत से श्रावणमास में अभिषेक करता है वह इस देह को छोड़ कैलास में मेरे नजदीक आकर एक कल्पतक निवास कर सकता है ॥ ६ ॥ वह प्राणी पञ्चामृत पीने वाला गौ तथा धन आदि से युक्त अत्यन्त मधुर भाषी, त्रिपुरासुर हन्ता श्रीशंकर का प्रिय होता है ॥७॥ इस महीने में चावल नहीं खाये। जो हविष्यान्न भोजन करता है वह चावल आदि सम्पूर्ण धान्यों के अक्षय निधि से युक्त होता है ॥ ८ ॥

जो इस महीने में पत्तल में भोजन करता है वह सोने के पात्र में भोजन करने वाला होता है तथा शाक त्यागने मात्र से शाक का कर्ता होता है। मनुष्यों में उत्तम होता है ॥९॥ जो भूमि ही में शयन करता है वह कैलास में निवास करता है। जो इस श्रावण मास में अति सुबह एक दिन भी नहाता है। उसे एक महीने के नहाने का फल मिलता है ॥१०॥

नरोत्तमः ॥ ९ ॥ केवलं भूमिशायी तु कैलासे वासमाप्नुयात् ॥ प्रात स्नानान्नभोमासि अब्दं तत्फलभाङ्मतः ॥ १० ॥ जितेन्द्रियत्वान्मासेऽस्मिन्बलमैन्द्रियकं भवेत् ॥ स्फाटिकेऽश्ममये वापि मात्स्नें मारकतेऽपि वा ॥ ११ ॥ स्वयम्भौ वाऽस्वयम्भौ वा पिष्टे धातु मयेऽपि वा ॥ चन्दने नवनीते वा अन्यस्मिन्वापि लिङ्गके ॥ १२ ॥ सकृत्पूजां प्रकुर्वाणो ब्रह्महत्याशतं दहेत् ॥ सूर्यचन्द्रोपरागेषु सिद्धिःक्षेत्रेऽपि वा क्वचित् ॥ १३ ॥ सिद्धिर्या लक्षजाप्येन सकृत्स्याज्जपतोऽत्र सा ॥ अन्यकाले कृता ये स्युर्नमस्काराः प्रदक्षिणाः ॥ १४ ॥ सहस्रेण फलं यत्स्यान्मासेऽस्मिन्नेक-

इस महीने में जितेन्द्रिय होने से इन्द्रिय जन्य बल प्राप्त होता है। इस महीने में स्फटिकमणि,पाषाण,मट्टी तथा मरकतमणि निर्मित शिवलिंग में ॥ ११ ॥ या स्वयं उत्पन्न या बनाये हुए या पीसान निर्मित या पीतल आदि, चन्दन, मक्खन, या किसी निर्मित शिवलिंग में ॥ १२ ॥ एक बार अर्चन करने मात्र से १०० ब्रह्महत्या भस्म हो जाती है। सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, अन्य किसी सिद्ध क्षेत्र में ॥ १३ ॥ लक्ष जप करने से जो सिद्धि कही है। वह सिद्धि इस महीने में एक बार जप करने से मिल सकती है। दूसरे समय में किए गए नमस्कार तथा प्रदक्षिणा से ॥१४॥ जो एक हजार का

वार जप करने से मिल सकती है। दूसरे समय में किए गए नमस्कार तथा प्रदक्षिणा से ॥१४॥ जो एक हजार का फल मिलता है वह फल इस महीने में एक बार करने मात्र से मिल सकता है। मुझे प्रिय इस श्रावण महीनेमें वेदपारायण करने पर ॥१५॥ सब वेदमन्त्रों की अच्छी तरह सिद्धि हो सकती है। जो इस महीने में श्रद्धा से पुरुषसूक्त का पाठ

वारतः ॥ मत्प्रिये श्रावणे मासि वेदपारायणे कृते ॥ १५ ॥ सर्वेषां वेदमन्त्राणां सिद्धिः सम्यक्प्रजायते ॥ मासेऽस्मिन्पौरुषं सूक्तं जपते श्रद्धयान्वितः ॥ १६ ॥ कृत्वा सङ्ख्यासहस्रं तु कलौ स्यात्तु चतुर्गुणम् ॥ वर्णानां सङ्ख्यया वापि शतं कुर्यादतन्द्रितः ॥ १७ ॥ अशक्तः सङ्ख्यया कुर्त्तं शतमानेन वा जपेत् ॥ ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥ १८ ॥ गुरुतल्पे कृते पापे प्रायश्चित्तमिदं परम् ॥ नास्त्येतत्सदृशं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ॥ १९ ॥ विना पौरुषजाप्येन न नयेदेकमप्यहः ॥ अर्थवादमिमं ब्रूयात्स नरो निरयी भवेत् ॥ २० ॥ ग्रहयज्ञः प्रकर्तव्यः

करता है ॥१६॥ यदि एक सहस्र कलिकाल में चतुर्गण या पुरुषसूक्त के अक्षर-संख्या, आलस्य त्याग कर सौ पाठ करता है ॥१७॥ अक्षर संख्या के करने में असमर्थ प्राणी सौ पाठ करता है वह ब्रह्महत्या आदि पापों से छुटकारा प्राप्त कर लेता है। इसमें संशय नहीं ॥१८॥ यह उत्तम प्रायश्चित्त गुरुशय्या पर पाप करने का है। इसके तुल्य पाप नाशक पवित्र पुण्य फलदायक अन्य साधन नहीं ॥१९॥ इस महीने में बिना पुरुष सूक्त पाठ के एक दिन भी न बितावे।

जो इसको अर्थवाद मात्र कहता है। वह प्राणी नरक को जाता है ॥२०॥ समिधा, चरु, तिल और घी से ग्रहयज्ञ करे। धूप, गन्ध, पुष्प नैवेद्य आदि के भेद द्वारा अर्चन करे ॥२१॥ शंकर के रूपों का यथोचित ध्यान कर शक्ति के अनुसार कोटिहोम, लक्षहोम और अयुत हवन करे ॥२२॥ तिलों का व्याहृति मन्त्रों से हवन करे। इसी को 'ग्रहयज्ञ' नाम से

समिच्चरुतिलाज्यकैः ॥ धूपगन्धप्रसूनादिनैवेद्यादिप्रभेदतः ॥ २१ ॥ तद्रूपाणां च ध्यानादि सम्पाद्य च यथायथम् । कोटिहोमो लक्षहोमोऽयुतहोमस्तु शक्तितः ॥ २२ ॥ तिलैर्व्याहृतिभिः कार्यो ग्रहयज्ञाभिधोऽप्यसौ ॥ अथ वक्ष्यामि वाराणां व्रतानि शृणु साम्प्रतम् ॥ २३ ॥ तत्रादौ रविवारस्य व्रतं वक्ष्यामि तेऽनघ ॥ अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ २४ ॥ प्रतिष्ठानपुरे रम्ये सुकर्मा नाम वै द्विजः ॥ असीद्दरिद्रः कृपणो भैक्ष्यचर्यापरायणः ॥ २५ ॥ एकदा स गतो धान्यं याचितुं पर्यटन्पुरम् ॥ स्त्रियो ददर्श सदने कस्यचिद्गृहमेधिनः ॥ २६ ॥ चरन्त्यो

कहा गया है। हे सनत्कुमार! अब वार व्रत कहूँगा आप सुनें ॥२३॥ हे अनघ! आप से पहले रविवार व्रत को कहूँगा। इसमें प्राणी पुरातन इतिहास कहते हैं ॥२४॥ रमणीय प्रतिष्ठानपुर में सुकर्मा नाम का एक दरिद्र ब्राह्मण तथा कृपण भिक्षा वृत्तियों में तत्पर था ॥२५॥ एक दिन सुकर्मा ब्राह्मण धान्य भिक्षा के लिए प्रतिष्ठानपुर में घूमता हुआ किसी

समय उस ब्राह्मण को देख उन स्त्रियों ने अर्चन को जल्दी ही ढक दिया ॥ २७ ॥ उस ब्राह्मण देव ने उन स्त्रियों से अर्चन विधि को जानने की जिज्ञासा की । हे साध्वि स्त्रियों, आप सब क्यों इस व्रत को ढक देती हैं ॥ २८ ॥ आप दयालु हैं मुझपर कृपा करें ॥ इस व्रत की विधि कहें । क्योंकि परोपकार के तुल्य तीनों लोकों में अन्य धर्म नहीं

रविवारस्य मिलिता व्रतमुत्तमम् ॥ तदोचुस्ताश्च तं दृष्ट्वा आच्छादयत सत्वरम् ॥ २७ ॥ पूजाविधिं ततो विप्रः प्रार्थयामास ताः स्त्रियः ॥ छाद्यते किं नु भोः साध्व्यो भवतीभिरिदं व्रतम् ॥ २८ ॥ कथयध्वं कृपां कृत्वा ममोपरि दयालवः । परोपकारसदृशो धर्मो नास्ति जगत्त्रये ॥ २९ ॥ साधूनां समचित्तानां परार्थः स्वार्थ एव हि ॥ दरिद्रपीडितश्चाहं श्रुत्वेदं व्रतमुत्तमम् ॥ ३० ॥ चरिष्यामि विधिं ब्रूत फलं चास्य व्रतस्य हि ॥ ३१ ॥ स्त्रिय ऊचुः ॥ उन्मादं वा प्रमादं वा विस्मृतिं वा करिष्यसि ॥ अभक्तिं वाप्यनास्था वा कथं देयं तव द्विज ॥ ३२ ॥ इति तासां वचः श्रुत्वा विप्रेन्दो वाक्यमब्रवीत् ॥ ज्ञानवानस्मि भोः साध्व्यो भक्ति-

॥ २९ ॥ समदृष्टि रखने वाले साधु पुरुषों को तो परोपकार ही स्वार्थ है । दरिद्रावस्था से मैं दुःखी हूँ । यह उत्तम व्रत श्रवणकर ॥ ३० ॥ व्रत को मैं करूँगा । इस व्रत के विधान तथा फल को कहिये ॥ ३१ ॥ स्त्रियों ने कहा— हे द्विज ! यदि व्रत में उन्माद, या प्रमाद, विस्मरण, भक्ति-हीनता या अनास्था करेंगे तो इस व्रत को तुम्हें कैसे दें ॥३२॥

उनकी ऐसी वाणी को श्रवणकर उत्तम ब्राह्मण ने कहा—हे साध्वि स्त्रियों, मैं ज्ञानी तथा भक्ति युक्त उत्तम व्रतों को करनेवाला हूँ ॥ ३३ ॥ इस तरह उसकी वाणी सुन उन स्त्रियों में से एक प्रौढ़ा स्त्री ने रविवार के व्रत तथा उसकी विधि उससे कही ॥३४॥ श्रावणमास के शुक्लपक्ष के पहले रविवार को मौन होकर उठे। ठंढा पानी से स्नान कर ॥ ३५ ॥

मांश्चास्मि सुव्रताः ॥ ३३ ॥ एवं तद्वचनं श्रुत्वा प्रौढा तासु च याऽभवत् ॥ सा प्रोवाच व्रतं तस्मै यथाभूतं च तद्विधिम् ॥ ३४ ॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु प्रथमे रविवासरे ॥ मौनेनोत्थायावगाहं कुर्याच्छीतोदकेन तु ॥ ३५ ॥ स्वनित्यकर्म सम्पाद्य नागवल्लीदले शुभे ॥ परिधिद्वादशयुतं मण्डलं तत्र संल्लिखेत् ॥ ३६ ॥ अर्कवद्वर्तुलं सम्यग्रक्तचन्दनतः शुभम् ॥ तत्र संज्ञायुतं सूर्यं पूजयेद्रक्तचन्दनात् ॥ ३७ ॥ जानुभ्यामवनीं गत्वा अर्घ्यं द्वादशमण्डलैः ॥ रक्तचन्दनमिश्रैश्च जपाकुसुमसंयुतम् ॥ ३८ ॥ दद्याद्गभस्तये सम्यक् श्रद्धाभक्तिपुरःसरम् ॥ रक्ताक्षतैर्ज-

नित्यकर्म कर पान के पत्तेपर बारह परिधिवाला मण्डल लिखे ॥ ३६ ॥ उसको लालचन्दन द्वारा सूर्यनारायण के तुल्य गोलाकार लिखे। उस मण्डल में संज्ञा नामवाली स्त्री के सहित सूर्य का लालचन्दन से पूजन करे ॥ ३७ ॥ घुटना जोड़कर भूमिपर स्थित हो सूर्य के बारह मण्डलों पर अलग-अलग लालचन्दन से युक्त लावा तथा जपापुष्प से युक्त अर्घ को ॥ ३८ ॥ श्रद्धाभक्ति से सूर्यनारायण को दे अर्घ को रक्ताक्षत, जपापुष्प और उपचारों द्वारा युक्त करे ॥ ३९ ॥

नारिकेल बीज और खाँड़ शकरा से युक्त सूर्य के मन्त्रों को कहकर नैवेद्य दे ॥ ४० ॥ सूर्य के बारह मन्त्रों द्वारा स्तवन करे बारह बार नमस्कार करे । बारह बार प्रदक्षिणा करे । और छः सूत को एक में मिलाकर उसमें छः ग्रन्थी लगावे ॥ ४१ ॥ उस सूत्र को सूर्यनारायण को अर्पण कर उसे अपने कंठ में बाँधले बारह फल से सपन्न वायन ब्राह्मण

पापुष्पैस्तथान्यैरुपचारकैः ॥ ३९ ॥ नारीकेलस्य बीजं तु खण्डशर्करया युतम् ॥ नैवेद्यमर्पयित्वा तु मन्त्रैरादित्यलिंगकैः ॥ ४० ॥ स्तुवीत द्वादशवरैर्नमस्कारान्प्रदक्षिणाः ॥ षट्तन्तुनिर्मितं सूत्रं षड्भिर्ग्रन्थिभिरन्वितम् ॥ ४१ ॥ अर्पयित्वा तु देवेशे बध्नीयात्तु गले च तत् ॥ द्विजाय वायनं दद्यात्फलैर्द्वादशभिर्युतम् ॥ ४२ ॥ एतद्व्रतप्रकारं न श्रावयेत्कस्यचित्पुरा ॥ एवं व्रते कृतो विप्र निर्धनो धनमाप्नुयात् ॥ ४३ ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं कुष्ठी कुष्ठात्प्रमुच्यते । बद्धः स्याद्बन्धरहितो रोगी रोगेण हीयते ॥ ४४ ॥ किं बहूक्तेन विप्रेन्द्र यद्यदिच्छति वाञ्छितम् ॥ तत्तल्लभेत्साधकोऽसौ व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥ ४५ ॥ एवं चतुर्षु वारेषु कदाचिदपि पञ्चसु ॥

को दे ॥ ४२ ॥ इस व्रत की विधि को किसी से न कहनी चाहिये । हे विप्र, यों व्रत के करने मात्र से निर्धनी प्राणी धनवान हो जाता है ॥४३॥ पुत्रहीन प्राणी पुत्र प्राप्त कर सकता है । कोढ़ी कोढ़सेछूटकारा पा जाता है । जेलखानेमें रहा हुआ प्राणी बन्धन से छूट जाता है । रोगी रोग से मुक्त हो जाता है ॥४४॥ हे विप्रेन्द्र ! विशेष क्या कहा जाय–जिस २

वस्तु की अभिलाषा करता है वह सब साधक इस व्रत के प्रभाव मात्र से प्राप्त कर लेता है ॥ ४५ ॥ इस प्रकार श्रावण मास में चार रविवार या कभी पाँच रविवार होने से व्रत करे। व्रत की सम्पूर्ण फल की इच्छा के लिए उद्यापन करे ॥ ४६ ॥ हे विप्रेन्द्र ! इस प्रकार व्रत करने मात्र से सिद्धि होती है। उस ब्राह्मण ने उन साध्वी स्त्रियों को नमस्कार कर

उद्यापनं ततः कार्यं व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥ ४६ ॥ एवं कुरुष्व विप्रेन्द्र सर्वसिद्धिर्भविष्यति ॥ नमस्कृत्वा तु ताः साध्वीविप्रः स्वगृहमाययौ ॥ ४७ ॥ तथा चकार तत्सर्वं व्रतं चैव यथाश्रुतम् ॥ स्वकन्यकाद्वयस्यापि श्रावयामास तद्विधिम् ॥ ४८ ॥ तस्य श्रवणमात्रेण दर्शनात्पूजनस्य च ॥ स्वरङ्गनोपमे कन्ये जाते तस्य प्रभावतः ॥ ४९ ॥ तदाप्रभृति विप्रस्य गृहे लक्ष्मीर्विवेश ह ॥ नानामार्गैर्निमित्तैश्च लक्ष्मीवानिति सोऽभवत् ॥ ५० ॥ कदाचिद्गच्छता राज्ञा विप्रसद्मपुरोऽध्वना ॥ वातायने स्थिते कन्ये दृष्टे निरुपमे शुभे ॥ ५१ ॥ देहावयवसंस्थानैर्वस्तु यद्यच्च सुन्दरम् ॥

अपने घर चला आया ॥ ४७ ॥ घर आ जैसा सुनकर आया था वैसी सब विधि को अपनी दोनों कन्याओं से भी कही ॥ ४८ ॥ उस व्रत के सुनने से और अर्चन तथा दर्शन मात्र से ही दोनों कन्या देवांगना के तुल्य व्रत विधि प्रभाव मात्र से सुन्दर हो गईं ॥ ४९ ॥ उसी दिन से उस विप्र के गृह (घर) में लक्ष्मी ने निवास किया। अनेक रास्तों से अनेक निमित्तों सहित वह ब्राह्मण उसी दिन से लक्ष्मीपति हो गया ॥ ५० ॥ किसी

राजा ने उसी ब्राह्मण के घर के समीप रास्ते से होकर निकलते हुए अति उत्तम उन दोनों कन्याओं को बरामदे या खिड़की पर बैठे देखा ॥ ५१ ॥ दोनों कन्यायें अपनी देह के अवयवों से त्रैलोक्य के संपूर्ण उत्तम चीजों को तथा कमल और चन्द्रमा को भी अपमानित करती थीं ॥ ५२ ॥ उन बालिकाओं के देखने से राजा मोहित हो क्षणभर वहाँ ही स्थित हो

त्रैलोक्ये भर्त्सयन्त्यौ ते पद्मचन्द्रादिकं च यत् ॥ ५२ ॥ राजा मोहं समापेदे तत्रैवावस्थितः क्षणम् ॥ आमन्त्र्य ब्राह्मणं सद्यः प्रार्थयामास कन्यके ॥ ५३ ॥ विप्रोऽपि हर्षितो भूत्वा प्रादाद्राज्ञे सुताद्वयम् ॥ राजानं प्राप्य भर्तारं तेऽपि कन्ये मुदान्विते ॥ ५४ ॥ पुत्रपौत्रादिसम्पन्ने चक्रतुश्च स्वयं व्रतम् ॥ व्रतमेतत्समाख्यातं मुने तव महोदयम् ॥ ५५ ॥ यस्य श्रवणमात्रेण सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ अनुष्ठानं फलं तस्य किं वर्ण्यं विधिनन्दन ॥ ५६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमार संवादे श्रावणमासमाहात्म्ये प्रकीर्णकनानाव्रतरविवारव्रतादिकथनंनाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

गया। राजा ने ब्राह्मण को बुलाकर उन दोनों बालिकाओं के लिए याचना की ॥ ५३ ॥ ब्राह्मण भी प्रसन्न हो दोनों बालिकाओं को राजा को दिया। वे दोनों बालिका राजा को स्वामीत्व में प्राप्तकर प्रसन्न हो गयीं ॥ ५४ ॥ प्रसन्न चित्त से बालिका इस व्रत को कर पुत्र-पौत्रादि से युक्त हुईं। हे मुने, बड़े अभ्युदय को करने वाले इस व्रत को आप से कहा ॥ ५५ ॥ हे ब्रह्मा के पुत्र ! जिस व्रत के सुनने मात्र से सब कामना परिपूर्ण हो जा सकती है। तो उस व्रत के अनुष्ठान के फल का क्या वर्णन किया जाय ॥ ५६ ॥

सनत्कुमार ने शंकरजी से कहा—हे ईश्वर, मैंने हर्ष का कारण रविवार माहात्म्य को सुना। अब आप श्रावण महीने के सोमवार व्रत माहात्म्य को कहें ॥ १ ॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा हे सनत्कुमार, रवि मेरी आँख है। उसका श्रेष्ठ माहात्म्य हुआ। पार्वती के सहित क्या इस मेरे नाम माहात्म्य का वर्णन हो सके ॥ २ ॥ मेरे से

सनत्कुमार उवाच ॥ रविवारस्य माहात्म्यं श्रुतं मे हर्षकारकम् ॥ सोमवारस्य माहात्म्यं श्रावणे मासि मे वद ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच ॥ रविर्मे नयनं तस्य माहात्म्यमिदमुत्तमम् ॥ उमा-सहितमन्नाम्नस्तस्य सोमस्य किं पुनः ॥ २ ॥ माहात्म्यं वर्णनीयं मे यत्किञ्चिदपि ते ब्रुवे ॥ सोमश्चन्द्रो विप्रराजः सोमः स्याद्यज्ञसाधनम् ॥ ३ ॥ निमित्तानि च तन्नाम्नः शृणु मत्तः समाहितः ॥ मत्स्वरूपो यतो वारस्ततः सोम इति स्मृतः ॥ ४ ॥ प्रदाता सर्वराज्यस्य श्रेष्ठश्चैव ततो हि सः ॥ समस्तयज्ञफलदो व्रतकर्त्रे यतो हि सः ॥ ५ ॥ तस्य शृणु विधिं विप्र विस्तरात्कथयामि ते ॥

इसके माहात्म्य का जो कुछ वर्णन हो सकेगा उसे आपसे मैं कहता हूँ। चन्द्रमा का सोम नाम है। ब्राह्मणों के सोम राजा हैं। यज्ञ साधन सोम लता का नाम है ॥ ३ ॥ इन नामों के कारण को एकाग्र होकर सुनो। यह वार मेरा स्वरूप है। अतः सोम इसका नाम कहा गया ॥ ४ ॥ संपूर्ण राज्य दायक होने से यह उत्तम है। व्रत करनेवाले को संपूर्ण फल दायक होने से भी अति श्रेष्ठ है ॥५॥ हे विप्र, व्रत विधि इसकी सुनो मैं विस्तार सहित आप से कहता हूँ।

बारहों महीनों में सोमवार व्रत करना उत्तम है ॥६॥ यदि बारहों महीने में व्रत करने की सामर्थ्य न हो तो श्रावण

बारहों महीनों में सोमवार व्रत करना उत्तम है ॥६॥ यदि बारहों महीने में व्रत करने की सामर्थ्य न हो तो श्रावणमास के सोम को व्रत करे। इस मास में सोम व्रत करने मात्र से एक साल व्रत करने के फल का भागी हो जाता है ॥७॥ श्रावण शुक्लपक्ष प्रथम सोमवार दिन में सोम व्रत का संकल्प करे। सोम का व्रत मैं करूँगा। इस व्रत से शिव

द्वादशेष्वपि मासेषु सोमवारः प्रशस्यते ॥६॥ तावत्कर्तुमशक्तश्चेच्छ्रावणे मासि कारयेत् ॥
अस्मिन्मासे व्रतं कृत्वा अब्दव्रतफलं लभेत् ॥७॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु प्रथमे सोमवासरे ॥
सङ्कल्पयेद्व्रतं सम्यक् शिवो मे प्रीयतामिति ॥ ८ ॥ एवं चतुर्षु वारेषु भवेयुः पञ्च वा यदि ॥
प्रातः सङ्कल्पयेत्तत्र नक्तं च शिवपूजनम् ॥ ९ ॥ उपचारैः षोडशभिः सायं च पूजयेच्छिवम् ॥
शृणुयाच्च कथां दिव्यामेकाग्रकृतमानसः ॥ १० ॥ सोमवारव्रतस्यास्य कथ्यमानं निबोध मे ॥
श्रावणे प्रथमे सोमे गृह्णीयात्व्रतमुत्तमम् ॥ ११ ॥ सुस्नातश्च शुचिर्भूत्वा शुक्लाम्बरधरो नरः ॥

प्रसन्न हों ॥८॥ यों चारों सोसवार के दिन सुवह संकल्प करे। यदि श्रावण मास में पाँच सोमवार हो जाय तो पाँचों ही सोमवार दिनों में संकल्प कर साम को शिव का अर्चन करे ॥९॥ सायङ्काल में श्रीशिवजी का षोडशोपचार से पूजन करे और एकाग्रमन से श्रीशिवजी की कथा का श्रवण करे ॥१०॥ मैं इस सोमवार व्रत विधि को कहता हूँ, आप सुनो। श्रावण महीने के पहले सोमवार को उत्तम व्रत-नियम को ग्रहण करे ॥११॥ अच्छी प्रकार नहा कर शुद्ध हो सफेद

वस्त्र ग्रहण कर काम, क्रोध, अहंकार, द्वेष, चुगुलखोरी आदि का त्याग करे ॥१२॥ मालती मल्लिका आदि सफेद पुष्प तथा नाना प्रकार के पुष्प और अभीष्ट उपचारों से ॥१३॥ मूलमन्त्र नमः शिवाय या त्र्यम्बकमन्त्र से अर्चन करे। कहे कि शर्व, भवनाशन, महादेव का मैं ध्यान करता हूँ ॥१४॥ उग्र, उग्रनाथ, भव, शशिमौली का ध्यान करता हूँ ॥१५॥

कामक्रोधाद्यहङ्कारद्वेषपैशून्यवर्जितः ॥ १२ ॥ आहरेच्छ्वेतपुष्पाणि मालतीमल्लिकादिकाः ॥
अन्यैश्च विविधैः पुष्पैरभीष्टैरुपचारकैः ॥ १३ ॥ पूजयेन्मूलमन्त्रेण त्र्यम्बकेण ततः परम् ॥
शर्वाय भवनाशाय महादेवाय धीमहि ॥ १४ ॥ उग्राय चोग्रनाथाय भवाय शशिमौलिने ॥ १५ ॥
रुद्राय नीलकण्ठाय शिवाय भवहारिणे ॥ एवं सम्पूज्य देवेशमुपचारैर्मनोहरैः ॥ १६ ॥
यथाविभवसारेण तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ सोमवारे यजन्ते ये पार्वत्या सहितं शिवम् ॥ ते
लभन्त्यक्षयाँल्लोकान्पुनरावृत्तिदुर्लभान् ॥ १७ ॥ अत्र नक्तेन यत्पुण्यं कथयामि समासतः ॥

रुद्र, नीलकण्ठ, शिव, भवहारी का ध्यान करता हूँ। इसी प्रकार देवेश का मनोहर उपचारों से अचन करे ॥१६॥ तथा अपने वित्त के अनुसार इस व्रत को जो करता है। उसके पुण्यफल को सुनो। सोमवार दिन जो पार्वती के सहित शिव का अर्चन करते हैं। प्राणी पुनरावृत्ति से रहित अक्षय दुर्लभ लोक प्राप्त कर लेते हैं ॥ १७ ॥ इस महीने में

'नक्तभोजन' से नाश होते हैं। इसमें कोई विचार न करे इस व्रत को उपवास द्वारा करे ॥ १६ ॥ पुत्रेच्छा वाला पुत्र, धनेच्छा वाला धन प्राप्त कर लेता है। प्राणी जिस वस्तु की इच्छा कर लेता है उसे वह फल प्राप्त होता है ॥२०॥ इस लोक में बहुत समय तक रह अपने इष्ट भोग पदार्थ को भोग अन्त में उत्तम विमान द्वारा रुद्रलोक जाकर पूजित

सप्तजन्मार्जितं पापमभेद्यं देवदानवैः ॥ १८ ॥ प्रणश्येन्नक्तभुक्तेन नात्र कार्या विचारणा ॥ उपवासेन वा कुर्याद्व्रतमेतदनुत्तमम् ॥ १६ ॥ पुत्रार्थी लभते पुत्रान्धनार्थी लभते धनम् ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति मानवः ॥ २० ॥ इह लोके चिरं स्थित्वा भुक्त्वा भोगान्यथे-प्सितान् ॥ विमानवरमारुह्य रुद्रलोके महीयते ॥ २१ ॥ चलं चित्तं चलं वित्तं चलं जीवितमेव च ॥ एवं ज्ञात्वा प्रयत्नेन व्रतस्योद्यापनं चरेत् ॥ २२ ॥ उमामहेश्वरौ हैमौ राजते वृषभे स्थितौ ॥ यथाशक्ति प्रकर्तव्यौ वित्तशाठ्यं न कारयेत् ॥ २३ ॥ मण्डलं लिङ्गतोभद्रं दिव्यं वै कारये-च्छुभम् ॥ तत्र संस्थापयेत्कुम्भं श्वेतवस्त्रयुगान्वितम् ॥ २४ ॥ ताम्रपात्रं वैणवं वा कुम्भस्योपरि

हो जाता है ॥२१॥ चित्त, धन, और जीवन को चलायमान जानकर प्रयत्न से व्रतोद्यापन करे ॥२२॥ धन की शठता को छोड़ स्वशक्त्यानुसार चाँदी के वृषभ पर स्थित उमामहेश्वर की सोने की प्रतिमा बनवावे ॥ २३ ॥ सुन्दर लिङ्गतोभद्र मण्डल बना उसपर घट का स्थापन करे। दो सफेद वस्त्र से ढके ॥ २४ ॥ घड़े के ऊपर ताँबे या बाँस का पात्र रख

उसके ऊपर पार्वती के सहित शिवजी की प्रतिमा रखे ॥ २५ ॥ श्रुति, स्मृति, और पौराणिक मन्त्रों से शिवका अर्चन करे। पुष्प का मण्डप बना कर उसके ऊपर एक रमणीय चँदवा बाँध दे ॥ २६ ॥ रात के समय गीत तथा वाद्य शब्द द्वारा जागरण करे। अपने 'गृहसूत्र' विधान द्वारा अग्नि को बुद्धिमान् स्थापित करे ॥२७॥ शर्व, भवनाथ, आदि एकादश

विन्यसेत् ॥ तस्योपरि न्यसेद्देवमुमया सहितं शिवम् ॥ २५ ॥ श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तैर्मन्त्रैः सम्पूजयेच्छिवम् ॥ पुष्पमण्डपिका कार्या वितानं चैव शोभनम् ॥ २६ ॥ रात्रौ जागरणं कार्यं गीतवादित्रनिःस्वनैः ॥ स्वगृह्योक्तविधानेन ततोऽग्निं स्थापयेद् बुधः ॥ २७ ॥ ततो होमं च शर्वाद्यैरेकादशसुनामभिः ॥ पालाशादिभिः समिद्भिश्च हुनेदष्टाधिकं शतम् ॥ २८ ॥ यवव्रीहितिलाद्यैश्च आप्यायस्वेति मन्त्रतः ॥ बिल्वपत्रैस्त्र्यम्बकेण षडवर्णेनापि वा पुनः ॥ २९ ॥ पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा कृत्वा स्विष्टकृतादिकम् ॥ आचार्यं पूजयेत्पश्चाद् गां च तस्मै प्रदापयेत् ॥ ३० ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादेकादश सुशोभनान् ॥ एकादश घटास्तेभ्यो वंशपात्रसमन्विताः ॥ ३१ ॥

नाम से होम करे। पलाश की लकड़ी से एक सौ आठ आहुति दे ॥२८॥ यव, व्रीहि, तिल आदि द्वारा 'आप्यायस्व' इस मन्त्र से, त्र्यम्बक मन्त्र से बिल्वपत्र का या षडाक्षर मन्त्र से हवन करे ॥ २९ ॥ स्विष्टकृत आदि कर्म कर पूर्णाहुति करे। आचार्य का

ब्राह्मणों को एकादश घड़ा बाँस के पात्र सहित दे ॥ ३१ ॥ पूजे प्रधान देव तथा देव पर चढ़ी सामग्री आचार्य को दे। प्रार्थना करे ॥ ३२ ॥ मेरा व्रत पूर्ण हो इस व्रत से भगवान शिव प्रसन्न हों। प्रसन्नता से बन्धु बान्धवों के सहित भोजन करे ॥ ३३ ॥ जो इस विधान द्वारा इस व्रत को करता है वह जो कुछ चाहता है वह सब प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥

सम्पूजित ततो देवं देवोपकरणानि च ॥ आचार्याय ततो दद्यात्प्रार्थयेत्तदनन्तरम् ॥ ३२ ॥
परिपूर्णं व्रतं मे स्याच्छिवो मे प्रीयतामिति ॥ बन्धुभिः सह भुञ्जीत ततो हर्षपुरःसरम् ॥ ३३ ॥
अनेनैव विधानेन य इदं व्रतमाचरेत् ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति मानवः ॥ ३४ ॥
शिवलोके ततो गत्वा तस्मिल्लोके महीयते ॥ कृष्णेनाचरितं पूर्वं सोमवारव्रतं शुभम् ॥ ३५ ॥
नृपःश्रेष्ठैस्तथा चीर्णमास्तिकैर्धर्मतत्परैः ॥ इदं यः शृणुयान्नित्यं सोऽपि तत्फलमाप्नुयात् ॥ ३६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये सोमवारव्रतकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

शिवलोक में जाकर पूजित हो जाता है। इस सोमवार व्रत को पहले कृष्णचन्द्रजी ने किया ॥ ३५ ॥ फिर उत्तम राजाओंने और धर्मात्मा आस्तिक प्राणियों ने किया। सोमवार व्रत माहात्म्य को जो सुनेगा वह भी इस व्रतफल का भागी होगा ॥ ३६ ॥

ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, उत्तम मङ्गलवार का व्रत कहूँगा। जिसके करने से वैधव्य का नाश होता है ॥ १ ॥ विवाहोत्तर पाँच साल तक इस व्रत को करे। इसका नाम मंगलागौरी व्रत है। यह पाप को नष्ट करनेवाला है ॥२॥ विवाह के अनन्तर पहले श्रावण शुक्लपक्ष के पहले मंगलवार के दिन इस व्रत का शुभारम्भ

ईश्वर उवाच—सनत्कुमार वक्ष्यामि भौमव्रतमनुत्तमम् ॥ यस्यानुष्ठानमात्रेण अवैधव्यं प्रजायते ॥ १ ॥ विवाहानन्तरं पञ्चवर्षाणि व्रतमाचरेत् ॥ नामास्य मङ्गलागौरीव्रतं पापप्रणाशनम् ॥ २ ॥ विवाहानन्तरं चाद्ये श्रावणे शुक्लपक्षके ॥ प्रथमं भौमवारस्य व्रतमेतत्तु कारयेत् ॥ ३ ॥ पुष्पमण्डपिका कार्या कदलीस्तम्भमण्डिता ॥ नानाविधैः फलैश्चैव पट्टकूलैश्च भूषयेत् ॥ ४ ॥ तत्र संस्थापयेद्देव्याः प्रतिमां स्वर्णनिर्मिताम् ॥ अन्यधातुमयीं चापि स्वशक्त्या तत्र पूजयेत् ॥ ५ ॥ उपचारैः षोडशभिर्मङ्गलागौरिसंज्ञिताम् ॥ दूर्वादलैः षोडशभिरपामार्गदलै-

करे ॥३॥ पुष्प मण्डप निर्माण कर कदली स्तम्भ से शोभित करे। नाना तरह के फलों तथा रेशमी कपड़ों से विभूषित करे ॥ ४ ॥ उसमें सोने की निर्मित देवी की प्रतिमा स्थापित करे। या किसी अन्य धातु द्वारा बनी प्रतिमा को शक्ति के अनुसार बनवाकर स्थापित करे। यथाशक्ति उस प्रतिमा का अर्चन करे ॥ ५ ॥ उस प्रतिमा में मंगलागौरी का षोडश उपचारों से, सोलह दूर्वा दलों और सोलह चिरचिरा दलों से ॥६॥ सोलह [illegible]

षोडश उपचारों से, सोलह दूर्वा दलों और सोलह चिड़चिड़ा दलों से ॥६॥ सोलह चावल तथा सोलह चने की दाल से

अर्चन करे । सोलह बत्तियों का एक दीपक हो या सोलह दीपक जला कर ॥७॥ भक्ति द्वारा दही तथा चावल का नैवेद्य समर्पण करे । देवी के नजदीक सिल लोढ़ा रखे ॥८॥ इस प्रकार पाँच साल तक व्रत करे फिर उद्यापन कर माता को वायन दे । वायन का प्रकार सुनें ॥ ९ ॥ मंगलगौरी की एक पल सोने की प्रतिमा या आधे पल या आधे के आधे

स्तथा ॥ ६ ॥ तावत्संख्यैस्तण्डुलैश्च चणकानां शकलैस्तथा ॥ षोडशोन्मितवर्तीभिस्तावद्दीपांश्च दीपयेत् ॥ ७ ॥ दध्योदनं च नैवेद्यं तत्र भक्त्या प्रकल्पयेत् ॥ समीपं स्थापयेद्देव्या दृषदं चोपलं तथा ॥ ८ ॥ एवं कृत्वा तु पञ्चाब्दं तत उद्यापनं चरेत् । मात्रे दद्याद्वायनं तु प्रकारं शृणु तस्य च ॥ ९ ॥ प्रतिमां मङ्गलागौर्याः सुवर्णपलनिर्मिताम् ॥ तदर्धेन तदर्धेन शक्त्या वाप्यथ कारयेत् ॥ १० ॥ तण्डुलैः पूरिते भाण्डे शक्त्या स्वर्णादिनिर्मिते ॥ संस्थाप्य परिधानीयं रमणीयां च कञ्चुकीम् ॥ ११ ॥ तयोरुपरि देव्यास्तु प्रतिमां स्थापयेत्ततः ॥ समीपभागे संस्थाप्य दृषदं चोपलं तथा ॥ १२ ॥ रौप्येण निर्मितं मात्रे एवं दद्यात्तु वायनम् ॥ षोडशापि सुवासिन्यो

पल या यथाशक्ति सोने की प्रतिमा बनवावे ॥ १० ॥ शक्त्यानुसार सोने या चाँदी आदि से निर्मित घड़े को चावल से भरे उस घड़े के ऊपर पहिनने के कपड़े तथा चोली रखे ॥ ११ ॥ उसके ऊपर मंगलागौरी की प्रतिमा रखे । देवी के नजदीक सिल-लोढ़ा रखे ॥ १२ ॥ चाँदी का सिल-लोढ़ा बनवाकर रखे । इस प्रकार माता के लिये वायन दे । प्रयत्न

से सोलह सुहागिनी ब्राह्मणियों को भोजन करावे ॥ १३ ॥ हे विप्र, इस प्रकार व्रत करने मात्र से सात जन्म सौभाग्य होता है। पुत्र, पौत्र, सम्पत्ति आदि से युक्त हो क्रीड़ा करती है ॥१४॥ सनत्कुमार ने ईश्वर से कहा—हे शम्भो, इस व्रत को पहले किसने किया। किसको इस व्रत के करने का फल हुआ। हे शम्भो, जिस प्रकार इस व्रत में मुझे श्रद्धा हो

भोजनीयाः प्रयत्नतः ॥ १३ ॥ एवं कृते व्रते विप्र सौभाग्यं सप्तजन्मसु ॥ पुत्रपौत्रादिभिश्चैव रमते सम्पदा युता ॥ १४ ॥ सनत्कुमार उवाच—केनेदं व्रतमाचीर्णं कस्य जातं फलं पुरा ॥ यथा स्यात्प्रत्ययः शम्भो कृपां कृत्वा तथा वद ॥ १५ ॥ ईश्वर उवाच—कुरुदेशे पुरा राजा श्रुतकीर्तिरिति श्रुतः ॥ बभूव श्रुतसम्पन्नः कीर्तिमान्हतशात्रवः ॥१६॥ चतुःषष्टिकलाभिज्ञो धनुर्विद्याविशारदः ॥ पुत्रादन्यच्छुभं सर्वं तस्य राज्ञो बभूव ह ॥ १७ ॥ सन्तानविषयेऽथासौ बहुचिन्ताकुलोऽभवत ॥ देव्या आराधनं चक्रे जपध्यानपुरःसरम् ॥ १८ ॥ क्रूरेण तपसा तस्य देवी तुष्टा बभूव ह ॥

वैसा आप मुझे कृपया कहें ॥ १५ ॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे विप्र, पूर्वकाल में कुरुदेश में श्रुतिकीर्ति नाम वाला शास्त्र ज्ञाता, कीर्तिमान तथा शत्रु रहित राजा था ॥ १६ ॥ वह चौसठ कलाओं का जानकार धनुर्विद्या निशारद था। पुत्रसुख छोड़ उस राजा को सब आनन्द था ॥ १७ ॥ राजा सन्तान के लिए बहुत चिन्ताकुल हो गया। जप तथा ध्यान युक्त हो देवी की आराधना की ॥ १८ ॥ उसके ...

माँग ॥ १९ ॥ श्रुतिकीर्ति ने कहा—हे देवि, आप यदि राजी हैं तो शोभन पुत्र दो । हे देवि, आपके कृपारूपी प्रसाद से किसी अन्य चीज की कमी नहीं है ॥२०॥ राज की ऐसी वाणी को सुन मन्द-मन्द हँसती हुई देवीने कहा हे राजन्, तुम दुर्लभ वस्तु की याचना किये हो । लेकिन कृपाकर तुमको पुत्र दूँगी ॥२१॥ हे राजेन्द्र, सुनो । पुत्र अत्यन्त गुणी

उवाच वचनं तस्मै वरं वरय सुव्रत ॥ १९ ॥ श्रुतकीर्त्तिरुवाच—यदि देवि प्रसन्नासि पुत्रं मे देहि शोभनम् ॥ अन्यद्देवि त्वत्प्रसादान्न न्यूनं किञ्चिदस्ति मे ॥ २० ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा देवी प्राह शुचिस्मिता ॥ दुर्लभं याचितं राजन्दास्ये तुभ्यं कृपावशात् ॥ २१ ॥ परं शृणुष्व राजेन्द्र पुत्रश्चेद्गुणवत्तरः ॥ ईप्सितश्चेत्षोडशाब्दं जीविष्यति न चाधिकम् ॥ २२ ॥ रूपविद्याविहिनश्चेच्चिरजीवी भविष्यति ॥ इति देव्या वचः श्रुत्वा नृपश्चिन्तातुरोऽभवत् ॥ २३ ॥ भार्य्या सह सम्मन्त्र्य ययाचे गुणभूषितम् ॥ सर्वलक्षणसम्पन्नं षोडशाब्दायुषं सुतम् ॥ २४ ॥ आज्ञा

होगा पर सोलह साल से अधिक नहीं जीवेगा, जैसी इच्छा हो ॥२२॥ यदि सुन्दरता तथा विद्या विहीन पुत्र होगा तो वह पुत्र बहुत समय तक जीवित रहेगा । देवी की वाणी सुन राजा चिन्ता करने लगा ॥ २३ ॥ उसने अपनी भार्या से विचार कर गुण विशिष्ट सम्पूर्ण लक्षण युक्त सोलह साल तक की आयु वाला पुत्र माँगा ॥ २४ ॥ देवी उसी समय भक्त राजा के लिए आज्ञा दी हे नृपनन्दन, मेरे दरवाजेपर आम का पेड़ है ॥२५॥ मेरी आज्ञा से उस आम से एक

फल को लेकर अपनी पत्नी को खाने को दो, उसके खाने से उसी समय रानी निःसन्देह गर्भ धारण करेगी ॥ २६ ॥ राजा प्रसन्न हो देवी की आज्ञानुसार अपनी पत्नी को आम्रफल दिया। उसके खाने से पत्नी ने गर्भ धारण किया। उससे दशम महीने में देवपुत्र तुल्य पुत्र पैदा किया ॥२७॥ हर्ष-शोक से सम्पन्न राजा ने (उस पुत्र का जातकर्म आदि

पयामास तदा देवी भक्तं नराऽधिपम् ॥ आम्रवृक्षो मम द्वारे वर्तते नृपनन्दन ॥२५॥ तस्यैकं फलमादाय पत्न्यै देहि ममाज्ञया ॥ भक्षणार्थं च सा धत्री गर्भं सद्यो न संशयः ॥ २६ ॥ हृष्टो राजा तथा चक्रे पत्नी गर्भं च सा दधौ ॥ दशमे मासि सुषुवे पुत्रं देवसुतोपमम् ॥ २७ ॥ जातकर्मादिकं चक्रे हर्षशोकसमन्वितः ॥ चिरायुरिति नामास्य पिता चक्रे शिवं भजन् ॥ २८ ॥ प्राप्ते तु षोडशे वर्षे चिन्तामाप सभार्यकः ॥ ततश्चक्रे विचारं स कष्टलब्धो ह्ययं सुतः ॥ २९ ॥ स्वसमीपे कथं मृत्युर्द्रष्टव्यो दुःखदोऽस्य तु ॥ काशीं प्रस्थापयामास मातुलेन समं विभुः ॥ ३० ॥

संस्कार कर दिया। और शिव स्मरण करते हुए पिता ने उसका चिरायु नाम रखा ॥ २८ ॥ जिस समय उसे सोलहवाँ साल प्रारंभ हुआ उसी दिन से सपत्नीक राजा को चिन्ता लगने लगी। राजा ने विचार किया यह पुत्र बड़े ही कष्ट से प्राप्त हुआ है ॥ २९ ॥ अपने समक्ष इसकी दुःखद मृत्यु कैसे देखूँगा। अतः राजा ने पुत्र के मामा के साथ उसे काशी भेजने का प्रबन्ध किया ॥ ३० ॥

कर इस लड़के को काशी ले जाओ ॥ ३१ ॥ मैंने पूर्वमें पुत्र-प्राप्ति के निमित्त भगवान् मृतुञ्जय की प्रार्थना की थी। कि हे विश्वेश ! पुत्र की प्राप्ति पर जगत्पति की यात्रा के लिये भेजूँगी ॥ ३२ ॥ अतः पुत्र को इसी समय ले जाओ। इसकी यत्न से रक्षा करना। अपनी बहिन की वाणी सुनकर भानजे को साथ लेकर वह काशी गया ॥३३॥ रास्ते

भ्रातरं प्रार्थयामास राजपत्नी यशस्विनी ॥ धृत्वा कार्पटिकं वेषं काशीं प्रति सुतं नय ॥ ३१ ॥ मृत्युञ्जयः प्रार्थितोऽस्ति पुत्रार्थं तु मया पुरा ॥ प्रेषयिष्मामि विश्वेशयात्रार्थं च जगत्पते : ॥ ३२ ॥ तस्मान्नेयः सुतो मेऽद्य पालनीयश्च: यत्नतः ॥ इति श्रुत्वा स्वसुर्वाक्यं स्वस्रीयेण समं ययौ ॥ ३३ ॥ दिनानि कतिचिद्गच्छन्नानन्दनगरं ययौ ॥ तत्र राजा वीरसेनो नाम्ना सर्वसमृद्धिमान् ॥ ३४ ॥ तत्कन्या मङ्गलागौरी सर्वलक्षणसंयुता ॥ वयोमध्यगता रम्या रूप-लावण्यशालिनी ॥ ३५ ॥ उपमानानि सर्वाणि तुच्छीकृत्योदयं गता ॥ नगरोपवने रम्ये सखीभिः परिवारिता ॥ ३६ ॥ ततस्तावपि सम्प्राप्तौ चिरायुर्मातुलश्च सः ॥ विश्रान्ति प्राप्तु-

में जाते हुए कई दिन बाद आनन्द नगर पहुँचा। संपूर्ण समृद्धि से युक्त वीरसेन नाम का राजा वहाँ था ॥ ३४ ॥ उस राजा की कन्या संपूर्ण लक्षण सम्पन्न मङ्गलागौरी नाम वाली बीच अवस्था युक्त रमणीय रूपलावण्य संपन्न थी ॥३५॥ वह वालिका सब गुणों से युक्त, सब उपमानों को तिरस्कृत करती हुई वहाँ उदय हुई। उस काल वह वालिका सखियों

के सहित अपने गाँव के समीप रमणीय बगीचे में खेलती थी ॥ ३६ ॥ उसी वक्त राजपुत्र 'चिरायु' तथा उसका मामा दोनों वहाँ पहुँच गये। वे दोनों बालिकाओं को देखने की इच्छा से ठहर गये ॥ ३७ ॥ इतने ही समयमें क्रीड़ा करती हुई उन बालिकाओं में से एक बालिका क्रोधित हो राजकन्या को अत्यन्त कठिन दुर्वचन 'रण्डा' यह कहा ॥३८॥

स्तत्र तासां दर्शनलालसौ ॥ ३७ ॥ क्रीडन्तीनां निवोदेन कुपिता तत्र काचन ॥ उवाच राजतनयां सा रण्डेत्यपिदुर्वचः ॥ ३८ ॥ श्रुत्वा तदशुभं वाक्यमुवाच नृपनन्दिनी ॥ अयोग्यं भाषसे त्वं किं मत्कुले नैव तद्विधा ॥ ३९ ॥ प्रसादान्मङ्गलागौर्यास्तद्व्रतस्य प्रभावतः ॥ मत्क-रादक्षता यस्य प्रपतिष्यन्ति मूर्धनि ॥ ४० ॥ विवाहे स चिरायुः स्यादल्पायुरपि चेत्सखि ॥ ततः समस्तास्ताः कन्याः स्व स्व वेश्म ययुस्तदा ॥ ४१ ॥ तस्मिन्नेव दिने राजकन्यायाः पाणिपीडने ॥ राज्ञो बाह्लिकदेशस्य दृढवर्माभिधस्य वै ॥ ४२ ॥ सुकेतुनाम्ने पुत्राय दातुं सा

इस दुर्वचनको राजपुत्री ने सुनकर कहा तुम अयोग्य वाणी क्यों कहती हो। मेरे वंश में ऐसी स्त्री नहीं है ॥ ३९ ॥ मंगलागौरी के वर प्रसाद से तथा मंगलागौरी व्रत के प्रभाव मात्र से मेरे हाथ से चावल जिसके मस्तक पर गिरें ॥४०॥ हे सखि, उसके साथ विवाह हो जाने पर यदि वह थोड़ी आयु वाला है तो भी चिरायु होगा। तदनन्तर सब बालिका अपने-अपने घर चली गईं ॥४१॥ [illegible]

पुत्र सुकेतु नाम वाले को देना निश्चय हो चुका था। पर वह सुकेतु मूर्ख, कुरूप तथा बहिरा था ॥ ४३ ॥ अतः वर-पक्षीयों ने मण्डप में अन्य अच्छा वर ले जाने का निश्चय किया। विवाह होने पर वहाँ सुकेतु चला जायगा ॥ ४४ ॥ यों विचार कर चिरायु के समीप जाकर उसके मामा से कहा—यह बालक हमें दो। क्योंकि आपके बालक द्वारा हमारा

निश्चिताऽभवत् ॥ स सुकेतुरविद्यश्च कुरूपो बधिरस्तथा ॥ ४३ ॥ ततस्ते मन्त्रयामासुर्नेयोऽन्योऽद्य वरः परः ॥ अथ सिद्धे विवाहे च सुकेतुस्तत्र गच्छतु ॥ ४४ ॥ ततश्चिरायुषं गत्वा याचिरे मातुलं प्रति ॥ देयोऽस्मभ्यमयं बालः कार्यसिद्धिर्हि नो भवेत् ॥ ४५ ॥ परोपकारतुल्यो हि धर्मो नास्त्यपरो भुवि ॥ मातुलस्तद्वचः श्रुत्वा अन्तर्हृष्टमना अभूत् ॥ ४६ ॥ पूर्वं श्रुतं चोपवने कन्यावाक्यमनेन यत् ॥ एकवारं तथाप्याह युष्माभिर्याच्यते कथम् ॥ ४७ ॥ वस्त्रालङ्करणादीनि याच्यं कार्यस्य साधने ॥ न वरो याच्यते क्वापि दीयते गौरवाद्धि वः ॥ ४८ ॥

कार्य सिद्ध होगा ॥ ४५ ॥ इस भूमि पर परोपकार के तुल्य अन्य कोई धर्म नहीं। यह वाणी श्रवणकर उसका मामा हृदय से राजी हुआ ॥ ४६ ॥ क्योंकि (इन्होंने) पूर्व वाटिका में बालिका की वाणी सुनी थी लेकिन वरपक्षीय जनों से कहा आपलोग बालक को क्यों चाहते हैं ॥ ४७ ॥ कार्यसिद्धि के वास्ते वस्त्रालङ्कार आदि माँगा जा सकता है। परन्तु वर की भिक्षा नहीं की जा सकती है आपलोगों के गौरवार्थ मैं फिर भी देता हूँ ॥ ४८ ॥ उन्हों ने चिरायु को वहाँ

ले जाकर विवाहकार्य सिद्ध किया। जब सप्तपदी आदि कार्य होने पर रात में गौरीशंकर के समीप ॥ ४९ ॥ वह चिरायु पुत्र सुप्रसन्न चित्त से राजकन्या मंगलागौरी के साथ सो गया। उसी रोज चिरायु का सोलहवाँ साल समाप्त था ॥ ५० ॥ उसी रात को साँप के रूप में काल वहाँ आया उसी समय दैवयोग से राजकन्या उठ गई ॥ ५१ ॥ उसने महासर्प को देख

विवाहं साधयामासुर्नीत्वा तत्र चिरायुषम् ॥ सप्तपद्यादिके जाते रात्रौ गौरीहरान्तिके ॥ ४९ ॥
सहासौ मङ्गलागौर्या सुप्तो हर्षसमन्वितः ॥ तदह्नि षोडशाब्दानि समाप्तानि चिरायुषः ॥ ५० ॥
निशीथे सर्परूपेण कालस्तत्र समीयिवान् ॥ तदनन्तरे भूपसुता जागृता दैवयोगतः ॥ ५१ ॥
सा ददर्श महासर्पं चकम्पे भयविह्वला ॥ धैर्यं कृत्वा तदा बाला पूजयामास सोरगम् ॥ ५२ ॥
उपचारैः षोडशभिर्दुग्धं पातुं ददौ बहु ॥ प्रार्थयामास तं सर्पं दीनवाण्या च तुष्टुवे ॥ ५३ ॥
ययाचे मङ्गलागौरी करिष्ये व्रतमुत्तमम् ॥ जीव्यान्मे पतिःसर्पाच्चिरं जीवेत्तथा कुरु ॥ ५४ ॥
एतस्मिन्नन्तरे सर्पः करके प्रविवेश ह ॥ कञ्चुकया स्वीयया सा तु चक्रे तन्मुखबन्धनम् ॥ ५५ ॥

भयसे विह्वल हो काँपने लगी। उस समय धीरता से राजकन्या ने साँप की पूजा की ॥ ५२ ॥ सोलह उपचार से अर्चन कर पीने को बहुत सा दूध दिया और प्रार्थना की। दीन वाणी से उस साँप की स्तुति की ॥ ५३ ॥ मङ्गलगौरी ने प्रार्थना की कि मैं उत्तम व्रत करूँगी, मेरे पतिदेव इस सर्प से जीवित हों तथा चिरंजीवी हों ऐसा कीजिये ॥ ५४ ॥ तभी

समय वह साँप कमण्डलु में प्रवेश किया। अपनी कंचुकी चोली से राजकन्या ने उस कमण्डलु का मुख बाँधा ॥ ५५ ॥ तदनन्तर उसके पतिदेव शरीर के अङ्गों को ऐंठते हुए जागकर उठे। अपनी पत्नी से कहा—हे प्रिये मुझे भूख सता रही है ॥ ५६ ॥ वह माता के समीप में जाकर पायस लड्डू आदि लाकर पति को दिया। उसने प्रसन्न चित्त से

एतस्मिन्नन्तरे भर्ता अङ्गमोठनपूर्वकम् ॥ जागृतश्चाऽब्रवीद्भार्यां क्षुधा मां बाधते प्रिये ॥ ५६ ॥ मातुः सकाशं गत्वा सा आनयामास पायसम् ॥ लड्डुकादि च तद्दत्तं बुभुजे प्रीतमानसः ॥ ५७ ॥ हस्तक्षालनकाले तु तद्धस्तान्मुद्रिकाऽपतत् ॥ ताम्बूलं भक्षयित्वा तु प्रसुप्तः पुनरेव सः ॥ ५८ ॥ ततः सा करकं त्यक्तुमगच्छत्तु विधेर्गतिः ॥ हारकान्तिं बहिर्दृष्ट्वा स्फुरन्तीं विस्मयं ययौ ॥ ५९ ॥ दृष्ट्वा घटस्थं तं हारं स्वकण्ठे च दधार सा ॥ किञ्चिन्निशावशेषे तु मातुलस्तं निनाय सः ॥ ६० ॥ ततस्ते वरपक्षीयाः सुकेतुं तत्र चानयन् ॥ दृष्ट्वा तं मङ्गला-

भोजन किया ॥ ५७ ॥ हाथों के धोने के समय उसके हाथ से अंगूठी गिर गई। वह पान खाकर फिर सो गया ॥५८॥ फिर वह राजपुत्री कमण्डलु पात्र को फेंकने गई लेकिन विधि के विधान से बाहर जानेपर चमकते हुए हार की कान्ति देख विस्मय को प्राप्त हो गयी ॥ ५९ ॥ उस घट में स्थित हार को अपने कंठ में धारण किया। कुछ रात अवशेष रही तो चिरायु का मामा उसे ले गया ॥६०॥ चिरायु के जाने के बाद वह वरपक्षीय जन सुकेतु को ले गये। मङ्गलागौरी ने

उस सुकेतु को देखा तो वह कहने लगी—यह मेरा स्वामी नहीं है ॥ ६१ ॥ सभी वरपक्षीय महानुभाव राजकन्या से कहने लगे हे शुभे, यह क्या कह रही हो। कोई यदि पहिचान हो तो कहो ॥६२॥ मङ्गलागौरी ने कहा—जिसने रात में नवरत्नों की निर्मित अंगूठी मुझे दी, वह अंगूठी इसकी अंगुली में पहना पहिचान करो ॥ ६३ ॥ रात में स्वामी पतिदेव

गौरी उवाचायं न मे पतिः ॥ ६१ ॥ तामूचुस्ते ततः सर्वे किमिदं भाषसे शुभे ॥ परिचायकमस्तीह किञ्चित्तो तद्वदस्व नः ॥ ६२ । मङ्गलागौर्युवाच ॥ मे दत्तं येन रात्रौ च नवरत्नाङ्गुलीयकम् ॥ अस्याऽङ्गुलौ तन्निक्षिप्य प्रेक्षध्वं परिचायकम् ॥ ६३ ॥ पत्या दत्तोऽस्ति मे हारो रात्रौ तद्रत्नसञ्चयः ॥ कीदृशोऽनेन वाच्योऽसौ प्रतिवारपरान्वितम् ॥ ६४ ॥ किञ्चाम्रसेचनं रात्रौ तत्पदं कुङ्कुमान्वितम् ॥ ऊरौ मे वर्तते तच्च सर्वे पश्यन्तु मा चिरम् ॥ ६५ ॥ किञ्च रात्रौ भाषणादि भक्षणादि च यत्कृतम् ॥ तदनेन च वक्तव्यं तदा स्यान्मे पतिः स्वयम् ॥ ६६ ॥

ने हार मुझे दिया है, उस हार के रत्नों की सुन्दरता कैसी है। यह तो देखो अन्य ही है ॥६४॥ रात्रि में आम्र सेचन के समय मेरे पतिदेव का केसर युक्त पैर मेरी जाँघ में लगा हुआ है सब लोग उसे भी देखें देरी न करें॥ ६५ ॥ रात्रि के समय जो बात चीत हुई तथा भोजन क्या हुआ उसे भी यह कहे तो मेरा पति होगा ॥ ६६ ॥ यों मङ्गला-

नहीं मिली। तब सब लोगों ने मना किया ॥ ६७ ॥ वरपक्षी सभी जैसे आये थे वैसे ही चले गये। मङ्गलागौरी के पिता श्रुतकीर्ति ने ॥ ६८ ॥ प्रसन्न चित्त से अन्न जल आदि का एक सत्र यज्ञ किया। तथा वरपक्षीय सब कथा कानोंकान सुनी ॥ ६९ ॥ स्वरूप के कुरूप हो जाने से आदर से किसी को ले आये थे। महल के बरामदे में चिक के भीतर

एवं श्रुत्वा तु तद्वाक्यं साधु साध्विति चाब्रवीत् ॥ एकस्यापि न योगोऽभूत्तदा सर्वैर्निषेधितः ॥ ६७ ॥ तदा ते वरपक्षीया जग्मुः सर्वे यथागतम् ॥ जनको मङ्गलागौर्याः श्रुतकीर्तिः कुरूद्वहः ॥ ६८ ॥ अन्नपानादिकं सत्रं चकार सुमहामनाः ॥ वरपक्षस्य वृत्तान्तः श्रुतः कर्णोपकर्णतः ॥ ६९ ॥ स्वरूपस्य कुरूपत्वादानीतः कश्चनादृतः ॥ स्थापयामास सौधे तु कन्यां जवनिकावृताम् ॥ ७० ॥ एवं गते हायने तु यात्रां कृत्वा समातुलः ॥ चिरायुः प्रययौ तत्र किं जातमवलोकितुम् ॥ ७१ ॥ तं सा जालान्तराद्दृष्ट्वा लोकोत्तरमुदान्विता ॥ पितरौ कथयामास मम भर्ता समागतः ॥ ७२ ॥ सुहृद्गणं समाहूय पूर्वोक्तं परिचायकम् ॥ दृष्ट्वा सर्वमपि ह्यस्मै ददौ

कन्या को राजा ने बैठाया ॥ ७० ॥ इस प्रकार एक साल यात्रा करते हुए अपने मामा के साथ वह फिर अपनी ससुराल का वृत्त देखने के लिये आया ॥ ७१ ॥ जब मङ्गलागौरी ने चिक के भीतर से उसे देखा तो लोकोत्तर प्रसन्न हो अपने माता-पिता से कहा—मेरे पति आ गये ॥ ७२ ॥ सुहृद्गणों को बुलाकर राजा ने पूर्व कही हुई सारी पहिचान देख पवित्र

मुसकान वाली पुत्री को चिरायु के लिये दिया ॥७३॥ शिष्ट लोगों के सहित राजा ने विवाहोत्सव कर वस्त्राभरण आदि अश्व, गज, रथ ॥ ७४ ॥ तथा बहुत सी चीज दे विदा किया । फिर वह चिरायु अपनी पत्नी एवं मामा के सहित ॥ ७५ ॥ कुलनन्दन सेना के सहित अपने नगर गया । जब चिरायु के माता और पिताजी ने प्राणियों के मुखारविन्द से

कन्यां शुचिस्मिताम् ॥ ७३ ॥ शिष्टैः परिणयोत्साहं कारयामास भूपतिः ॥ वस्त्राण्याभरणादीनि सेनामश्वान्गजान्रथान् ॥ ७४ ॥ प्रस्थापयामास नृपो दत्त्वाऽन्यदपि भूरिशः ॥ पत्न्या सह चिरायुः स मातुलेन समन्वितः ॥ ७५ ॥ स्वपुरं सेनया सार्धं जगाम कुलनन्दनः ॥ श्रुत्वा जनमुखात्तस्य आगतं पितरावुभौ ॥ ७६ ॥ विश्वासं लेभतुर्नैव स्यात्कथं दैवमन्यथा ॥ एतस्मिन्नन्तरे प्राप्तः पित्रोरन्तिकमेव सः ॥ ७७ ॥ पपात पादयोर्भक्त्या पित्रोः स्नेहपरिप्लुतः ॥ मूर्ध्न्यवघ्राय तं पुत्रं परमं मुदमापतुः ॥ ७८ ॥ स्नुषापि मङ्गलागौरी श्वशुरौ प्रणनाम सा ॥ अङ्के निवेश्य तां श्वश्रूः पप्रच्छोदन्तमञ्जसा ॥ ७९ ॥ स्नुषापि मङ्गलागौर्या व्रतमाहात्म्यमुत्तमम् ॥

उसके आने का समाचार सुना ॥ ७६ ॥ तो विश्वास नहीं किया । क्योंकि भाग्य विपरीत कैसे हो सकता है । इसी मध्य में वह चिरायु माता तथा पिताजी के पास गया ॥ ७७ ॥ प्रेम मग्न हो चिरायु भक्ति द्वारा अपने माता-पिताजी के चरणों में प्रणाम किया । और माता पिता ने उस पुत्र चिरायु का मस्तक सूँघ परमानन्द प्राप्त किया ॥७८॥ मङ्गलागौरी

चरणों में प्रणाम किया। और माता पिता ने उस पुत्र विनय का मस्तक सूँघ परमानन्द प्राप्त किया ॥७८॥

पुत्रवधू ने भी सास और श्वसुर को प्रणाम किया। पुत्रवधू को सास ने अपनी गोदी में बैठाकर सब बात पूछी ॥७९॥ हे महामुने, मङ्गलागौरी पुत्रवधू ने श्रेष्ठ व्रतमाहात्म्य और जो कुछ इतिहास था, सब कहा ॥८०॥ शिव, सनत्कुमार से कहते हैं—हे सनत्कुमार, यह मङ्गलागौरी व्रत को आप से कहा। इसे जो भी सुनेगा या कीर्तन करेगा ॥ ८१ ॥ उसके

कथयामास तत्सर्वं यथावृत्तं महामुने ॥ ८० ॥ इत्येतत्कथितं तुभ्यं मङ्गलागौरिकाव्रतम् ॥ य एतच्छृणुयात्कश्चिद्यश्चापि परिकीर्तयेत् ॥ ८१ ॥ मनोरथास्तस्य सर्वे सिद्ध्यन्त्यत्र न संशयः ॥ ८२ ॥ सूत उवाच—सनत्कुमारमित्येवं कथयामास धूर्जटिः ॥ स चानन्दं परं लेभे श्रुत्वा कार्यकरं व्रतम् ॥ ८३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये मङ्गलागौरी-व्रतकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

ईश्वर उवाच—बुधगुर्वोरथो वक्ष्ये व्रतं पापप्रणाशनम् ॥ यत्कृत्वा श्रद्धया मर्त्यः परां सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १ ॥ प्रजापतिः शीतरश्मिं द्विजराज्येऽभ्यषेचयत् ॥ स कदाचिद्गुरोर्भार्यां

सभी मनोरथ सिद्ध होंगे, इसमें संशय नहीं है ॥ ८२ ॥ सूतजी ने कहा—हे ऋषिगण, भगवान् धूर्जटि ने सनत्कुमार से इस व्रत को कहा। सनत्कुमार भी कार्य की सिद्धि करनेवाले व्रत श्रवण कर परमानन्द को प्राप्त हो गये ॥८३॥

ईश्वर ने कहा—हे सनत्कुमार, अब पाप को नाश करनेवाले बुध तथा बृहस्पति के व्रत को कहूँगा, जिसे श्रद्धा युक्त कर प्राणी उत्तम सिद्धि प्राप्त करता है ॥१॥ ब्रह्माने चन्द्रमा को ब्राह्मणों के राज्यासन पर अभिषिक्त किया। किसी

काल में चन्द्रमा ने श्री बृहस्पति की "तारा" नामवाली पत्नी को देखा ॥ २ ॥ वह रूप यौवन सम्पन्न लावण्य मद गर्वित देख उसके रूप से मोहित हो कामबाण के वश में हो गया ॥ ३ ॥ अपने घर में रख चन्द्रमा ने गुरुपत्नी को बल से उपभोग किया। इस प्रकार बहुत काल बीत जानेपर उसे एक पुत्र हुआ ॥४॥ वह विद्वान् रूपशाली सर्व लक्षणोंसे

तारानाम्नीं ददर्श ह ॥ २ ॥ रूपयौवनसम्पन्नां लावण्यमदगर्विताम् ॥ मोहितो रूप सम्पत्त्या कामबाणवशं गतः ॥ ३ ॥ स्वगृहे स्थापयित्वा तु बलात्स बुभुजे च ताम् ॥ एवं बहुतिथे काले गते पुत्रो बभूव ह ॥ ४ ॥ बुधो विद्वान्रूपशाली सर्वलक्षणसंयुतः ॥ अन्वेषयन्गुरुः पत्नीं ज्ञातवाञ्शशिसद्मनि ॥ ५ ॥ ययाचे देहि मे भार्यां त्वं कथं गुरुतल्पगः ॥ गुरुतल्पकृतात्पापा-न्निष्कृतिस्ते कथं भवेत् ॥ ६ ॥ महापातकसंयोगे कथं ते बुद्धिरादृता ॥ गुरुमेव प्रयच्छे मां गुरुभार्यां मम प्रियाम् ॥ ७ ॥ प्रायश्चित्तं च रहसि कृत्वा निष्कल्मषो भव ॥ नोचेदिन्द्रसमीपे ते आगः संकथयाम्यहम् ॥ ८ ॥ इत्येवं बहुधोक्तोऽपि न ददौ तां कलङ्कितः ॥ तदा देवसभां

युक्त बुध नाम से प्रसिद्ध हुआ। बृहस्पति अपनी पत्नी को खोजते हुए चन्द्रमा के घर में गये ॥५॥ चन्द्रमा से कहा— मेरी पत्नी दे दो। गुरु पत्नी के साथ तुमने कैसे गमन किया। गुरुतल्प पाप से तेरा कैसे छुटकारा होगा ॥ ६ ॥ इस

को एकान्त में कर पाप से रहित हो। यदि ऐसा न करोगे तो इन्द्र सभा में तेरे इस पाप को कहूँगा ॥ ८ ॥ यों कहने पर भी बृहस्पति से कलङ्कित चन्द्रमा ने गुरु पत्नी तारा को नहीं दी। तो देवसभा में जाकर बृहस्पति ने इस वार्ता को कहा ॥९॥ मेरी पत्नी को चन्द्रमा ने हरण कर लिया है और वह माँगने पर भी मेरी पत्नी नहीं देता। हे इन्द्र ! आप

गत्वा कथयामास गीष्पतिः ॥ ९ ॥ चन्द्रेण मे ह्यपहता भार्या तां न ददाति सः ॥ देवराजोऽसि शक्र त्वं दापनीया त्वयाज्ञया ॥ १० ॥ नोचेत्त्वां तत्कृतं पापं सङ्क्रमिष्यत्यसंशयम् ॥ राजा राष्ट्रकृतं पापं भुङ्क्ते शास्त्रविनिर्णयात् ॥ ११ ॥ दुर्बलस्य बलं राजा पुराणे त्विति भण्यते ॥ इति श्रुत्वा गुरोर्वाक्यं चन्द्रमाहूय वासवः ॥ १२ ॥ आज्ञापयामास रुषा देहि भार्यां गुरोर्विधो ॥ अन्यदाराभिगमनं त्वं महापातकं भवेत् ॥ १३ ॥ गुरुदाराभिगमनं महापातकसंज्ञितम् ॥ तस्माच्चन्द्र गुरोर्भार्यां देहि त्वमविचारयन् ॥ १४ ॥ देवेन्द्रवचनं श्रुत्वा निशापतिरथाब्रवीत् ॥

देवराज हैं। आप मेरी पत्नी को अपनी आज्ञा से दिला दें ॥ १० ॥ अन्यथा चन्द्रमाकृत पाप आप को होगा इसमें संशय नहीं क्योंकि राज्य का पाप शास्त्र के निर्णय से राजा को भोगना ही पड़ता है ॥ ११ ॥ दुर्बल का बल राजा है यह पुराण में कहा है। गुरु की वार्ता सुनकर इन्द्र ने चन्द्रमा को बुलवाया ॥ १२ ॥ क्रोध से आज्ञा दी हे चन्द्र, गुरु बृहस्पति की पत्नी को दो। अन्य की पत्नी के साथ गमन करना केवल पाप कहा है ॥ १३ ॥ गुरुपत्नी के संग

गमन महापाप कहा है। अतः हे चन्द्र ! गुरु की भार्या को बिना विचारे ही दो ॥१४॥ इन्द्र की वाणी को सुन निशापति ने कहा आप की आज्ञा से भार्या को देता हूँ पर पुत्र को न दूँगा ॥ १५ ॥ यह मेरे से उत्पन्न है। मेरे वैभव से सम्पन्न है। इस बात पर बृहस्पति ने कहा यह पुत्र मेरे से उत्पन्न है। इसमें देवता गण को संशय उत्पन्न हो गया ॥ १६ ॥

दास्ये त्वदाज्ञया भार्यां पुत्रं नैव ददाम्यहम् ॥ १५ ॥ मत्सकाशात्सुतो जातो मम वैभवयुग्यतः ॥ गीष्पतिस्त्वाह मत्तोऽभूत्ततः संशयिताः सुराः ॥ १६ ॥ ततस्ते निर्णयं चक्रुर्माता जानाति चाङ्गजम् ॥ पप्रच्छुस्ते तदा तारां केनायं गर्भ आहितः ॥ १७ ॥ सत्यं वदस्व कल्याणि न मिथ्या वक्तुमर्हसि ॥ तदा लज्जान्विता तारां औरसोऽयं विधोः सुतः ॥ १८ ॥ गीष्पतेः क्षेत्रजश्चातो योग्यः स्यात्तस्य दीयताम् ॥ शाश्वतस्ते विचार्याथ ददुश्चन्द्राय तं बुधम् ॥ १९ ॥ तदा खिन्नं गुरुं दृष्ट्वा ददौ देवो वरं तयोः ॥ गच्छस्व त्वं चन्द्र गृहे तवाप्यस्ति सुनो ह्ययम्

देवताओं ने यह विचारा किसके शरीर से पुत्र पैदा है इस वार्ता को माता जानती है। देवताओं ने बृहस्पति की पत्नी तारा से पूछा किसके द्वारा गर्भ रहा है ॥१७॥ हे कल्याणि, सत्य कहना तुम मिथ्या वाणी मत कहना। लज्जा से सम्पन्न तारा ने कहा चन्द्रमा का औरस पुत्र है ॥१८॥ बृहस्पति का क्षेत्रज पुत्र है। आप लोग जिसे सुयोग्य जाने उसे दें। ऐसी

... यह पुत्र तुम्हारा है ॥ २० ॥ चन्द्रमा

देवों ने दोनों को वर दिया। चन्द्रमा से कहा कि हे चन्द्र, तुम घर जाओ। यह पुत्र तुम्हारा है ॥ २० ॥ चन्द्रमा तथा बृहस्पति पुत्र ग्रह होगा। हे सुराचार्य, और भी शुभ वर को ग्रहण करो ॥ २१ ॥ जो मेधावी दोनों का मिलकर एक साथ व्रत करेगा उसे सब सिद्धि होगी यह सत्य है इसमें संशय नहीं है ॥२२॥ शंकर के प्रिय श्रावण महीने के प्राप्त

॥ २० ॥ चन्द्रस्य गीष्पतेश्चायं ग्रहत्वं यात्वसौ सुतः ॥ अन्यच्चापि सुराचार्य गृहाणेमं वरं शुभम् ॥ २१ ॥ यः करिष्यति मेधावी मिलित्वा युवयोर्व्रतम् ॥ तस्य स्यात्सकला सिद्धिः सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २२ ॥ श्रावणे मासि सम्प्राप्ते शङ्करस्य महाप्रिये ॥ बुधगुर्वोर्वासरयोर्ये करिष्यन्ति पूजनम् ॥ २३ ॥ नैवेद्यं दधिभक्तेन साधने मूलकं भवेत् ॥ युवयोर्मूर्तिमालिख्य स्थानभेदात्फलं लभेत् ॥ २४ ॥ बाला दोलोपरिस्थाने लिखित्वा पूजयेद्यदि ॥ स पुत्रं लभते दीर्घायुषं सर्वगुणान्वितम् ॥ २५ ॥ कोशागारे लिखित्वा तु पूजयेद्यदि मानवः ॥ तस्य कोशा विवर्धन्ते क्षीयन्ते न कदाचन ॥ २६ ॥ पाकागारे पाकवृद्धिर्देवागारे तु तत्कृपा ॥ शय्यागारे

होने पर बुध और गुरुवार दिन जो अर्चन करेंगे ॥ २३ ॥ दोनोंकी मूर्ति लिख नैवेद्य दही भात दें, स्थान भेद से फल भेद होता है ॥ २४ ॥ जो मूर्ति को झूले पर लिख अर्चन करता है वह दीर्घायु तथा सम्पूर्ण गुणों से युक्त पुत्र प्राप्त करता है ॥ २५ ॥ जो प्राणी खजाने में मूर्ति लिख यदि अर्चन करेगा तो उसके खजाने की अभिवृद्धि होती है तथा

उसका क्षय नहीं होता ॥ २६ ॥ पाकशाला में लिख अर्चन से पाक वृद्धि और देवागार में लिख अर्चन से देव की दया होती है। शयनगृह में लिख अर्चन करने से स्त्री का वियोग कभी नहीं होता है ॥ २७ ॥ धान्यगृह में अर्चन से धान्य की वृद्धि हो जाती है। इस तरह तत्तत्स्थान में उसका फल होता है। सात साल व्रत कर उद्यापन करे ॥ २८ ॥

पूजने तु स्त्रीवियोगी न कर्हिचित् ॥ २७ ॥ धान्यागारे धान्यवृद्धिरेवं तत्तत्फलं लभेत् ॥
सप्तवर्षाणि कृत्वेवं तत उद्यापनं चरेत् ॥ २८ ॥ अधिवास्याह्नि पूर्वस्मिन्रात्रौ जागरणं चरेत् ॥
सुवर्णप्रतिमां कृत्वा पूजयित्वा यथाविधि ॥ २९ ॥ उपचारैः षोडशभिस्ततो होमं समाचरेत् ॥
तिलैराज्येन चरुणा तथैवं च समिद्भिः ॥ ३० ॥ अपामार्गाश्वत्थमयैस्ततः पूर्णाहुतिं चरेत् ॥
स्वस्रीयमातुलौ चैव भोजनीयौ प्रयत्नतः ॥ ३१ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेदन्यान्भुञ्जीत स्वयमेव च ॥
एवं कृते सप्तवर्षं सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ३२ ॥ विद्याकामनया कुर्याद्वेदशास्त्रार्थविद्भवेत् ॥

पहले रोज अधिवसान कर रात में जागरण करे। सोनेकी प्रतिमाका निर्माण करा विधि द्वारा अर्चन करे ॥२९॥ सोलह उपचार द्वारा अर्चन कर होम करे। तिल, घी तथा खीर प्रज्वलित अग्नि में दे ॥ ३० ॥ चिचिड़ा, तथा पीपल की समिधा से होम कर पूर्णाहुति करे। मामा तथा भानजे को अच्छा भोजन करा ॥ ३१ ॥ अन्य ब्राह्मणों को भोजन कराये

कामना वाला करता है तो वेद तथा शास्त्र के अर्थ का जानकार होता है। उसे बुध ज्ञान और गुरु गुरुता देते हैं॥३३॥ सनत्कुमार ने शंकर से कहा—हे भगवन्, आपने जो मामा तथा भानजे को भोजन कराओ कहा—इसमें कहना उचित हो तो इसके कारण को आप कहें ॥ ३४ ॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, पहले समय में दोनों

बुधस्तु बुधतां दद्याद्गुरुस्तु गुरुतां तथा ॥ ३३ ॥ सनत्कुमार उवाच–भगवन्यत्त्वया प्रोक्तं भोज्यौ स्वस्रीयमातुलौ ॥ एतन्निमित्तं कथय यदि वक्तुं क्षमं भवेत् ॥ ३४ ॥ ईश्वर उवाच–पुरा कौचिद्-द्विजन्मानौ दीनौ स्वस्रीयमातुलौ ॥ दरिद्रौ पर्यटन्तौ तावुदरार्थं कृतश्रमौ ॥ ३५ ॥ कस्मिंश्चिन्नगरे रम्ये गतौ धान्यं प्रयाचितुम् ॥ गृहे गृहे पश्यतां तौ श्रावणे मासि तद्व्रतम् ॥ ३६ ॥ तत्तद्वारे व्रतं तत्तद् बुधगुर्वोर्न कुत्रचित् ॥ अन्योऽन्यं तौ तदा तत्र विचारं चक्रतुश्चिरात् ॥ ३७ ॥ वासराणां तु सर्वेषां व्रतं सर्वत्र दृश्यते ॥ बुधगुर्वोर्विना तस्मादावाभ्यां तद्व्रतं शुभम् ॥ ३८ ॥ अनुच्छिष्टं

दरिद्र मामा और भानजा थे। वे दोनों भोजन के लिए घूमते हुए थक गये ॥ ३५ ॥ किसी सुन्दर नगर में दोनों धान्य माँगने के लिए गये। उन्होंने प्रत्येक मकान में श्रावण महीने में उसी व्रत को देखा ॥ ३६ ॥ हर एक वार के व्रत को करते हुए देखा, पर बुध तथा गुरु का कहीं व्रत नहीं देखा। उस समय उन लोगों ने बहुत काल तक आपस में विचार किया ॥३७॥ सब जगह सूर्य तथा अन्य वारों का व्रत देखा जा रहा है, पर बुध और गुरुवार का व्रत देखने में कहीं नहीं

आया, अतः हम दोनों बुध तथा गुरु का व्रत करें ॥३८॥ क्योंकि किसी ने इस व्रत को नहीं किया, अतः यह अनुच्छिष्ट व्रत है। इसे सादर करें, पर व्रत विधान न जानने से फिर दोनों संशयापन्न हो गये ॥ ३९ ॥ तब उसी रात में उन दोनों को स्वप्न में विधि ज्ञात हुई। स्वप्न से ज्ञात विधि द्वारा व्रत को दोनों ने किया तथा बड़ी सम्पत्ति प्राप्त

यतश्चास्ति तस्मात्कर्तव्यमादरात् ॥ विध्यज्ञानात्परं तस्य संशयं प्रापतुः पुनः ॥ ३९ ॥ तावत्तस्यां निशायां तु स्वप्नोऽभूद्विधिदर्शनः ॥ तथा तौ चक्रतुः पश्चात्परां सम्पदमापतुः ॥ ४० ॥ प्रत्यह वृद्धिगा चाभूत् सम्पत्तिः सर्वगोचरा ॥ एवं कृत्वा सप्तवर्षं पुत्रपौत्रादिसंयुतौ ॥ ४१ ॥ साक्षाद्भूतौ बुधगुरू वरं च ददतुस्तयोः ॥ आवाभ्यामावयोर्यस्माद्व्रतमेतत्प्रवर्तितम् ॥ ४२ ॥ इति चास्य तस्माद्यः करिष्यति शुभं व्रतम् ॥ स्वस्रीयमातुलौ तेन भोजनीयौ प्रयत्नतः ॥ ४३ ॥ एतद्व्रतप्रभावेण सर्वसिद्धिः परा भवेत् ॥ अन्ते चास्मल्लोकवासो यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥ ४४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये बुधगुरुव्रतकथनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥

की ॥ ४० ॥ वह ऐश्वर्य दिनों दिन बढ़ता नजर आने लगा। इस प्रकार सात साल तक व्रत कर वे पुत्र, पौत्र आदि से सम्पन्न हो गये ॥ ४१ ॥ प्रत्यक्ष हो बुध तथा गुरु उन दोनों को वर दिया। आप लोगों ने इस व्रत का सुविचार किया ॥४२॥ अतः आज से इस शुभ व्रत को जो करेगा, वह निश्चय मामा तथा भानजे को भोजन करावेगा ॥ ४३ ॥ इसके

ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, अब शुक्रवार की कथा कहूँगा। जिसे प्राणी श्रद्धा से सुनकर समस्त पिपत्ति से छूट जाता है ॥ १ ॥ इसमें प्राचीन इतिहास कहते हैं। पाण्ड्य वंश में उत्पन्न एक सुशील नाम वाला राजा था ॥ २ ॥ उसने बहुत प्रयत्न करे लेकिन पुत्र नहीं हुआ। उसकी सुकेशी नाम की पत्नी सर्व गुणों से युक्त

ईश्वर उवाच—अतः परं प्रवक्ष्यामि शुक्रवारकथानकम् ॥ यच्छ्रुत्वा श्रद्धया मर्त्यो मुच्यते सर्वसङ्कटात् ॥ १ ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ सुशीलो नाम राजा सीत्पाण्ड्यवंशसमुद्भवः ॥ २ ॥ बहुप्रयत्नशीलोऽपि अपत्यं नैव चाप्तवान् ॥ तस्य भार्या सुकेशीति नाम्ना सर्वगुणान्विता ॥ ३ ॥ अपत्यं न यदा लेभे महाचिन्तामवाप सा ॥ स्त्रीस्वभावात्तदा वस्त्रखण्डानि प्रतिमासिके ॥ ४ ॥ बद्ध्वोदरं महच्चक्रे महासाहसमानसा ॥ अन्वेषयद् गर्भिणी सा स्वप्रसूत्यनुसारिणीम् ॥ ५ ॥ भाविना दैवयोगेन गृहिणी तत्पुरोधसः ॥ गर्भिण्यासीत्तदा राज्ञः पत्नी कपटकारिणी ॥ ६ ॥ प्रसूतिकारिणीं कांचित्तत्कार्ये सा न्ययोजयत् ॥ दत्त्वा बहुधनं

थी ॥ ३ ॥ पुत्र जब नहीं प्राप्त हुआ तो वह महती चिन्ता ग्रस्त हुई वह स्त्री-स्वभाव के कारण प्रत्येक महीने में कपड़े के टुकड़ों को ॥ ४ ॥ अपने उदर में बाँध पेट की वृद्धि करती थी। इस तरह साहस के कारण स्व प्रसूति के अनुसार सुकेशी गर्भिणी को खोजती रही ॥ ५ ॥ प्रारब्ध से पुरोहित की पत्नी को उसने देखा। उस समय वह गर्भिणी

थी । कपटी राजा की पत्नी ने ॥ ६ ॥ प्रसव समय में दाई के कार्य करने वाली अन्य किसी स्त्री को इस काम के लिये ठीक किया । उस सूतिका को एकान्त में बहुत धन दिया । तथा अपने गर्भ के अनुकरण की सारी बातें कह सुनायीं ॥ ७ ॥ राजा ने इश्वर अपनी पत्नी रानी को गर्भवती जान पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयन बड़े प्रसन्न मन से

तस्यै सूतिकायै रहोगता ॥ ७ ॥ राजा चक्रे पुंसवनं तथैवानवलोभनम् ॥ सीमन्तोन्नयने काले महाहर्षसमन्वितः ॥ ८ ॥ तस्याः प्रसूतिसमयं श्रुत्वा सापि तथाकरोत् ॥ आद्यगर्भवती यस्मात्सा पुरोधः कुटुम्बिनी ॥ ६ ॥ अज्ञाप्रसूतिकाकृत्ये सूतिकावचने स्थिता ॥ तां सूतिका वञ्चयन्ती चक्रे तन्नेत्रबन्धनम् ॥ १० ॥ प्रेषयामास तं पुत्रं सा राजमहिषीं प्रति ॥ कस्यचिद्ध स्ततः शीघ्रमज्ञातमपि केनचित् ॥ ११ ॥ राज्ञी गृहीत्वा तं पुत्रं प्रसूतास्मीत्यघोषयत् ॥ पुरोधः स्त्रीनेत्रबन्धं मोक्षयामास सूतिका ॥ १२ ॥ सहानीतं मांसपिण्डं तस्यै प्रादर्शयच्च सा ॥ विस्मयं

किया ॥ ८ ॥ पुरोहित की पत्नी का प्रसव का समय नजदीक आया सुन उसी तरह रानी ने भी वचन रूपी कार्य किया । पुरोहित की स्त्री प्रथम गर्भवती थी ॥ ६ ॥ प्रसूति की बात जानती नहीं थी । अतः दाई की वाणी का पालन करती थी पुरोहित की स्त्री के वंचना करने के लिए दाई ने उसके नेत्र बाँध दिये ॥ १० ॥ उत्पन्न पुत्र को राज-महिषी के समीप किसी के द्वारा भेजवाया । इस प्रकार पुत्र राजमहिषी के समीप जाना कोई नहीं जान सका ॥ ११ ॥

रानी ने पुत्र ग्रहण कर कहा मुझे लड़का हुआ सब जगह खबर करी। इधर दाईं ने पुरोहित पत्नी के नेत्र बन्धन खोले ॥ १२ ॥ वह अपने साथ मांस की एक पिण्डी लाई थी पुरोहित पत्नी को उसी पिण्डी को दिखाया तथा विस्मय और खेद युक्त वाणी को भी प्रसूतिका आप हीं कहने लगी ॥ १३ ॥ यह अरिष्ट हुआ है इसकी शान्ति पतिदेव से कहकर

चैव खेदं च स्वयं चक्रे तदग्रतः ॥ १३ ॥ किमरिष्टमिदं जातं पत्या कार्यं च शान्तिकम् ॥ सन्ततिर्नास्ति चेन्मास्तु स्वदिष्ट्या जीवितासि भोः ॥ १४ ॥ परं संशयिता सासीत्प्रसवस्पर्शचिन्तनात् ॥ १५ ॥ ईश्वर उवाच—राजा श्रुत्वा पुत्रजन्म जातकर्माद्यकारयत् ॥ गजानश्वान्रथांश्चैव ब्राह्मणेभ्यो ददौ नृपः ॥ १६ ॥ बद्धान्कारागृहे सर्वान्मोचयामास हर्षितः ॥ सूतकान्ते नामकर्मसंस्कारान्सर्वतोऽकरोत् ॥ चक्रे प्रियव्रत इति नाम पुत्रस्य भूमिपः ॥ १७ ॥ श्रावणे मासि सम्प्राप्ते पुरोधोदयिता सती ॥ जीवन्तिकां शुक्रवारे पूजयामास भक्तितः ॥ १८ ॥ कुडचे

करवाना। पुत्र नहीं हुआ तो न सही। परन्तु आप भाग्य से जीती रही ॥ १४ ॥ प्रसव स्पर्श चिन्ता पुरोहित पत्नी को हुई। क्या इसने कपट किया यों सन्दिग्धावस्था में थी ॥ १५ ॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—राजा ने पुत्र की उत्पत्ति सुनी तो जातकर्म संस्कार आदि कर ब्राह्मणों को गज, अश्व, रथ आदि दान दिया ॥ १६ ॥ जो बंदी बंधे जेलखाने में थे उन्हें प्रसन्नता पूर्वक छोड़ सूतकान्त में नामकरण आदि संस्कार किये। राजा ने उसका प्रियव्रत

यह नाम रखा ॥ १७ ॥ श्रावण महीने के आ जाने पर पुरोहित की पत्नी ने शुक्रवार के दिन 'जीवन्तिका' का भक्ति द्वारा अर्चन किया ॥ १८ ॥ दिवाल में बहुत लड़कों के सहित जीवन्तिकामूर्ति लिखवा पुष्पमाला से अर्चन कर पाँच दीपक जलाये ॥ १९ ॥ गेहूँ के पिसान के दीपक बना कर उनमें दीपक जलाती तथा आप भी गेहूँ के पिसान के दीपक

विलिख्य तन्मूर्तिं बहुबालसमन्विताम् ॥ पुष्पमालिकया पूज्य पञ्चदीपैरदीपयत् ॥ १९ ॥ गोधूम पिष्टसम्भूतैस्तानभक्षयत स्वयम् ॥ अक्षतांश्चैव चिक्षेप यत्र मे बालको भवेत् ॥ २० ॥ तत्र त्वया रक्षणीयो जीवन्ति करुणार्णवे ॥ इति प्रार्थ्य कथां श्रुत्वा नमश्चक्रे यथाविधि ॥ २१ ॥ जीवन्तिकाप्रसादेन दीर्घायुर्बालकोऽभवत् ॥ ररक्ष तमहोरात्रं देवी तन्मातृगौरवात् ॥ २२ ॥ एवं काले गते राजा कालधर्ममुपेयिवान् ॥ पितृभक्तोऽथ तत्पुत्रश्चक्रे तत्साम्परायिकम् ॥ २३ ॥ प्रियव्रतोऽभिषिक्तोऽभूद्राज्ये मन्त्रिपुरोहितैः ॥ पालयित्वा प्रजां राज्यं भुक्त्वा स कतिचित्समाः ॥ २४ ॥

को घृत में पकाकर भोजन किया ॥ २० ॥ अक्षत फेंक कहा—जहाँ भी मेरा लड़का हो हे करुणानिधे, हे जीवन्ति, वहाँ उसे रक्षित रखना । यों प्रार्थना कर कथा श्रवण कर यथाविधि नमस्कार किया ॥ २१ ॥ जीवन्तिका के प्रसाद से बालक दीर्घायु हुआ । उस रोज से जीवन्तिका देवी उस पुत्र की मातृ गौरव से रक्षा रात दिन करने लगी ॥ २२ ॥ यों कुछ काल बीतने पर राजा मर गये पितृभक्त पुत्र ने पारलौकिक क्रिया पिताकी की ॥ २३ ॥ फिर मन्त्री पुरोहितों ने प्रियव्रत

काल बीतने पर राजा मर गये पितृभक्त पुत्र ने पारलौकिक क्रिया पिताकी की ॥ २३ ॥ फिर मन्त्री पुरोहितों ने पितृभक्त

को राज्यसिंहासन पर बैठा दिया। उसने प्रजा की रक्षा तथा कुछ काल तक राज्य कर ॥ २४ ॥ राज्य का भार वृद्ध मन्त्रियों को दे पितृऋण से मुक्ति प्राप्त करने के लिये भक्ति द्वारा गया जाने की इच्छा की ॥ २५ ॥ उसने राजवेष छोड़ कार्पटिक वेष बनाकर यात्रा की। रास्ते में किसी पुरी के किसी गृहस्थी के मकान में ॥ २६ ॥ निवास किया।

पितृऋणस्य विमोक्षाय गयां गन्तुं प्रचक्रमे ॥ राज्यभारममात्येषु स्थाप्य वृद्धेषु भक्तितः ॥ २५ ॥ राजभावं परित्यज्य वेषं कार्पटिकं दधे ॥ मार्गमध्ये क्वचित्पुर्यां कस्यचिद् गृहमेधिनः ॥ २६ ॥ चक्रे वासं गृहे तस्य प्रसूता गृहिणी त्वभूत् ॥ पुरा षष्ट्याः पञ्चमेऽह्नि तत्पुत्राः पञ्चमारिताः ॥ २७ ॥ तदापि पञ्चमदिनमासीत्तत्र नृपो गतः ॥ रात्रौ सुप्ते नृपे षष्ठी बालं नेतुं समागता ॥ २८ ॥ जीवन्त्या वारिता सा तु नृपमुल्लंघ्य मा व्रज ॥ षष्ठी निषेधाज्जीवन्त्या सा जगाम यथागता ॥ २९ ॥ जीवितं पञ्चमदिने बालं लेभे गृहाधिपः ॥ एतत्प्रभावः प्रायोऽयं प्रार्थयामास तं नृपम् ॥ ३० ॥

उसी रोज उसकी पत्नी को पुत्र हुआ। उसके पूर्व उसके पाँच पुत्र को क्रमशः पाँचवे रोज षष्ठी देवी मार लेती थी ॥२७॥ पर इस लड़के के हो जाने पर पाँचवें रोज राजा वहाँ गया था। राजा ने शयन किया तो जब रात में षष्ठीदेवी बालक ग्रहण करने आई ॥ २८ ॥ तो षष्ठीदेवी को देख जीवन्तिका ने कहा कि हे—षष्ठीदेवी, इस राजा को लांघकर मत जाओ यों जीवन्तिका के मना करने पर जैसे षष्ठी देवी आई वैसे ही खाली चली गई ॥ २९ ॥ उसने पाँचवें रोज पुत्र को

जीवित देख और लड़के के राजा को जीवन दाता जान राजा से प्रार्थना किया ॥ ३० ॥ हे राजन्, आज के रोज मेरे मकान पर आप ठहरें। क्योंकि हे प्रभो, आपकी दया से यह मेरा छठवाँ पुत्र जीवित है ॥ ३१ ॥ ऐसी प्रार्थना गृहस्थ की सुन प्रियव्रत ने वहाँ निवास किया। फिर गया जाकर पिण्ड देने लगा ॥ ३२ ॥ वहाँ विष्णुपद पर पिण्ड को देते

राजन्नद्यतने चाह्नि तव वासोऽस्तु मे गृहे ॥ तव प्रसादान्मे बालः षष्ठोऽयं जीवितः प्रभो ॥ ३१ ॥
एवं सम्प्रार्थितस्तेन उवास करुणानिधिः ॥ ततो गतो गयां राजा प्रवृत्तः पिण्डपातने ॥ ३२ ॥
विष्णुपदे तत्र किञ्चिद्दृत्वाश्चर्यमभूत्तदा ॥ पिण्डस्य ग्रहणार्थं हि निःसृतं तु करद्वयम् ॥ ३३ ॥ परं
विस्मयमापन्नः संशयं प्राप भूपतिः ॥ ब्राह्मणानुमतः पश्चात् पिण्डं विष्णुपदे ददौ ॥ ३४ ॥
पप्रच्छ ब्राह्मणं कञ्चिज्ज्ञानिनं सत्यवादिनम् ॥ स चाह ब्राह्मणस्तस्मै पितृद्वयकराविमौ ॥ ३५ ॥
किमिदं तद्गृहे गत्वा मात्रे पृच्छ वदिष्यति ॥ ततश्चिन्तातुरो दुःखी हृदि नानाविचारयत् ॥ ३६ ॥

हुए आश्चर्य हुआ पिण्ड ग्रहण के लिए दो हाथ निकल पड़े ॥ ३३ ॥ ऐसी घटना देख वह भूपति विस्मय तथा सन्देह करने लगा। क्या करूँ ब्राह्मणाज्ञा से राजा ने विष्णुपद पर ही पिण्ड दिया ॥ ३४ ॥ फिर किसी सत्यवादी ज्ञानी ब्राह्मण से पूछा क्यों ऐसी बात हुई। उसके पूछने पर उस ब्राह्मण देव ने कहा—हे राजन्, ये दोनों हाथ पिता के हैं ॥३५॥ ऐसा क्यों हुआ इसकी जानकारी माता के पास में जाकर पूछो। इसकी बातें माता ही कहेगी। राजा चिन्ता तथा दुःखी मन में

क्यों क्या इसकी जानकारी माता से घर में जाकर पूछो । इसकी बातें माता ही कहेगी । राजा चिन्ता तथा दुःखी मन में

अनेक तरह के विचार करने लगा ॥ ३६ ॥ यात्रा पूरी कर जहाँ लड़का राजा के पहुँचने से जीवित हुआ वहाँ जाकर उसी दिन उस गृहस्थी के घर पाँचवाँ रोज पुत्रजन्म का था वही स्त्री प्रसूता थी ॥ ३७ ॥ इस दूसरे लड़के के हो जाने पर रात के समय षष्ठीदेवी पुत्र को ग्रहण करने आई । षष्ठी देवी को जीवन्तिका ने पुनः मना करी तो षष्ठी देवी जीवन्तिका से

यात्रां कृत्वा तत्र यातो यत्राऽसौ जीवितः शिशुः ॥ तदापि पञ्चमदिनमासीत्सैव प्रसूतिका ॥ ३७ ॥ द्वितीयोऽप्यभवत्पुत्रो रात्रौ षष्ठी समाययौ ॥ पुनश्च जीवन्तिकया निषिद्धा साब्रवीच्च ताम् ॥ ३८ ॥ एतस्यावश्यकं किं ते एतन्माता च किं व्रतम् ॥ क्रियते हि यतस्त्वं च एनं रक्षस्यहर्निशम् ॥ ३९ ॥ षष्ठीवाक्यमिति श्रुत्वा जीवन्ती प्राह सुस्मिता ॥ तन्निमित्तं निशि द्रष्टुं जाग्रदासीन्मृषा स्वपन् ॥ ४० ॥ संवादमुभयो राजा सुश्राव सकलं तदा ॥ श्रावणे भृगुवारे तु एतन्माता ममार्चने ॥ ४१ ॥ व्रतस्य नियमं सर्वं कुरुते तं वदामि ते ॥ परिधत्ते न वसनं हरितं कञ्चुकीं तथा ॥ ४२ ॥

कहने लगी ॥ ३८ ॥ हे जीवन्तिके, इसकी आप को क्या आवश्यकता रहती है तथा कौन-सा व्रत इसकी माँ करती है । जिस कारण आप रातो दिन इसकी रक्षा करती हैं ॥ ३९ ॥ षष्ठीदेवी की ऐसी वाणी सुन जीवन्तिका कुछ हँसती हुई कहने लगी । राजा भी रात को इस निमित्त की जानकारी के लिए जागा हुआ था । सोने का बहाना किए हुए था ॥ ४० ॥ उसी समय राजा ने उन दोनों की सब बात सुनी । हे षष्ठी देवी, इसकी माँ श्रावण महीने के शुक्रवार के

रोज मेरा पूजन ॥ ४१ ॥ तथा व्रत के सब नियम करती है उसी नियम को मैं आप से कहती हूँ। इसकी माँ हरे वर्ण का कपड़ा तथा चोली नहीं ग्रहण करती ॥ ४२ ॥ और हरे वर्ण का काच का बना भी अपने हाथों में ग्रहण नहीं करती। धोवन के जल चावल को कभी नहीं लाँघती ॥ ४३ ॥ हरे पल्लव के मण्डप के नीचे नहीं जाती न करेला का

न धारयति तद्वर्णां काचकङ्कणकं करे ॥ कदापि नोल्लङ्घयति तण्डुलक्षालनोदकम् ॥ ४३ ॥ नैव गच्छत्यधस्ताच्च हरित्पल्लवमण्डपम् ॥ कूष्कलस्य च शाकं सा नाश्नाति हरिवर्णतः ॥ ४४ ॥ सर्वमेव मम प्रीत्यै मारयिष्यामि मा सुतम् ॥ श्रुत्वा सर्वं नृपः प्रातर्जगाम स्वपुरं प्रति ॥ ४५ ॥ प्रत्युद्गता नागरिका देशिकाः सर्व एव हि ॥ पप्रच्छ मातरं राजा त्वया जीवन्तिकाव्रतम् ॥ ४६ ॥ क्रियते तु कथं मातर्न वेद्मीति च साब्रवीत् ॥ साद्गुण्यार्थं तु यात्रायां ब्राह्मणांश्च सुवासिनीः ॥ ४७ ॥ इच्छन्नृपो भोजयितुं व्रतं चापि परिक्षितुम् ॥ सुवासिनीभ्यो वस्त्राणि

साग हरे वर्ण का हो जाने से खाती ॥ ४४ ॥ यही सब मेरी राजी के लिये करती है इस कारण इसकी मैं निरन्तर रक्षा करती हूँ तथा इस लड़के की भी सुरक्षा करती हूँ। यह सब राजा ने सुन सुवह अपने नगर में गया ॥ ४५ ॥ स्वागतार्थ वहाँ राजा के नगर वासी तथा देशवासी प्राणी आये। राजा ने माता से पूछा—हे मातः, आप जीवन्तिका व्रत करती हैं ॥ ४६ ॥ तो उसकी विधि क्या है। राजा के पूछने पर माँ ने कहा जीवन्तिका व्रत मैं नहीं जानती। राजा

व्रत करती हैं ॥ ४६ ॥ तो उसकी विधि क्या है । राजा के पूछने पर माँ ने कहा जीवन्तिका व्रत मैं नहीं जानती । राजा

ने गया यात्रा फल प्राप्त्यर्थ ब्राह्मणों तथा सुवासिनी ॥ ४७ ॥ को भोजन कराने की अभिलाषा कर उन सुवासिनी ब्राह्मणियों के यहाँ हरे वस्त्र, चोली और काँच के कङ्कण आदि परीक्षार्थ भेजवाया ॥४८॥ दूत ने वहाँ यह कहा आप सब राजा के घर में भोजनार्थ आवें । पुरोहित की पत्नी राजदूत से कहने लगी ॥४९॥ मैं हरे वर्ण की कोई चीज नहीं लेती । पुरोहित-पत्नी की ऐसी वाणी सुन राजा से दूत ने जाकर कहा ॥५०॥ राजा ने पुरोहित पत्नी के लिए रमणीक

कञ्चुक्यः कङ्कणानि च ॥ ४८ ॥ आगन्तव्यं भोजनार्थं सर्वाभी राजसद्मनि ॥ ततः पुरोधसः पत्नी तत्र दूतमुवाच ह ॥ ४९ ॥ हरिद्वर्णां मया किञ्चिद् गृह्यते न कदाचन ॥ दूतो निवेदयामास राज्ञे तस्याः प्रभाषितम् ॥ ५० ॥ राजा सर्वं रक्तवर्णां तस्यै सम्प्रेषयच्छुभम् ॥ अङ्गीकृत्य च तत्सर्वं सापि राजगृहं ययौ ॥ ५१ ॥ पूर्वद्वारे तण्डुलानां दृष्ट्वा क्षालनजं जलम् ॥ मण्डपं च हरिद्वर्णां दृष्ट्वाऽन्यद्वारतो ययौ ॥ ५२ ॥ राजा पुरोधसः पत्नी नत्वा पप्रच्छ चाखिलम् ॥ निमित्तं नियमस्यास्य सा प्रोवाच व्रतं भृगोः ॥ ५३ ॥ तं दृष्ट्वा तु तदात्यन्तं प्रस्तुतौ तत्पयो

लाल वर्ण के कपड़े आदि भेजे । पुरोहित पत्नी उन चीजों को ग्रहण कर राजा के घर गई ॥५१॥ उसने पूरब वाले दरवाजे पर धोवन जल चावल का तथा हरे वर्ण का मण्डप देख वह स्त्री अन्य दरवाजे से गई ॥५२॥ राजा ने यह देख पुरोहित पत्नी को नमस्कार किया और नियम पालन का कारण पूछा । पुरोहित-पत्नी ने शुक्रवार व्रत का

कारण बतलाया ॥ ५३ ॥ राजा को देख उसी समय उसके स्तन से दूध बहने लगा। उन स्तनों की दूध धारा से वह राजा अच्छी प्रकार सिञ्चित हो गया ॥ ५४ ॥ गयाजी में दो हाथ निकलने से तथा रास्ते में गृहस्थी के यहाँ देवी की बातचीत से और स्तनों से दूध बहने मात्र से राजा को विश्वास हो गया कि यह मेरी माँ है ॥५५॥ राजा गृह में रक्षा

धरौ ॥ राजानं तं सिषिचतुर्धाराभिः सर्वतस्तनौ ॥ ५४ ॥ गयायां करयुग्मेन देव्याः संवाद-
तस्तथा ॥ स्तनयो प्रस्रवाच्चैव राजा प्रत्ययमाप सः ॥ ५५ ॥ पालिकां मातरं गत्वा पप्रच्छ
विनयान्वितः ॥ मा भैर्मातर्ब्रूहि सत्यं वृत्तान्तं मम जन्मनः ॥ ५६ ॥ श्रुत्वा सुकेशिनी प्राह
यथातथ्येन सर्वशः ॥ हृष्टो भूत्वा नमश्चक्रे पितरौ स्वस्य जन्मदौ ॥ ५७ ॥ सम्पत्त्या वर्धयामास
तौ परां मुदमापतुः ॥ एकस्मिन्दिवसे राजा जीवन्तीं प्रार्थयन्निशि ॥ ५८ ॥ जीवत्ययं जन्मदो
गयायां च करौ कथम् ॥ तदा स्वप्नगता देवी प्राह संशयनाशकम् ॥ ५९ ॥ मया त्वत्प्रत्ययार्थे

करने वाली माँ के समीप जा बड़े विनय से पूछा—हे मातः, भय मत करो मेरे जन्म समय की ठीक बात कहो ॥ ५६ ॥ राजा के जन्म समय की बात सुकेशिनी ने तथ्य रूप से कह दी। राजा इससे प्रसन्न हो अपनी जन्म देने वाली माँ बाप को नमस्कार किया ॥ ५७ ॥ और सम्पत्ति देकर बढ़ाया इससे दोनों बड़े आनन्दित हुए। एक दिन रात में जीवन्तिका से राजा ने प्रार्थना की ॥ ५८ ॥ हे जीवन्तिके, मेरे जन्म देने वाले पिता मैं तो गया में क्यों दो हाथ निकले।

उसी समय स्वप्न में देवी ने संशय नाशकर देनेवाली वाणी को कहा ॥ ५९ ॥ हे राजन्, मैंने तुझे केवल विश्वास दिलाने के लिए ऐसी माया करी थी। इसमें सन्देह मत करना। शिव ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, यह

हिं कृता माया न संशयः ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं श्रावणे भृगुवासरे ॥ ६० ॥ एतद्व्रतमनुष्ठाय सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ६१ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये शुक्रवारजीवन्तिकाव्रतकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

ईश्वर उवाच—अतः परं प्रवक्ष्यामि मन्दवारविधिं तव ॥ सनत्कुमार यं कृत्वा मन्दत्वं नैव जायते ॥ १ ॥ श्रावणे मासि देवानां त्रयाणां पूजनं शनौ ॥ नृसिंहस्य शनेश्चैव अञ्जनीनन्दनस्य च ॥ २ ॥ कुड्पे स्तम्भेऽथवालिख्य नृसिंहप्रतिमां शुभाम् ॥ हरिद्रायुक्चन्दनेन

श्रावणमहिना शुक्रवार व्रत के सारे महात्म्य को कहा ॥ ६० ॥ इस व्रत को करने मात्र से प्राणी सब इच्छाओं को प्राप्त कर लेता है ॥ ६१ ॥

शिव ने सनत्कुमार के कहा—हे सनत्कुमार, अब मैं आप से शनिवार व्रत विधि कहूँगा। जिसके करने मात्र से प्राणी को मन्दता नहीं होती ॥ १ ॥ श्रावणमहीने में शनिवार रोज तीन देवताओं का अर्चन करे। नृसिंह, शनी तथा हनुमान का ॥ २ ॥ दीवाल या खम्भे में शुभ नृसिंह की प्रतिमा लिख लक्ष्मी सहित जगत्पति नृसिंह को हल्दी सहित

चन्दन ॥ ३ ॥ नीले, पीले फूलों से अर्चन कर खिचड़ी तथा हाथीचक साग के नैवेद्य का भोग लगावे ॥ ४ ॥ आप भी खिचड़ी आदि का प्रसाद भोजन कर ब्राह्मण भोजन करा भगवान नृसिंह को तिल तेल से या घी से नहलाना प्रीतियुक्त होता है ॥ ५ ॥ शनिवार को सब कामों में श्रेष्ठ तेल को कहा है । शनि के रोज ब्राह्मण तथा सुवासिनियों को

लक्ष्म्या सह जगत्पतिम् ॥ ३ ॥ सम्पूज्य नीलपुष्पैश्च रक्तैः पीतैश्च शोभनैः ॥ नैवेद्यं खिचड़ी संज्ञं शाकं कुञ्जरसंज्ञितम् ॥ ४ ॥ स्वयं चैव तदश्नीयाद् ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ॥ तिलतैलं घृतस्नानं नृसिंहस्य प्रियं भवेत् ॥ ५ ॥ शनैश्चरदिने तैलं प्रशस्तं सर्वकर्मसु ॥ अभ्यज्या ब्राह्मणास्तद्वत्सुवासिन्यस्तु तैलतः ॥ ६ ॥ स्वयमभ्यज्य च स्नायात्कुटुम्बसहितः शनौ ॥ माषान्नं च प्रकर्तव्यं प्रीणाति नरकेसरी ॥ ७ ॥ एवं चतुर्षु वारेषु श्रावणे मासि तद्व्रतम् ॥ कुर्वतस्तस्य सदने लक्ष्मी स्थिरतरा भवेत् ॥ ८ ॥ धनधान्यसमृद्धिश्च अपुत्रः पुत्रवान्भवेत ॥ इहलोके सुखं भुक्त्वा अन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ ९ ॥ दिग्व्यापिनी च सत्कीर्तिर्नृसिंहस्य प्रसादतः ॥

देह में तेल लगाने के लिए दे ॥ ६ ॥ शनिवार को आप सपरिवार शरीर में तेल लगाकर नहा कर उड़दी की बनी वस्तु भोजनार्थ बनावे । इससे भगवान नृसिंह प्रसन्न हो जाते हैं ॥ ७ ॥ इस तरह श्रावण महीने के चार शनि को शनि व्रत

होता है तथा इस संसार में सुख का आनन्द प्राप्त कर अन्त में वैकुण्ठ में जाता है ॥९॥ भगवान् नृसिंह के वर प्रसाद से उसकी दिगन्त व्यापिनी सुन्दर कीर्ति होती है। हे सौम्य, यह उत्तम व्रत मैंने भगवान् नृसिंह का आप से कहा ॥१०॥ इसी प्रकार शनि प्रीत्यर्थ व्रत करे। उसे आप सुनें। एक लंगड़ा ब्राह्मण या उसके अभाव में अन्य कोई ब्राह्मण

एतत्ते कथितं सौम्य नृसिंहव्रतमुत्तमम् ॥ १० ॥ एवं शनिप्रीणनाय कर्तव्यं तच्छृणुष्व भोः ॥ खञ्जं ब्राह्मणमेकं तु तदभावे तु कञ्चन ॥ ११ ॥ अभ्यज्य तिलतैलेन स्नापयेदुष्णवारिणा ॥ नृसिंहोक्तेन चान्नेन भोजयेच्छ्रद्धयान्वितः ॥१२॥ तैलं लोहं तिलान्माषान्दद्यात्कम्बलमेव च ॥ शनैश्चरप्रीणनाय शनिर्मे प्रीयतामिति ॥ १३ ॥ शनैश्चरस्याभिषेकं तिलतैलेन कारयेत् ॥ प्रशस्ता अक्षतास्तस्य पूजने तिलमाषयोः ॥ १४ ॥ ध्यानं तस्य च वक्ष्यामि शृणुष्वावहितो मुने ॥ शनैश्चरः कृष्णवर्णो मन्दः काश्यपगोत्रजः ॥ १५ ॥ सौराष्ट्रदेशसम्भूतः सूर्यपुत्रो

को ॥११॥ तिल का तेल लगाकर गरम पानी से स्नान करा श्रद्धा युक्त हो नृसिंह व्रत में कथित अन्न से भोजन करा ॥१२॥ शनि प्रीत्यर्थ तेल, लोहा, तिल, उरदी तथा कम्बल दान करे। इससे शनिदेव राजी होते हैं ऐसा कहे ॥१३॥ शनिदेव को तिल-तेल से नहला दे। शनि पूजन में तिल तथा उड़दी का अक्षत उत्तम माना है ॥१४॥ हे मुने, मैं शनिदेव का ध्यान कहूँगा। आप सावधान होकर सुनो। शनैश्चर का काला वर्ण है। मन्द गति तथा कश्यप गोत्र है

॥१५॥ शनि-जन्म सौराष्ट्रदेश है, सूर्यनारायण-पुत्र वर दाता हैं। मण्डल में दण्डाकार स्थित हैं। इन्द्रनील मणि तुल्य कान्तिमान हैं ॥१६॥ बाण, धनुष तथा त्रिशूलधारी हैं। सवारी गिद्ध की है यम अधिदेवता तथा ब्रह्मा प्रत्यधिदेवता हैं ॥१७॥ कस्तूरी अगरु चन्दन तथा गुग्गुल धूप और नैवेद्य में उड़द खिचड़ी प्रिय है। यह विधान

वरप्रदः ॥ दण्डाकृतिर्मण्डले स्यादिन्द्रनीलसमद्युत्तिः ॥ १६ ॥ बाणबाणासनधरः शूलधृग्गृध्र-वाहनः ॥ यमाधिदैवतश्चैव ब्रह्मप्रत्यधिदैवतः ॥ १७ ॥ कस्तूर्यगुरुगन्धः स्यात्तथा गुग्गुलुधूपकः ॥ कृसरान्नप्रियश्चैव विधास्यः परिकीर्तितः ॥१८॥ प्रतिमापूजने चास्य कार्या लोहमयी शुभा ॥ अस्योद्देशेन पूजायां दानं कृष्णां द्विजोत्तम ॥ १९ ॥ कृष्णवस्त्रयुगं दद्याद्द्याद्गां कृष्णवत्सकाम् ॥ एवं सम्पूज्य विधिवत्प्रार्थयेच्च स्तुवीत च ॥२०॥ यः पुनर्नष्टराज्याय नीलाय परितोषितः ॥ ददौ निजं महाराज्यं स मे सौरिः प्रसीदतु ॥२१॥ शनिं नीलाञ्जनप्रख्यं मन्दचेष्टाप्रसारिणम् ॥

मैंने कहा ॥१८॥ शनि के अर्चन में रमणीय लोहे की प्रतिमा निर्माण कर शनि के लिए अर्चन तथा दान में कृष्ण ब्राह्मण उत्तम है ॥१९॥ उसे दो काला कपड़ा काले वर्ण के बछवे सहित गौ दान दे। ऐसी विधि द्वारा अर्चन कर प्रार्थना तथा स्तुति करे ॥२०॥ राजा नील का जब राज्य विलय हो गया तो राजा नील ने शनिदेव की आराधना की थी तथा शनिदेव ने प्रसन्न हो फिर उसे राज्य प्रदान किया। ऐसे मेरे ऊपर शनिदेव प्रसन्न हों ॥२१॥ नीलाञ्जन

के तुल्य कान्तिमान् अतिमन्द गामी, छाया नाम वाली स्त्री में सूर्य द्वारा उत्पन्न मैं शनिश्चर को नमस्कार करता हूँ ॥ २२ ॥ मण्डल कोण में स्थित पिंगल नामवाले शनिदेव को नमस्कार है। हे देवेश, मुझ अति दीन पर कृपा करो ॥ २३ ॥ इस तरह स्तुति द्वारा प्रार्थना कर वारंवार प्रणाम करे। शनिदेव के अर्चन में शन्नो देवी इस मन्त्र का

छायामार्तण्डसम्भूतं तन्नमामि शनैश्चरम् ॥ २२ ॥ नमस्ते कोणसंस्थाय पिङ्गलाय नमोऽस्तु ते ॥ प्रसादं कुरु देवेश दीनस्य प्रणतस्य च ॥ २३ ॥ एवं स्तुत्या प्रार्थयित्वा प्रणमेच्च पुनः पुनः ॥ पूजने वैदिको मन्त्रः शन्नोदेवीरिति स्मृतः ॥ २४ ॥ त्रैवर्णानां च शूद्राणां नाममन्त्रः प्रकीर्तितः ॥ य एवं विधिना मन्दं पूजयेत्सुसमाहितः ॥ २५ ॥ तदीयं तु भयं तस्य स्वप्नेऽपि न भविष्यति ॥ एवमेतद् व्रतं विप्र ये करिष्यन्ति मानवाः ॥ २६ ॥ वासरे वासरे प्राप्ते श्रावणे मासि भक्तितः ॥ तेषां शनैश्चरकृतः पीडा लेशोऽपि नो भवेत् ॥ २७ ॥ प्रथमो वा द्वितीयो वा चतुर्थः पञ्चमोऽपि वा ॥ सप्तमश्चाष्टमो वापि नवमो द्वादशोऽपि वा ॥ २८ ॥ जन्मराशे

स्मरण करे ॥ २४ ॥ तीन वर्णों के लिए वैदिक मन्त्र तथा शूद्र के लिये नाममन्त्र कहा है। जो प्राणी सावधान मन से विधि द्वारा शनिदेव का अर्चन करता है ॥ २५ ॥ उसे स्वप्न में भी डर नहीं होता। हे विप्र, जो प्राणी इस तरह इस व्रत को करेंगे ॥ २६ ॥ जो श्रावण महीनेके हर शनिवार के रोज भक्तिसे अर्चन करेंगे उनके यहाँ शनि से प्राप्त पीड़ा

न होगी ॥२७॥ शनिजन्मराशि से पहले, दूसरे, चौथे, पाँचवें, सातवें, आठवें, नवें तथा बारहवें स्थान में ॥२७-२८॥ स्थित हों तो शनी नित्य पीड़ा करते हैं। उसके शान्त्यर्थ 'शमग्निः' इस मन्त्र का जप करे ॥ २९ ॥ शनि के प्रसन्नार्थ इन्द्रनील मणि का दान करे। अब हनुमान् के प्रसन्नार्थ विधि कहूँगा ॥ ३० ॥ श्रावण महीने के शनि रोज हनुमान के

स्थितो मन्दः पीडां च कुरुते सदा ॥ शमग्निरिति मन्त्रस्य तत्प्रसादे जपो मतः ॥ २९ ॥ इन्द्रनीलमणेर्दानं प्रदद्यात्तस्य तुष्टये ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि हनुमत्तुष्ट्ये विधिम् ॥ ३० ॥ शनिवारे श्रावणे च अभिषेकं समाचरेत् ॥ तिलतैलैः रुद्रमन्त्रेण हनुमत्प्रीणनाय च ॥३१॥ तैले मिश्रितासिन्दूर-लेपं तस्य समर्पयेत् ॥ जपाकुसुममालाभिरर्कमालाभिरेव च ॥ ३२ ॥ मालाभिर्मान्दराभिश्च वटकानां तथैव च ॥ पूजयेदञ्जनीपुत्रं तथान्यैरुपचारकैः ॥ ३३ ॥ यथाविधि यथावित्तं श्रद्धाभक्ति समन्वितः ॥ जपेद् द्वादश नामानि हनुत्प्रीतये बुधः ॥३४॥ हनुमानञ्जनीसूनुर्वायुपुत्रो महाबलः ॥ रामेष्टः फाल्गुनसखः पिङ्गाक्षोऽमितविक्रमः ॥ ३५ ॥ उदधिक्रमणश्चैव सीताशोकविनाशकः ॥

प्रीत्यर्थ अभिषेक तिल तैल द्वारा रुद्रमन्त्रों से करे ॥३१॥ तेल मिश्रित सिन्दूर को उनकी देह में लगा दे। जपा, अर्क, ॥३२॥ तथा मन्दार माला से अर्चन कर नैवैद्य के लिये उड़द का बड़ा तथा उपचारों द्वारा अर्चन करे ॥३३॥ यथाशक्ति विधि भक्ति श्रद्धा द्वारा अर्चन करे। हनुमान के प्रीत्यर्थ बारह नामों का जप करे ॥ ३४ ॥ हनुमान, अंजनीसुत, वायुपुत्र,

महाबल, रामेष्ट, फाल्गुनसखा, पिंगाक्ष, अमितविक्रम ।। ३५ ।। उदधिक्रमण, सीताशोकविनाशक, लक्ष्मणप्राणदाता तथा दशग्रीवदर्पहा ।। ३६ ।। इन बारह नामों को जो सुबह उठकर पढ़ता है उस प्राणी का कभी अशुभ नहीं होता तथा उसे संपूर्ण ऐश्वर्य मिलते हैं ।। ३७ ।। इस तरह श्रावण महीने के शनिवार को जो प्राणी हनुमान् की आराधना कर लेता है

लक्ष्मणप्राणदाता च दशग्रीवस्य दर्पहा ।। ३६ ।। द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।।
नाशुभं जायते तस्य सर्वसम्पत्प्रजायते ।। ३७ ।। श्रावणे मन्दवारे तु एवमाराध्य वायुजम् ।।
वज्रतुल्यशरीरः स्यादरोगो बलवान्नरः ।। ३८ ।। वेगवान्कार्यकरणे बुद्धिवैभवभूषितः ।।
शत्रुः सङ्क्षयमाप्नोति मित्रवृद्धिः प्रजायते ।। ३९ ।। वीर्यवान्कीर्तिमांश्चैव प्रसादादञ्जनीजनेः ।।
आञ्जनेयालये लक्षं हनुमत्कवचं पठेत् ।। ४० ।। अणिमाद्यष्टसिद्धीनां साधकः स्वामितामियात् ।।
यक्षराक्षसवेताला दर्शनात्तस्य वेगतः ।। ४१ ।। पलायन्ते दशदिशः कम्पिता भयविह्वलाः ।।

उसकी देह वज्र के तुल्य, आरोग्य और बली होती है ।।३८।। कार्य के करने में वेगवान् होता है वह बुद्धि वैभव से विभूषित हो जाता है। आगे शत्रु-नाश तथा मित्र वृद्धि होती है ।। ३९ ।। अञ्जनी पुत्र के प्रसाद मात्र से पराक्रमी तथा कीर्तिशाली होता है । हनुमान् के देवालय में जो प्राणी हनुमत्कवच का एक लाख पाठ करता है ।। ४० ।। वह अणिमा आदि सिद्धियों का साधक हो जाता है तथा उसके दर्शन से यक्ष, राक्षस और वेताल जल्दी ।। ४१ ।। भय से दश दिशाओं

में विह्वल हो काँपते हुए पलायित हो जाते हैं। शनि के रोज पीपल का स्पर्श तथा अर्चन करे ॥४२॥ हे सत्तम, शनि दिन के अतिरिक्त अन्य किसी भी वारों में पीपल का स्पर्श न करे। शनि दिन पीपल के स्पर्श करने से सब ऋद्धियाँ बढ़ती हैं। वैसे तो पीपल का अर्चन सातों दिन करे परन्तु उसमें श्रावण महीने में अधिक रूप से अर्चन करे ॥ ४३ ॥

अश्वत्थालिङ्गनं चैव अश्वत्थस्य च पूजनम् ॥ ४२ ॥ मन्दभिन्ने न कर्तव्य स्पर्शोऽश्वत्थस्य सत्तम ॥ शनावालिङ्गनं तस्य सर्वसम्पत्समृद्धिदम् ॥ पूजनं सप्तवारेषु तत्रापि श्रावणेऽधिकम् ॥ ४३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये शनैश्चरनृसिंहहनुमत्पूजनादिशनैश्चरकृत्यकथनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

सनत्कुमार उवाच—वारव्रतानि सर्वाणि त्वत्तो देव श्रुतानि मे ॥ तव वागमृतं पीत्वा तृप्तिर्मे नैव जायते ॥ १ ॥ श्रावणेन समो मासो नास्त्यन्यः प्रतिभाति मे ॥ अथातस्तिथिमाहात्म्यं कथयस्व जगत्प्रभो ॥ २ ॥ ईश्वर उवाच—मासानां कार्तिकः श्रेष्ठस्तस्मान्माघः परो

सनत्कुमारजी ने शिवजी से कहा—हे देव, आप से मैंने सभी वारव्रतों को सुना। हे देव, आपकी वाणी रूप अमृत पान करने पर भी मुझे तृप्ति नहीं होती ॥ १ ॥ मुझे इस श्रावण मास के तुल्य अन्य महीना नहीं मालूम होता है। हे जगत्प्रभो, अब तिथि माहात्म्य कहिये ॥२॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, सब महीनों में कार्तिक महीना

हे जगत्प्रभो, अब तिथि माहात्म्य कहिये ॥२॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, सब महीनों में कार्तिक महीना

उत्तम है। उससे माघ महीना उत्तम है, उससे वैशाख महिना उत्तम है। उससे उत्तम भगवान् हरि को मार्गशीर्ष महीना प्रिय है ॥ ३ ॥ विश्वरूप ने अपने प्रिय इन चार मासों को कहा और बारह मासों में श्रावण महीना शिव रूप बताया ॥ ४ ॥ श्रावण महीने की सब तिथियाँ व्रतवाली कहीं। उनके प्रधान रूप से श्रेष्ठ तिथि को आप से मैं कहता हूँ ॥ ५ ॥

मतः ॥ ततोऽपि माधवः श्रेष्ठः सद्दाश्चापि हरिप्रियः ॥ ३ ॥ विश्वरूपेण चत्वारो मासाश्चैते मम प्रियाः ॥ द्वादशेष्वपि मासेषु श्रावणः शिवरूपकः ॥ ४ ॥ तिथयः श्रावणे मासि सर्वाश्च व्रत-संयुताः ॥ प्राधान्यतस्तथापि त्वां वच्मि काश्चित्सुशोभनाः ॥ ५ ॥ तिथिवारविमिश्रं तु व्रतं मासे वदामि ते ॥ प्रतिपच्छ्रावणे मासि यदा सोमयुता भवेत ॥ ६ ॥ सोमवारास्तदा पञ्च पतन्त्यत्र हि मासिके ॥ रोटकाख्यं व्रतं तत्र कर्तव्यं श्रावणे नरैः ॥ ७ ॥ सार्धमासत्रयं वापि रोटकाख्यं व्रतं भवेत् ॥ लक्ष्मीवृद्धिकरं प्रोक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ ८ ॥ विधानं तस्य वक्ष्यामि शृणुष्वावहितो मुने ॥ श्रावणस्य सिते पक्षे प्रतिपत्सोमवासरे ॥ ६ ॥ प्रातः सङ्कल्पये-

सब बार तिथि मिश्रित से जो मास के व्रत हैं उन्हें कहता हूँ। श्रावण महीने की प्रतिपदा तिथि सोमवार युक्त हो तो ॥६॥ उस महीने में पाँच सोमवार होंगे ऐसे योग का 'रोटक व्रत' नाम होगा। उस दिन प्राणी व्रत करें ॥ ७ ॥ या साढ़े तीन महीने का भी 'रोटक व्रत' होता है। यह रोटक व्रत लक्ष्मी वृद्धि करने वाला सम्पूर्ण कामनाओं और सिद्धि

को देनेवाला होता है ॥ ८ ॥ हे मुने, मैं उस विधान को कहूँगा आप एकाग्र मन से सुनें। श्रावण महीने के शुक्लपक्ष में प्रतिपदा सोमवार दिन ॥९॥ सुबह उठ ज्ञानी 'रोटकव्रत' का संकल्प करे। हे सुरश्रेष्ठ, आज से रोटकव्रत मैं करूँगा। हे जगद्गुरो, मुझपर आप कृपा करें ॥ १० ॥ यों सङ्कल्प कर प्रतिदिन शिव का अर्चन करे। अखण्डित बिल्वपत्र,

द्विद्वान्करिष्ये रोटकव्रतम् ॥ अद्यारभ्य सुरश्रेष्ठ कृपां कुरु जगद्गुरो ॥ १० ॥ दिने दिने प्रकर्तव्या पूजा देवस्य शूलिनः ॥ बिल्वपत्रैरखण्डैश्च तुलसीपत्रकैस्तथा ॥ ११ ॥ नीलोत्पलैश्च कमलैः कह्लारैः कुसुमैस्तथा ॥ चम्पकैर्मालतीपुष्पैः कुविन्दैरर्कपुष्पकैः ॥ १२ ॥ अन्यैर्नानाविधैः पुष्पैर्ऋतुकालोद्भवैः शुभैः ॥ धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैः फलैर्नानाविधैरपि ॥ १३ ॥ नैवेद्यमर्पयेन्मुख्यं रोटकानां विशेषतः ॥ कर्तव्या रोटकाः पञ्च पुरुषाहारमानतः ॥ १४ ॥ द्वौ तु विप्राय दातव्यो द्वाभ्यां वै भोजनं मतम् ॥ एको देवाय दातव्यो नैवेद्यार्थं सदा बुधैः ॥ १५ ॥ शेषपूजां विधा-

तुलसीपत्र, ॥ ११ ॥ नीलकमल, कमल, कल्हार, कुसुम, चम्पा, मालती, कुन्द, अर्क आदि पुष्पों ॥ १२ ॥ तथा नाना प्रकार के अन्य ऋतुकालीन फूलों से, धूप, दीप, नैवेद्य तथा नाना प्रकार के फलों से अर्चन करे ॥ १३ ॥ मुख्य रूप से रोटों का नैवेद्य विशेष समर्पण करे। पुरुषाहार नाप से पाँच रोटक बनावे ॥ १४ ॥ दो रोटक ब्राह्मण को उनमें से दे आप दो रोटक भोजन करे। एक रोटक नैवेद्यार्थ शिव को दे देवे ॥ १५ ॥ अवशिष्ट अर्चन कर ज्ञानी अर्घ दे।

केला, नारिकेल, जम्बीरी, बिजोरा निंबू ॥१६॥ खजूर, ककड़ी, दाख, नारिंगी, मातुलिङ्ग अखरोट, अनार और ऋतु में होने वाले फलों को ॥ १७ ॥ अर्घ्यदान में उत्तम कहा है। उसका पुण्यफल सुनो। जो सात सागर के सहित भूमि दान करता है जो उसका फल होता है ॥१८॥ वह इस व्रत के सविधि करने मात्र से प्राप्त कर लेता है। अतुल धनार्थी पाँच

याथ अर्घ्यं दद्याद्विचक्षणः ॥ रम्भाफलं नारिकेलं जम्बीरं बीजपूरकम् ॥ १६ ॥ खर्जूरी कर्कटी द्राक्षा नारिङ्गं मातुलुङ्गकम् ॥ अक्षोटकं च दाडिम्बं यच्चान्यदृतुसम्भवम् ॥ १७ ॥ प्रशस्तमर्घ्यं दाने स्यात्तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ सप्तसागरसंयुक्तां भूमिं दत्त्वा तु यत्फलम् ॥ १८ ॥ तत्फलं समवाप्नोति व्रतं कृत्वा विधानतः ॥ पञ्चवर्षं प्रकर्तव्यमतुलं धनमीप्सुभिः ॥ १९ ॥ पश्चादुद्यापनं कुर्याद्रोटकाख्यव्रतस्य तु ॥ उद्यापने तु कर्तव्यौ हेमरूप्यौ च रोटकौ ॥ २० ॥ पूर्वेद्युरधिवास्याथ प्रातर्होमं समाचरेत् ॥ सर्पिषा शिवमन्त्रेण बिल्वपत्रैश्च शोभनैः ॥ २१ ॥ एवं कृते व्रते तात सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ सनत्कुमार वक्ष्यामि द्वितीयायां व्रतं शुभम् ॥ २२ ॥ यत्कृत्वा श्रद्धया

साल तक इस व्रत को करे ॥ १९ ॥ रोटक-व्रतोद्यापन करे। उद्यापन में सोने के दो रोटक बनावे ॥२०॥ पहले रोज अधिवासन कर अन्य रोज सुबह शिवमन्त्र द्वारा घी तथा सुन्दर बिल्वपत्र से होम करे ॥ २१ ॥ हे तात, इस प्रकार व्रत करने पर सब कामना प्राप्त कर लेता है। हे सनत्कुमार, अब द्वितीया के शुभ व्रत कहूँगा ॥२२॥ जो श्रद्धा से करने वाला

प्राणी लक्ष्मीवान् तथा पुत्रवान् हो जाता है। औदुम्बर नामक व्रत सब पापों का नाश करनेवाला है ॥ २३ ॥ ज्ञानी श्रावण महीने के आ जाने पर शुभ तिथि द्वितीया में सुबह संकल्प कर विधिवत् व्रत करे ॥२४॥ स्त्री या पुरुष जो इस व्रत को करेंगे वे सब सम्पत्तियों के अधिकारी होंगे। इसमें साक्षात् गूलर (उदुम्बर) का अर्चन करे। गूलर न मिल सके

मर्त्यो लक्ष्मीवान्पुत्रवान् भवेत् ॥ उदुम्बराभिधं चैव तत् व्रतं पापनाशनम् ॥ २३ ॥ श्रावणे मासि सम्प्राप्ते द्वितीयायां शुभे तिथौ ॥ प्रातः सङ्कल्प्य विधिवद् व्रतं कुर्याद्विचक्षणः ॥ २४ ॥ नारी वाथ नरो वापि पात्रं स्यात्सर्वसम्पदाम् ॥ साक्षादुदुम्बरः पूज्यस्तदभावे तु कुड्यके ॥ २५ ॥ लिखित्वा पूजयेत्तत्र चतुर्भिर्नाममन्त्रकैः ॥ उदुम्बर नमस्तुभ्यं नमस्ते हेमपुष्पक ॥ २६ ॥ सजन्तु फलयुक्ताय नमो रक्ताण्डशालिने । तत्राधिदेवते पूज्ये शिवः शुक्रस्तथैव च ॥ २७ ॥ त्रयस्त्रिंशत्फलान्यस्यगृहीत्वा भागमाचरेत् ॥ एकादश ब्राह्मणाय दद्यात्तावन्ति दैवते ॥ २८ ॥ तावन्ति

तो दीवाल में गूलर वृक्ष ॥ २५ ॥ चित्र को लिख चार नाममन्त्रों से अर्चन करे। हे उदुम्बर, आपको नमस्कार है। हे हेमपुष्पक, आपको नमस्कार है ॥ २६ ॥ जन्तु-फल युक्त-लाल अण्ड तुल्य शालियुक्त आपको नमस्कार है। यों अर्चन कर उसमें शिव तथा शुक्र का अर्चन करे ॥ २७ ॥ गूलर के तैंतिस फलों का तीन हिस्सा करे। जिनमें से ग्यारह फल ब्राह्मण को तथा ग्यारह फल देवता को दे ॥ २८ ॥ आप ग्यारह फल ग्रहण कर भोजन करे। उस दिन अन्न का आहार

न करे। रात में शिव और शुक्र का अर्चन कर जागरण करे ॥ २९ ॥ हे तात, इस तरह ग्यारह साल व्रत करे। समाप्ति पर उद्यापन करे ॥ ३० ॥ उद्यापन में सोने का फल, पुष्प, फूल, पत्र आदि के सहित गूलर का पेड़ बना उस पेड़ में सोने से निर्मित शिव तथा शुक्र प्रतिमा का पूजन करे ॥ ३१ ॥ दूसरे रोज सुबह रमणीय कोमल छोटे-छोटे गूलर

स्वयमश्नीयान्नान्नाहारस्तु तद्दिने। शिवं शुक्रञ्च सम्पूज्य रात्रौ जागरणां चरेत् ॥ २९ ॥ एवं कृत्वा व्रतं तात वर्षाण्येकादशैव तु ॥ पश्चादुद्यापनं कुर्याद् व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥ ३० ॥ उदुम्बरः सुवर्णेन फलपुष्पदलान्वितः ॥ तत्र सम्पूजयेद्विद्वान्प्रतिमे शिवशुक्रयोः ॥ ३१ ॥ प्रातर्होमं चरेच्चैव उदुम्बरफलैः शुभैः ॥ कोमलैरल्पमात्रैश्च संख्यायाष्टोत्तरं शतम् ॥ ३२ ॥ उदुम्बरसद्भिश्च तिलैराज्यैश्च होमयेत् ॥ एवं समाप्य होमं तु आचार्यं पूजयेत्ततः ॥ ३३ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छत शक्तौ दशाथवा ॥ एवं व्रते कृते वत्स फलं यत्स्याच्छृणुष्व तत् ॥ ३४ ॥ बहुजन्तुफलो वृक्षो यथायं साधकस्तथा ॥ भवेदनेकसुतवान्वंशवृद्धिस्तथा भवेत ॥ ३५ ॥ हेमपुष्पैर्यथा वृक्षस्तथा

फलों से एक सौ आठ होम करे ॥ ३२ ॥ उदुम्बर की लकड़ी, तिल तथा घी से होम करे। होम समाप्त कर आचार्य का पूजन करे ॥३३॥ शक्ति के अनुसार सौ ब्राह्मण भोजन करावे। हे वत्स, इस तरह जो फल व्रत करने से होता है मैं उसको कहता हूँ सुनो ॥ ३४ ॥ हे वत्स, जैसे यह पेड़ बहुत जीव तथा फलों से युक्त है वैसे ही साधक बहुत पुत्रों वाला

हो तथा उसके वंश की वृद्धि हो ॥ ३५ ॥ जैसे सोने के फलों से युक्त पेड़ है वैसे व्रती भी लक्ष्मीवान् हो । अद्यावधि मैंने इस व्रत को किसी से नहीं प्रकाशित किया ॥ ३६ ॥ गोपनीय से भी गोपनीय इस व्रत को आप से कहा, इसमें संशय नहीं करना चाहिये । इस व्रत को भक्ति से करे ॥ ३७ ॥

लक्ष्मीप्रदो भवेत् ॥ अद्यावधि न कस्यापि व्रतमेतत्प्रकाशितम् ॥३६॥ गोप्याद्गोप्यतरं चैव तवाग्रे कथितं मया ॥ नैवात्र संशयः कार्यो भक्त्या चैतद्व्रतं चरेत् ॥ ३७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वर सनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये प्रतिपद्रोटकव्रतद्वितीयोदुम्बरव्रतकथनं नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥

ईश्वर उवाच—अतः परं प्रवक्ष्यामि स्वर्णगौरीव्रतं शुभम् ॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु तृतीयायां विधातृज ॥ १ ॥ प्रातः स्नात्वा नित्यकर्म कृत्वा सङ्कल्पमाचरेत् ॥ पार्वतीशङ्करौ पूज्यौ षोडशैरुपचारकैः ॥ २ ॥ देवदेव समागच्छ प्रार्थयेऽहं जगत्पते ॥ इमां मया कृतां पूजां गृहाण सुरसत्तम ॥ ३ ॥ :वायनानि प्रदेयानि दम्पतीभ्यस्तु षोडश ॥ भवान्याश्च महादेव्या व्रतसम्पूर्ण

ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे विधातृज, अब श्रावण महीने की शुक्लपक्ष की तृतीया तिथि का शुभ स्वर्णगौरी व्रत कहूँगा ॥ १ ॥ उस दिन सुबह स्नान तथा नित्यकर्म कर संकल्प करे । सोलह उपचार से पार्वती शंकर का अर्चन करे ॥ २ ॥ प्रार्थना करता हूँ—हे देवदेव, हे जगत्पते, हे सुरसत्तम, मेरे द्वारा हुई पूजा को आप स्वीकार करें ॥ ३ ॥

करे ॥ २ ॥ प्रार्थना करता हूँ—हे देवदेव, हे जगत्पते, हे सुरसत्तम, मेरे व्रत एवं पूजा को आप स्वीकार करें ॥ ३ ॥

महादेवी भवानी के व्रतपूर्ति के सोलह वायन दम्पतियों को दे ॥ ४ ॥ मैं भवानी के प्रीत्यर्थ तथा व्रतपूर्ति निमित्त उत्तम ब्राह्मण को देता हूँ। चावल पिसान से निर्मित सोलह पक्वान बाँस के सोलह पात्र में रख ॥ ५ ॥ वस्त्रों से युक्त कर सपत्नीक सोलह ब्राह्मणों को बुलाकर कहे—मैं व्रत की सम्पूर्णता, तथा फल प्राप्त्यर्थ देता हूँ ॥ ६ ॥ अलंकार आदि

हेतवे ॥ ४ ॥ प्रीयते द्विजवर्याय वायनं प्रददाम्यहम् ॥ धानाषोडशपक्वान्नैर्वेणुपात्राणि षोडश ॥ कुर्याद्वस्त्रादिभिर्युक्तान्याहूय द्विजदम्पतीन् ॥ व्रतसम्पूर्णतार्थं तु ब्राह्मणेभ्यो ददाम्यहम् ॥ ६ ॥ स्वलङ्कृताः सुवासिन्यः पातिव्रत्येन भूषिता ॥ मम कार्यसमृद्ध्यर्थं प्रतिगृह्णन्तु शोभनाः ॥ ७ ॥ एवं षोडश वर्षाणि अष्टौ चत्वारि वा पुनः ॥ एकवर्षं तु सद्यो वा कृत्वा चोद्यापनं चरेत् ॥ ८ ॥ पूजान्ते च कथां श्रुत्वा वाचकं सम्प्रपूजयेत् ॥ ९ ॥ सनत्कुमार उवाच—केन चीर्णं व्रतमिदं माहात्म्यं चास्य कीदृशम् ॥ उद्यापनं कथं कार्यं तत्सर्वं वद मे प्रभो ॥ १० ॥ ईश्वर उवाच—

सम्पन्न पातिव्रतधर्म युक्त शोभन सुवासिनी मेरा स्वीकार करें ॥ ७ ॥ इस प्रकार सोलह साल, आठ साल, चार या एक साल व्रत कर उसी समय उद्यापन करे ॥ ८ ॥ यों अर्चन की समाप्ति पर कथा श्रवण कर व्यास का अर्चन करे ॥ ९ ॥ सनत्कुमार ने शिव से कहा—हे प्रभो, किसने इस व्रत को किया। इसका क्या माहात्म्य है। इसका उद्यापन कैसे होगा, आप यह सब मुझसे कहें ॥ १० ॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे महाभाग, बहुत अच्छी बात आपने की।

मैं आपके समक्ष कहता हूँ। हे सनत्कुमार, यह स्वर्णगौरी नामवाला व्रत प्राणियों को सब सम्पत्ति देने वाला है ॥११॥ पूर्व समय सरस्वती नदी के किनारे सुविला नाम की सुप्रसिद्ध महापुरी थी। उसमें कुबेर के तुल्य चन्द्रप्रभ नाम वाला राजा था ॥ १२ ॥ उसके रूप तथा लावण्य से युक्त सौन्दर्य, मन्द-मुसकान युक्त मनोहर कमल सदृश नेत्रवाली महादेवी

साधु पृष्टं महाभाग कथयामि तवाग्रतः ॥ स्वर्णगौरीव्रतं नाम सर्वसम्पत्करं नृणाम् ॥ ११ ॥
पुरा सरस्वतीतीरे सुविलाख्या महापुरी ॥ तत्र चन्द्रप्रभो नाम राजाऽऽसीद्धनदोपमः ॥ १२ ॥
तस्याऽऽस्तां रूपलावण्ये सौन्दर्यस्मरविभ्रमे ॥ महादेवीविशालाख्ये द्विभार्ये कमलेक्षणे ॥ १३ ॥
तयोः प्रियतरा ज्येष्ठा तस्याऽऽसीन्नृपतेर्मता ॥ स कदाचिद्वनं भेजे मृगयाऽऽसक्तमानसः ॥ १४ ॥
सिंहशार्दूलवाराहवनमाहिषकुञ्जरान् ॥ हत्वा बभ्राम तृष्णार्तः स राजा विपिनं महत् ॥ १५ ॥
चक्रकारण्डवाकीर्णं चञ्चरीकपिकाकुलम् ॥ उत्फुल्लमल्लिकाजातिकुमुदोत्पलमण्डितम् ॥ १६ ॥

और विशाला नाम वाली दो स्त्रियाँ थीं ॥ १३ ॥ उनमें से राजा चन्द्रप्रभ को ज्येष्ठ महादेवी रानी अधिक प्रिया थी। एक रोज राजा शिकार करने की कामना से वन गया ॥ १४ ॥ वहाँ सिंह, शार्दूल, वराह, भैंसा, हाथी मारकर प्यास से दुःखी राजा उस बड़े वन में घूमने लगा ॥ १५ ॥ भ्रमर, चक्रवाक, कारण्डव, पपीहा, आदि जीवों से रङ्ग-बिरंग के भिन्नभिन्न कुमुद उत्पल आदि कमल, कलिका, चमेली आदि से युक्त ॥ १६ ॥ अप्सराओं के तालाब देख

उसके किनारे पर जा उत्तम जल उस तालाब का पी ॥ १७ ॥ अप्सरागणों को भक्ति युक्त गौरी का अर्चन करते देखा उन अप्सरागणों से कमलनेत्र वाले राजा ने पूछा क्या आप यह कर रही हैं ? ॥ १८ ॥ हे नृपोत्तम, हम स्वर्णगौरी व्रत करती हैं । यह प्राणियों को सब सम्पत्ति देनेवाला है । हे नृपोत्तम, आप भी इस व्रत को करें ॥ १९ ॥ राजा ने

अपूर्वमवनीशोऽसो ददर्शाप्सरसां सरः ॥ समासाद्य सरस्तीरं पीत्वा जलमनुत्तमम् ॥ १७ ॥ भक्त्या गौरीमर्चयन्तं ददर्शाप्सरसां गणम् ॥ किमेतदिति पप्रच्छ राजा राजीवलोचनः ॥ १८ ॥ स्वर्णगौरीव्रतमिदं क्रियतेऽस्माभिरुत्तमम् ॥ सर्वसम्पत्करं नृणां तत्कुरुष्व नृपोत्तम ॥ १९ ॥ राजोवाच— विधानं कीदृशं व्रतं किं फलं विस्तरान्मम ॥ ता ऊचुर्योषितः सर्वास्तृतीयायां नभोयुजि ॥ २० ॥ कर्तव्यं व्रतमेतद्धि स्वर्णगौरीतिसंज्ञितम् ॥ पार्वतीशङ्करौ पूज्यौ भक्त्या परमया मुदा ॥ २१ ॥ दोरकं षोडशगुणं बध्नीयाद्दक्षिणे करे ॥ नरो वामे तु नारीणां गले वा बन्धनं मतम् ॥ २२ ॥

कहा—हे देवियों, आप इसकी विधि तथा इसका फल भी विस्तार युक्त मुझसे कहें । उन स्त्रियों ने कहा—हे राजन्, श्रावण शुक्ला तीज के रोज ॥ २० ॥ यह व्रत स्वर्णगौरी नाम का किया जाता है । इसमें परम प्रसन्नता तथा भक्ति द्वारा पार्वती शङ्कर का पूजन किया जाता है ॥ २१ ॥ सोलह तार का डोरा अपने दाहिने हाथ में पुरुष और वाम हाथ में स्त्रियाँ या कण्ठ में बाँधे स्त्री और पुरुष सबों का ऐसा मत है ॥ २२ ॥ ये सुन चन्द्रप्रभ राजा ने भी व्रत कार्य को संपन्न

कर सविधि सोलह तार के डोरे को अपने दहिनी भुजा में बाँध व्रत स्वीकार किया ॥२३॥ राजा ने कहा देवदेवेशि, मैं इस डोरे को व्रत के लिए बाँधता हूँ। मेरे पर आप कृपा करें। इस तरह देवी का व्रतकर राजा अपने घर आ गया ॥२४॥ भुजा में डोरे को देख अति क्रोधित हो बड़ी रानी ने राजा से पूछा और उस डोरे को भुजा से तोड़ बाहर सूखे पेड़ पर

तत्कृत्वा सोऽपि जग्राह व्रतं नियतमानसः ॥ गुणैः षोडशभिर्युक्तं दोरकं दक्षिणे करे ॥ २३ ॥ बध्नामि देवदेवेशि प्रसादं कुरु मे वरम् ॥ एवं देव्या व्रतं कृत्वा आजगाम निजं गृहम् ॥ २४ ॥ पप्रच्छ दोरकं हस्ते दृष्ट्वा ज्येष्ठातिकोपना ॥ त्रोटयित्वा च चिक्षेप बाह्ये शुष्कतरूपरि ॥ २५ ॥ न कर्तव्यं न कर्तव्यमिति राज्ञि वदत्यपि ॥ तेन संस्पृष्टमात्रेण तरुः पल्लवितोऽभवत् ॥ २६ ॥ तद् द्वितीयां ततो दृष्ट्वा विस्मयाकुलिताऽभवत् ॥ तत्रस्थं दोरकं छिन्नं गृहीत्वा सा बबन्ध ह ॥ २७ ॥ ततस्तन्मासमाहात्म्यात्पत्युः प्रियतराऽभवत् ॥ ज्येष्ठा व्रतापचारेण सा त्यक्ता दुःखिता वनम् ॥ २८ ॥ प्रययौ सा महादेवी ध्यायन्ती मनसा च ह ॥ मुनीनामाश्रमे पुण्ये

फेंका ॥ २५ ॥ रानी से राजा ने कहा हे प्रिये ऐसा न कर, ऐसा न कर रानी यों मना करने पर भी नहीं मानी। वह सूखा पेड़ उस डोरे के स्पर्श से हरे पत्तों से सम्पन्न हो गया ॥ २६ ॥ इस बात को छोटी रानी ने देख आश्चर्य युक्त हो उस पेड़ से टूटे डोरे को ले अपने बायें भुजा में बाँधा ॥ २७ ॥ उस रोज से उस महीने के माहात्म्य मात्र से वह

छोटी रानी राजा को सर्वाधिक प्रिय हो गई। इधर ज्येष्ठ रानी व्रत अपमानित करने मात्र से राजा द्वारा त्यागित तथा दुःखी हो वन चली गई ॥ २८ ॥ वहाँ महादेवी का चित्त से ध्यान कर पवित्र मुनियों के स्थान में कहीं-कहीं निवास किया ॥ २९ ॥ पर श्रेष्ठ मुनियों ने उसे देख कर कहा—हे पापे, अभी चली जा। तिरस्कृत तथा दुःखी वह रानी घोर

निवसन्ती क्वचित्क्वचित् ॥ २९ ॥ निवारिता मुनिवरैर्गच्छ पापे यथासुखम् ॥ धावन्ती विपिनं घोरं निर्विण्णा निषसाद ह ॥ ३० ॥ ततस्तत्कृपया देवी प्रादुरासीत्तदग्रतः ॥ तां दृष्ट्वा दण्डवद्भूमौ नत्वा स्तुत्वा नृपप्रिया ॥ ३१ ॥ जय देवि नमस्तुभ्यं जय भक्तवरप्रदे ॥ जय शङ्कर वामाङ्गे जयमङ्गलमङ्गले ॥ ३२ ॥ ततो भक्त्या वरं लब्ध्वा गौरिमभ्यर्च्य तद् व्रतम् ॥ चक्रे तस्य प्रभावेण भर्ता तां चानयद् गृहम् ॥ ३३ ॥ ततो देव्याः प्रसादेन सर्वान्कामानवाप सा ॥ ततस्ताभ्यां नृपो राज्यं चक्रे सर्वं समृद्धिमान् ॥ ३४ ॥ अन्ते शिवपदं प्राप्तः गान्ताभ्यां सहितो

जङ्गल में घूमती हुई बैठ गई ॥३०॥ उसी समय दया से रानी के आगे देवी प्रकट हो गयी। देवी को नृप प्रिया रानी ने देख भूमि में दण्डवत् प्रणाम तथा स्तुति की ॥ ३१ ॥ हे देवि, आपकी जय हो, आपको नमस्कार हैं। हे भक्तवर-प्रदे, आपकी जय हो, हे शंकर वामांगे, आप की जय हो, हे मङ्गले मङ्गल रूपे, आपकी जय हो ॥ ३२ ॥ यों भक्ति के द्वारा देवी से वर प्राप्त कर गौरी-अर्चन तथा व्रत किया। व्रत प्रभाव से उस बड़ी रानी को राजा अपने घर ले आया

॥ ३३ ॥ देवी के वर प्रसाद से सब इच्छाओं को प्राप्त कर लिया। दोनों रानियों के सहित राजा ने संपूर्ण राज्य का उपभोग कर समृद्धिशाली हो गया ॥ ३४ ॥ अन्त में दोनों पत्नियों के सहित राजा शिवलोक चला गया ॥ ३५ ॥ शिवजी ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, जो यह शोभन पार्वती व्रत करता है वह मेरा तथा पार्वती का अत्यन्त ही

नृपः ॥ ३५ ॥ यः शोभनं व्रतमिदं कुरुते शिवायाः कुर्यान्मम प्रियतरो भविता च गौर्याः ॥ प्राप्य श्रियं सर्वाधिकां भुवि शत्रुसङ्घं निर्जित्य निर्मलपदं स शिवस्य याति ॥ ३६ ॥ एतस्यो द्यापनविधिं सावधानमनाः शृणु ॥ शुभे तिथौ शुभे वारे चन्द्रे ताराबलान्विते ॥ ३७ ॥ मण्डपेऽष्टदले पद्मे कुम्भं धान्योपरि न्यसेत् ॥ पूर्णपात्रं ताम्रमयं पलषोडशनिर्मितम् ॥ ३८ ॥ तिलपूर्णं तत्र देवीशङ्करप्रतिमे न्यसेत् ॥ श्वेतवस्त्रयुगाच्छन्नं श्वेतयज्ञोपवीतिनम् ॥ ३९ ॥ वेदोक्तेन प्रतिष्ठा च कर्त्तव्या तु यथाविधि ॥ सम्यक्पूजां तु सम्पाद्य रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ ४० ॥

प्रिय हो जाता है। इस भूमि में अधिक लक्ष्मी प्राप्त कर शत्रुदल को जीत अन्त में शिव के निर्मलपद प्राप्त कर लेता है ॥३६॥ हे सनत्कुमार, आप सावधान हो इस व्रत के उद्यापन विधि को सुनें। शुभ तिथि, शुभ वार, चन्द्रबल, ताराबल हो जाने पर ॥ ३७ ॥ मण्डप में अष्टदल कमल के ऊपर धान्य उसके ऊपर घट रखे। उस घड़े के ऊपर सोलह पल का बना ताँबे का पूर्णपात्र रखे ॥ ३८ ॥ उस पूर्णपात्र में तिल भर उस पर पार्वती शंकर प्रतिमा रख दो सफेद कपड़े और

श्वेत यज्ञोपवीत रखे ॥ ३९ ॥ यथाविधि वेद मन्त्रों से अच्छी प्रकार से प्रतिष्ठा कर पूजन कर रात में जागे ॥ ४० ॥
दूसरे रोज सुबह फिर पूजन कर होम करे। पहले ग्रह होम कर प्रधान होम करे ॥४१॥ तिल, यव मिश्रित कर, घी मिला
प्रधान आहुति एक हजार या एक सौ दे ॥ ४२ ॥ आचार्य की पूजा वस्त्र, अलंकार, धेनु आदि से करे। सोलह वायनों

प्रातः पूजां ततः कृत्वा ततो होमं समाचरेत् ॥ ग्रहहोमं पुरा कृत्वा प्रधानं जुहुयात्ततः ॥ ४१ ॥
तिलाश्च यवसम्मिश्रा आज्येन च परिप्लुताः ॥ द्रव्यप्रधाने संख्या तु सहस्रमथवा शतम् ॥ ४२ ॥
आचार्यं पूजयेत्पश्चाद्वस्त्रालङ्कारधेनुभिः ॥ वायनानि च देयानि ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ॥ ४३ ॥
दम्पतीन्भोजयेच्चैव संख्यया षोडशैव तु ॥ भूयसीं दक्षिणां दद्यात्स्वस्य वित्तानुसारतः ॥ बन्धुभिः
सह भुञ्जीत हर्षोत्सवसमन्वितः ॥ ४४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावण-
मासमाहात्म्ये तृतीयायां स्वर्णगौरीव्रतकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

सनत्कुमार उवाच—केन व्रतेन भगवान् सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥ पुत्रपौत्रधनैश्वर्यं

का दान कर ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥४३॥ सपत्नीक सोलह ब्राह्मणों को भोजन करा धनानुसार भूयसी दक्षिणा दे।
पश्चात् हर्षोत्सव युक्त बन्धुओं सहित भोजन करे ॥ ४४ ॥

सनत्कुमार ने शिव से कहा—हे भगवन्, किस व्रत से अतुल सौभाग्य होता है तथा प्राणी पुत्र, पौत्र, धन और

ऐश्वर्य प्राप्त कर सुख भोगता है। हे ईश्वर, मुझे व्रतों में उत्तम व्रत कहें ॥ १ ॥ यह सुन ईश्वर ने सनत्कुमारसे कहा—हे सनत्कुमार, त्रैलोक्य प्रसिद्ध दूर्वागणपति नाम का व्रत है। इसे श्रद्धा से भगवती पार्वती ने किया था ॥ २ ॥ हे मुनिसत्तम, इस व्रत को सरस्वती, इन्द्र, विष्णु, कुवेर, अन्य देव मुनि, गन्धर्व, किन्नर तथा पहले सबों ने किया

मनुजः सुखमेधते ॥ तन्मे वद महादेव व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच—अस्ति दूर्वा-गणपतेर्व्रतं त्रैलोक्यविश्रुतम् ॥ भगवत्या पुरा चीर्णं पार्वत्या श्रद्धया सह ॥ २ ॥ सरस्वत्या महेन्द्रेण विष्णुना धनदेन च ॥ अन्यैश्च देवैर्मुनिभिर्गन्धर्वैः किन्नरैस्तथा ॥ चीर्णमेतद् व्रतं सर्वैः पुराऽभून्मुनिसत्तम ॥ ३ ॥ चतुर्थी या भवेच्छुद्धा नभोमासि सुपुण्यदा ॥ तस्यां व्रतमिदं कुर्यात्सर्वपापौघनाशनम् ॥ ४ ॥ गजाननं चतुर्थ्यां तु एकदन्तविपाटितम् ॥ विधाय हेम्ना विघ्नेशं हेमपीठासने स्थितम् ॥ ५ ॥ तदा हेममयी दूर्वां तदाधारे व्यवस्थितम् ॥ संस्थाप्य विघ्नहर्तारं कलशे ताम्रभाजने ॥ ६ ॥ वेष्टिते रक्तवस्त्रेण सर्वतोभद्रमण्डले ॥ पूजयेद्रक्तकुसुमैः पतिताभिश्च

है ॥ ३ ॥ श्रावण मास के शुक्लपक्ष की पवित्र चतुर्थी के रोज सब पापों को नाश करनेवाले इस व्रत को करे ॥ ४ ॥ चतुर्थी रोज एक दांत गज के तुल्य मुख वाले गणेश की सोने की प्रतिमा निर्माण करा सोने के सिंहासन पर स्थापित करे ॥ ५ ॥ उस सिंहासन में सोने की दूर्वा बिछाकर ताँबे के कलश पर स्थापित करे ॥ ६ ॥ लाल कपड़ा बिछाकर

सर्वतोभद्र मण्डल का निर्माण कर उसपर कलश स्थापित करे। लाल फूल तथा पाँच पत्रों से पूजा करे ॥७॥ अपामार्ग शमी, दूर्वा, तुलसी, विल्वपत्र ऋतुकाल में होने वाले अन्य सुगन्धित फूलों से ॥ ८ ॥ नाना प्रकार के फल, आदि का नैवेद्य रख सोलह उपचार से गणेश की पूजा करे ॥ ९ ॥ यह प्रार्थना करे–इस सोने की निर्मित प्रतिमा में विघ्नेश का

पञ्चभिः ॥ ७ ॥ अपामार्गशमीदूर्वातुलसीबिल्वपत्रकैः ॥ अन्यैः सुगन्धैः कुसुमैर्यथालब्धैः सुगन्धिभिः ॥ ८ ॥ फलैश्च मोदकैः पश्चादुपहारं प्रकल्पयेत् ॥ यथावदुपचारैश्च पूजयेद् गिरिजासुतम् ॥ ९ ॥ प्रतिमायां स्वर्णमय्यां निर्मितायां यथाविधि ॥ आवाहयामि विघ्नेशमागच्छतु कृपानिधिः ॥ १० ॥ रत्नबद्धमिदं हैमं सिंहासनमनुत्तमम् ॥ आसनार्थमिदं दत्तं प्रतिगृह्णातु विघ्नराट् ॥ ११ ॥ उमासुत नमस्तुभ्यं विश्वव्यापिन् सनातन ॥ विघ्नौघं छिन्धि सकलं मम पाद्यं ददामि ते ॥ १२ ॥ गणेश्वराय देवाय उमापुत्राय वेधसे ॥ अर्घ्यमेतत्प्रयच्छामि गृहाण भगवन्मम ॥ १३ ॥ विनायकाय शूराय वरादय नमोनमः ॥ इदमाचमनीयं ते ददामि

आवाहन करता हूँ। यहाँ कृपानिधि आवें ॥१०॥ रत्नों से जड़ित उत्तम सोने का सिंहासन आसन के लिये देता हूँ। विघ्नराट इसे स्वीकार करें ॥११॥ हे उमासुत, हे विश्वव्यापिन्, हे सनातन, आपको नमस्कार है। मेरे विघ्न की राशि को नाश करें। आप को यह पाद्य देता हूँ ॥ १२ ॥। आप हे भगवन्, गणेश्वर, देव, उमासुत, विधाता, आपके लिये

इस अर्घ्य को देता हूँ। हे भगवन्, आप इसे स्वीकार करें ॥ १३ ॥ विनायक, शूर, वरद, गणेश को नमस्कार है, नमस्कार है। हे भगवन्, आपको आचमनीय देता हूँ, आप इसे स्वीकार करें ॥ १४ ॥ हे सुरपुङ्गव, प्रार्थना द्वारा स्नान के लिए सब तीर्थों का जल आप के लिये लाया हूँ। ऐसे जल को आप स्वीकार करें ॥ १५ ॥ सिन्दूर, केसर

प्रतिगृह्यताम् ॥ १४ ॥ गङ्गादिसर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाऽऽहृतम् ॥ स्नानार्थं ते मया दत्तं गृहाण च नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥ सिन्दूरेण यथा लक्ष्म कुङ्कुमैरञ्जितं मया ॥ वस्त्रयुग्ममिदं दत्तं गृहाण च नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥ लम्बोदराय देवाय सर्वविघ्नापहारिणे ॥ उमामङ्गलसम्भूतं चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥ १७ ॥ अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ रक्तचन्दनचर्चिताः ॥ मया निवेदिता भक्त्या गृहाण सुरसत्तम ॥ १८ ॥ चम्पकैः केतकीपत्रैर्जपाकुसुमसङ्ककैः ॥ गौरीपुत्रं पूजयामि प्रसीदतु ममोपरि ॥ १९ ॥ अनुग्रहाय लोकानां दानवानां वधाय च ॥ अवतीर्णः स्कन्दगुरुर्धूपं गृह्णातु

से रंगीन आप के लिये यह दो वस्त्र दिये हैं। हे भगवन्, आप स्वीकार करें। आप को नमस्कार है ॥ १६ ॥ उमामङ्गल सम्भूत, सब विघ्नों के नाश करनेवाले हैं, लम्बोदर देव इस चन्दन को आप स्वीकार करें ॥ १७ ॥ हे सुरश्रेष्ठ, लालचन्दन चर्चित इन अक्षतों को भक्ति से मैंने दिया है। हे सुरश्रेष्ठ, इसे आप स्वीकार करें ॥ १८ ॥ चम्पक, केतकी, जपा फूलों से गौरीपुत्र की मैं पूजा करता हूँ। वे मेरे पर प्रसन्न हों ॥ १९ ॥ लोकों के अनुग्रह के लिये

चम्पक, केतकी, जपा फूलों से गौरीपुत्र की मैं पूजा करता हूँ। वे मेरे पर प्रसन्न हों ॥१९॥ लोकों के अनुग्रह के लिये

तथा दानवों के वधार्थ हे स्कन्दगुरु आपका अवतार है। हे भगवन्, प्रसन्नता द्वारा इस धूप को आप स्वीकार करें ॥२०॥ परं ज्योति प्रकाशक, सर्व सिद्धि देनेवाले महादेव के आत्मज हैं, । इस दीपक को आपके लिये देता हूँ । नमस्कार है आप को ॥ २१ ॥ 'गणानां त्वा' इस वैदिक मन्त्र से लड्डू आदि तथा चतुर्विध अन्नों को और खीर लड्डू आदि

वै मुदा ॥ २० ॥ परञ्ज्योतिः प्रकाशाय सर्वसिद्धिप्रदाय च ॥ दीपं तुभ्यं प्रदास्यामि महादेवात्मने नमः ॥ २१ ॥ गणानान्त्वेति नैवेद्यमर्पयन्मोदकादिकम् ॥ अन्नं चतुर्विधं चैव पायसं लड्डुकादिकम् ॥ २२ ॥ कर्पूरैलादिसंयुक्तं नागवल्लीदलान्वितम् ॥ ताम्बूलं ते प्रदास्यामि मुखवासार्थमादरात् ॥ २३ ॥ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ॥ दक्षिणां ते प्रदास्यामि ह्यतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ २४ ॥ गणेश्वर गणाध्यक्ष गौरीपुत्र गजानन ॥ व्रतं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादादिभानन ॥ २५ ॥ एवं सम्पूज्य विघ्नेशं यथाविभवविस्तरैः ॥ सोपस्करं गणाध्यक्षमाचार्याय निवेदयेत् ॥ २६ ॥ गृहाण भगवन् ब्रह्मन् गणराजं सदक्षिणम् ॥ एतत्त्वद्वचनादद्य

नैवेद्य ॥ २२ ॥ कपूर तथा इलायची युक्त पान आदर से मुख में रखने के लिये दे रहा हूँ ॥ २३ ॥ हिरण्यगर्भ गर्भ में स्थित अग्नि देवता सोने के बीज को दक्षिणार्थ के निमित्त आप को दे रहा हूँ, अतः आप मुझे शान्ति दें ॥ २४ ॥ हे गणेश्वर, हे गणाध्यक्ष, हे गौरीपुत्र, हे गजानन, मेरा आपके प्रसाद से व्रत परिपूर्ण हो ॥ २५ ॥ इस

तरह अपने विभव के विस्तार द्वारा विघ्नेश की पूजा कर मय सामग्री के आचार्य के लिये गणाध्यक्ष को दे ॥२६॥ यह प्रार्थना करे, हे भगवन्, गणराज को दक्षिणा के सहित आप स्वीकार करें। आप की वाणी से मेरा यह व्रत पूर्ण हो ॥२७॥ ऐसे जो प्राणी पाँच साल तक व्रत कर उद्यापन करता है वह अपने चाहे सब पदार्थों को प्राप्त कर लेता

पूर्णतां यातु मे व्रतम् ॥ २७ ॥ एवं यः पञ्चवर्षाणि कृत्वोद्यापनमाचरेत् ॥ ईप्सिताँल्लभते कामान्देहान्ते शाङ्करं पदम् ॥ २८ ॥ यद्वा वर्षत्रयं कुर्यात्सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ उद्यापनं विना यस्तु करोति व्रतमुत्तमम् ॥ २६ ॥ सर्वं निष्फलतां याति यथाविध्यपि यत्कृतम् ॥ उद्यापनदिने प्रातस्तिलैः स्नानं समाचरेत् ॥ ३० ॥ हेम्नः पलात्तदर्धार्धात्कृत्वा गणपतिं बुधः ॥ पञ्चगव्यैस्तु संस्नाप्य दूर्वाभिस्तु प्रपूजयेत् ॥ ३१ ॥ एभिर्मन्त्रैस्तु दशभिर्भक्त्या श्रद्धया सहितो नरः ॥ गणाधीश नमस्तुभ्यमुमापुत्राघनाशन ॥ ३२ ॥ विनायकेशपुत्रेति सर्वसिद्धिप्रदायक ॥ एकदन्तेभवक्त्रेति

है। यों अन्त में शंकर के पद को प्राप्त करता है ॥ २८ ॥ या इस व्रत को तीन साल तक करे तो सब सिद्धियों को प्राप्त कर लेता है। इस उत्तम व्रत को जो उद्यापन के बिना करता है तो ॥२६॥ यथाविधि सालभर करने पर भी सब नहीं किये के समान हो जाता है। उद्यापनके दिन सुबह तिलों द्वारा स्नान करे ॥३०॥ ज्ञानी एक पल गणेश की आधा तोला, या चौथाई पल सोने की प्रतिमा बनाकर पञ्चगव्य द्वारा स्नान करा दूर्वा से पूजा करे ॥ ३१ ॥ भक्ति श्रद्धा से प्राणी

इन मन्त्रों से पूजा करे। हे गणाधीश, उमापुत्र, अघनाशन, आप को नमस्कार है ॥ ३२ ॥ हे विनायक, ईशपुत्र, हे सर्वसिद्धि प्रदायक, हे इभवक्त्र, हे मूषकवाहन, ॥ ३३ ॥ हे कुमारगुरो, आपको नमस्कार है। इन दश नामोंसे अलग-अलग पूजा करे। पहले रोज अधिवासन कर दूसरे रोज सुबह होम करे ॥ ३४ ॥ ग्रह होम कर दूर्वा तथा लड्डू से प्रधान

तथा मूषकवाहन ॥ ३३ ॥ कुमारगुरवे तुभ्यमिति नामपदैः पृथक् ॥ पूर्वेद्युरधिवास्यैव प्रातर्होमं समाचरेत् ॥ ३४ ॥ दूर्वाभिर्मोदकैश्चैव ग्रहहोमपुरःसरम् ॥ पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा आचार्यादीन् प्रपूजयेत् ॥ ३५ ॥ गां सवत्सां घटोध्नीं च दद्याद्वित्तानुसारतः ॥ एवं कृते व्रते वत्स सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ३६ ॥ मदीयप्रियपुत्रस्य व्रतेनाहं च तोषितः ॥ भुवि दत्त्वा सर्वभोगं ददाम्यन्ते च सद्गतिम् ॥ ३७ ॥ यथा शाखाप्रशाखाभिर्दूर्वा वृद्धिं गता भवेत् ॥ तथैव पुत्रपौत्रादिसन्ततिर्वृद्धिगामिनी ॥ ३७ ॥ इत्येतत्कथितं गुह्यं दूर्वागणपतिव्रतम् ॥ श्रेष्ठाच्छ्रेष्ठतरं चैव कर्तव्यं

होम करे। पूर्णाहुति कर आचार्य आदि ब्राह्मणों की अर्चा करे ॥ ३५ ॥ अपने धन के अनुसार बहुत दूध देनेवाली बछड़े वाली गौ दे। हे वत्स, ऐसे व्रत से कामना प्राप्त कर लेता है ॥ ३६ ॥ शिवजी ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, मेरे प्रियपुत्र के व्रत मात्र से प्रसन्न हो मैं भूमि के सब सुख भोगों को दे देता हूँ। अन्त में सद्गति भी करता हूँ ॥३७॥ जैसे दूर्वा शाखा प्रशाखाओं द्वारा वृद्धि को प्राप्त होती है। वैसे ही पुत्र, पौत्रआदि सन्तति की वृद्धि होती है ॥३८॥ सनत्कुमार,

मैंने यह दूर्वागणपति व्रत गुप्त आप से कहा। यह उत्तमोत्तम है। सुख की इच्छा वालों को करना चाहिये ॥ ३९ ॥

ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे महामुने, श्रावण मास शुक्लपक्ष की पंचमी तिथि में जो करना चाहिये। उसे कहूँगा। उसे आप सुने ॥ १ ॥ व्रत करने वाला एकबार चतुर्थी को भोजन कर पञ्चमी तिथि में नक्तव्रत कर सोने या

सुखमीप्सुभिः ॥ ३९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे दूर्वागणपतिव्रतकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

ईश्वर उवाच—अतः परं प्रवक्ष्यामि श्रावणे शुक्लपक्षके ॥ पञ्चम्यां यच्च कर्तव्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ १ ॥ चतुर्थ्यामेकभुक्तं तु नक्तं स्यात्पञ्चमीदिने ॥ कृत्वा स्वर्णमयं नागमथवा रौप्यसम्भवम् ॥ २ ॥ कृत्वा दारुमयं वापि अथवा मृन्मयं शुभम् ॥ पञ्चम्यामर्चयेद्भक्त्या नागं पञ्चफणान्वितम् ॥ ३ ॥ द्वारस्योभयतो लेख्या गोमयेन विषोल्वणाः ॥ पूजयेद्विधिवच्चैव दधिदूर्वाङ्कुरैः शुभैः ॥ ४ ॥ करवीरैर्मालतीभिर्जातिपुष्पैश्च चम्पकैः ॥ तथा गन्धैरक्षतैश्च धूपैर्दीपैर्म-

चाँदी का नाग निर्माण करे ॥ २ ॥ काठ या मिट्टी का पाँच फणों युक्त नागदेव की प्रतिमा बना पंचमी के रोज भक्ति द्वारा अर्चन करे ॥ ३ ॥ दरवाजे के दोनों ओर गोबर से फणवाला सर्प बना सविधि दधि तथा दूब से पूजा करे ॥ ४ ॥ करवीर, मालती, चमेली तथा चम्पा फूलों द्वारा रमणीय गन्ध, अक्षत, धूप और दीपक से पूजा करे ॥ ५ ॥

ब्राह्मणों को पवित्र घी के लडडू और खीर का भोजन करावे। अनन्त, वासुकी, शेष, पद्मनाभ, कम्बल ॥ ६ ॥ कर्कोटक, अश्व, धृतराष्ट्र, शङ्खपाल, कालीय तथा तक्षक ॥ ७ ॥ इन नागों के कुलाधिप को हल्दी और चन्दन से दिवाल पर लिखे तथा नागमाता कद्रू को भी लिख फूल आदि से पूजा करे ॥ ८ ॥ ज्ञानीजन नागदेवों का पूजन कर भरपूर

नोहरैः ॥ ५ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात् घृतमोदकपायसैः ॥ अनन्तं वासुकिं शेषं पद्मनाभं च कम्बलम् ॥ ६ ॥ तथा कर्कोटकं नाम नागमश्वं तथाष्टमम् ॥ धृतराष्ट्रं शङ्खपालं कालीयं तक्षकं तथा ॥ ७ ॥ हरिद्रया चन्दनेन कुड्ये नागकुलाधिपान् ॥ नवकद्रूं श्च संलिख्य पूजयेत्कुसुमादिभिः ॥ ८ ॥ वाल्मीके पूजयेन्नागान् दुग्धं चैव तु पाययेत् ॥ घृतयुक्तं शर्कराढ्यं यथेष्टं चार्पयेद् बुधः ॥ ६ ॥ लोहपात्रे पोलिकादि न कुर्यात्तद्दिने नरः ॥ गोधूमपायसं कुर्यान्नैवेद्यार्थं तु भक्तितः ॥ १० ॥ भर्जिताश्चणकाश्चैव व्रीहयो यावनालिकाः ॥ अर्पणीयाश्च सर्पेभ्यः स्वयं चैव तु भक्षयेत् ॥ ११ ॥ बालकेभ्योऽर्पणीयाश्च दृढा दन्ता भवन्ति हि ॥ वल्मीकस्य समीपे तु गायनं

घी चीनी सहित दूध पिला ॥ ६ ॥ उसी रोज लोहे की कढ़ाई में कोई चीज न बना नैवेद्यार्थ भक्ति द्वारा गेहूँ दूध का पायस बना ॥ १० ॥ भूने चने, धान का लावा, भूना हुआ यव नागों को दे और आप भी इन्हीं चीजों का भोजन करे ॥११॥ लड़कों को दे। इसी दिन लड़कों को देने मात्र से लड़कों के दाँत मजबूत हो जाते हैं। वल्मीक के नजदीक

गान, वाद्य आदि उत्सव करे ॥ १२ ॥ स्त्रियाँ भी अपने कपड़े, भूषण आदि द्वारा शृंगार कर उत्सव करें। जो यों करते हैं उन्हें कभी सर्प का भय नहीं होता ॥१३॥ विप्र, और भी सुनो। हे महामुने, संसार के जीवों के कल्याणार्थ मैं आप से कुछ कहूँगा। उसे सुनो ॥ १४ ॥ हे वत्स, सर्प के दंशन मात्र से मनुष्य की अधोगति होती है। तमोगुणी हो सर्प

वाद्यमेव च ॥ १२ ॥ स्त्रीभिः कार्यं भूषिताभिः कार्यश्चैवोत्सवो महान् ॥ एवं कृते कदाचिच्च सर्पतो न भयं भवेत् ॥ १३ ॥ अन्यच्च शृणुयाद्विप्र लोकानां हितकाम्यया ॥ कथयिष्यामि किञ्चित्ते तच्छृणुष्व महामुने ॥ १४ ॥ नागदष्टो नरो वत्स प्राप्य मृत्युं व्रजत्यधः ॥ अधो गत्वा भवेत्सर्पस्तामसो नात्र संशयः ॥ १५ ॥ पूर्वोक्तविधिना सर्वमेकभुक्तादि कारयेत् ॥ नागनिर्माणपूजादि विप्रैः सह तथादरात् ॥ १६ ॥ एवं द्वादशमासेषु मासि मासि व्रतं चरेत् ॥ पञ्चम्यां शुक्लपक्षस्य पूर्णे संवत्सरे पुनः ॥ १७ ॥ ब्राह्मणांश्च यतींश्चैव नागानुद्दिश्य भोजयेत् ॥ इतिहासविदे नागं काञ्चनं रत्नचित्रितम् ॥ १८ ॥ गां च दद्यात्सवत्सां वै सर्वोपस्करसंयुताम् ॥ दानकाले पठेद्यो

होता है इसमें संशय नहीं है ॥ १५ ॥ पूर्व विधि द्वारा एक भुक्त आदि नियम कर ब्राह्मणों के सहित प्रेम से नाग का निर्माण कर पूजा करे ॥ १६ ॥ इस तरह बारह महिनों की शुक्लपक्ष पंचमी के रोज व्रत करे। साल की समाप्ति पर शुक्लपक्ष पंचमी को फिर पूजा आदि करे ॥ १७ ॥ नागों को भोजन-उद्देश्य कर ब्राह्मणों तथा संन्यासियों को करा दे।

इतिहास विद को रत्न विभूषित सोने का नाग दे ॥ १८ ॥ सामग्री सहित सवत्सागौ दे। दान समय नारायण विभु को याद कर यह पढ़े ॥ १९ ॥ जो सब जगह व्यापक है, चीजों को देनेवाला है, अनन्त है तथा अपराजित है। उस भगवान् नारायण की याद कर ये कहे—हे गोविन्द, जो मेरे वंश में जीव सर्प दंशन से अधोगति प्राप्त हो गये हैं ॥२०॥

हि स्मन्नारायणं विभुम् ॥ १९ ॥ सर्वगं सर्वदा तारमनन्तपराजितम् ॥ ये केचिन्मे कुले सर्पदष्टाः प्राप्ता ह्यधोगतिम् ॥ २० ॥ व्रतदानेन गोविन्द मुक्तिभाजो भवन्तु ते ॥ इत्युच्चार्याक्षतैर्युक्तं सितचन्दन मिश्रितम् ॥ २१ ॥ वासुदेवाग्रतो भक्त्या तोये तोयं विनिक्षिपेत् ॥ अनेन विधिना सर्वे ये मरिष्यन्ति वा मृताः ॥ २२ ॥ सर्पतस्तेऽभियास्यन्ति स्वर्गतिं मुनिसत्तम ॥ एवं सर्वान्स मुद्धृत्य कुलजान्कुलनन्दन ॥ २३ ॥ प्रयाति शिवसान्निध्यं सेव्यमानोऽसरोगणैः ॥ वित्ताशाठ्यविहीनो यः सर्वमेतत्फलं लभेत् ॥ २४ ॥ नक्तेन भक्तिसहिताः सितपक्षभीषु ये पूजयन्ति

वे इस व्रत तथा नाग के दान द्वारा मुक्ति को प्राप्त हों, यों कह जीव श्वेत चन्दन युक्त चावल से ॥ २१ ॥ पानी को भक्ति से वासुदेव के जड़ में छोड़ दे। इस तरह व्रत, पूजा, तथा दान से जो जीव हो गये हैं या मरने वाले होंगे ॥२२॥ हे मुनिसत्तम, वे जीव सर्पयोनि से मुक्त हो अधिकारी स्वर्गलोक के होंगे। हे कुलनन्दन, इस तरह व्रत करने वाला सभी वंश का उद्धार कर ॥ २३ ॥ अप्सरागणों से सेवित हो शिव के सन्निध्य जाता है। इस व्रत को वित्तशाठ्य विहीन हो

जो करता है वह इसका सब फल प्राप्त कर लेता है ॥ २४ ॥ जो प्राणी श्रावण मास शुक्ल पक्ष पंचमी रोज भक्ति से नक्तव्रत करता फूल आदि उपहारों द्वारा नागदेवों की पूजा करते हैं। उनके घर अभयदानी मणिकिरण विभूषित सर्प राजी होते हैं ॥२५॥ जो मकान दान प्रतिग्रह ले लेते हैं वे घोर यमयातना भोग सर्पयोनि में चल जाते हैं ॥ २६ ॥ हे मुनिसत्तम,

सुभगान्कुसुमोपहारैः ॥ तेषां गृहेष्वभयदा हि भवन्ति सर्पा हर्षान्विता मणिमयूखविभासिताङ्गाः ॥ २५ ॥ प्रतिग्रहं ये च कुर्युर्गृहदानस्य वाडवाः ॥ प्रयान्ति सर्पतां तेऽपि घोरां भुक्त्वा तु यातनाम् ॥ २६ ॥ अन्तकाले च ये केचिन्नागहत्यावशादिह ॥ मृतापत्या अपुत्रा वा भवन्ति मुनिसत्तम ॥ २७ ॥ कार्पण्यवशतः स्त्रीणां सर्पता यान्ति केचन ॥ निक्षेपानृतवादाच्च केचित्सर्पा भवन्ति हि ॥ २८ ॥ अन्यैश्चापि निमित्तैर्ये सर्पतां यान्ति मानवाः ॥ उपयोऽयं विनिर्दिष्टः सर्वेषां निष्कृतौ परः ॥ २९ ॥ वित्तशाठ्यविहीनेन कृता चेन्नागपञ्चमी ॥ तद्धितार्थं हरिं शेषः

जो अन्त काल में नाग मृत्यु मुख में चले जाते हैं। इस लोक में आकर मरे पुत्र वाले या पुत्र विहीन हो जाते हैं ॥२७॥ किसी प्राणी की स्त्रियों की कृपणता से सर्पयोनि होती है। किसी प्राणी को धरोहर रखकर मिथ्या कहने से सर्पयोनि मिलती हैं ॥ २८ ॥ जो प्राणी अनेक कारणों से सर्पयोनि में चले जाते हैं उन प्राणियों के उद्धार का यह श्रेष्ठ उपाय कहा है ॥ २९ ॥ जो प्राणी धन कृपणता त्याग नागपंचमी का व्रत तथा अर्चन करता है। उस प्राणीके हितार्थ सब नाग

स्वामी शेष भगवान् हरि से ॥ ३० ॥ एवं वासुकी नाग हाथ जोड़े सदाशिव से प्रार्थना करते हैं। शेष और वासुकी की प्रार्थना द्वारा शिव और भगवान् विष्णु राजी हो ॥ ३१ ॥ उस जीव की सब कामनाओं को परिपूर्ण करते हैं। वह जीव नागलोक में अनेक तरह के भोगों को भोग ॥ ३२ ॥ बाद में वैकुण्ठलोक या शोभायमान कैलास जाकर शिव या

सर्वनागाधिपो विभुम् ॥ ३० ॥ बद्धाञ्जलिः प्रार्थयते वासुकिश्च सदाशिवम् ॥ शेषवासुकिविज्ञप्त्या शिवविष्णु प्रसादितौ ॥ ३१ ॥ मनोरथांस्तस्य सर्वान्कुरुतः परमेश्वरौ ॥ नागलोके तु तान्भोगान्भुक्त्वा तु विविधान्बहून् ॥ ३२ ॥ ततो वैकुण्ठमासाद्य कैलासं वापि शोभनम् ॥ शिवविष्णुगणो भूत्वा लभते परमं सुखम् ॥ ३३ ॥ एतत्ते कथितं वत्स नागानां पञ्चमीव्रतम् ॥ अतः पर किमन्यत्त्वं श्रोतुमिच्छसि तद्वद ॥ ३४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वर सनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये नागपञ्चमीव्रतकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

सनत्कुमार उवाच—श्रुतमाश्चर्यजनकं नागानां पञ्चमीव्रतम् ॥ षष्ठ्यां कथय देवेश किं

विष्णु का गण हो परमानन्द का हिस्सेदार हो जाता है ॥ ३३ ॥ हे वत्स, आप से यह मैंने नागों का नागपंचमी व्रत कहा। अब और क्या श्रवण करने की अभिलाषा करते हैं। वह कहिये ॥ ३४ ॥

सनत्कुमार ने शिव से कहा—देवेश, आश्चर्यजनक नागों का पंचमीव्रत मैंने सुना। हे देवेश, आप अब षष्ठी के

रोज होनेवाले व्रत को कहें। व्रत का नाम तथा क्या विधान है ॥ १ ॥ शिव ने सनत्कुमार से कहा—विप्रेन्द्र, श्रावण मास, शुक्लपक्ष तिथि षष्ठी को महामृत्यु विनाशक उत्तम सूपोदन नाम का व्रत करे ॥ २ ॥ शिवालय या घर पर प्रयत्न से शिव का अर्चन कर सविधि दाल आँटे भात का नैवेद्य ॥ ३ ॥ नमक सहित आम का साग रखे। ब्राह्मणों को नैवेद्य

व्रतं कीदृशो विधिः ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच—शुक्लपक्षे श्रावणे तु षष्ठयां कार्यं व्रतं शुभम् ॥ सूपौदनाख्यं विप्रेन्द्र महामृत्युविनाशनम् ॥ २ ॥ शिवालये गृहे वापि शिवं सम्पूज्य यत्नतः ॥ सूपौदनस्य नैवेद्यमर्पयेद्विधिसंयुतः ॥ ३ ॥ आम्रस्य लवणं शाकं साधने परिकल्पयेत् ॥ नैवेद्यस्य पदार्थस्तु वायनं ब्राह्मणस्य च ॥ ४ ॥ य एतद्विधिना कुर्यात्तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ ५ ॥ राजाऽऽसीद्रोहितो नाम बहुकालमपुत्रवान् ॥ पुत्रार्थी स तपश्चक्रे महत्परमदारुणम् ॥ ६ ॥ प्रारब्धे नास्ति ते पुत्रो बोधितोऽपि स वेधसा ॥ निर्बन्धान्न निवृत्तोऽभूत्तपसः सोऽतिलालसः ॥ ७ ॥ ततः सङ्कटमापन्नो वेधाः प्रादुरभूत्पुनः ॥ पुत्रो

पदार्थों का वायन दे ॥ ४ ॥ इस व्रत को जो विधि से करता है उसे अनन्त पुण्य हो जाता है। इसमें प्राचीन कथानक कहते हैं ॥ ५ ॥ रोहित नाम एक राजा बहुत समय तक अपुत्र वाला था। पुत्रार्थ उसने अत्यन्त कठिन तप किया ॥ ६ ॥ ब्रह्मा ने तप प्रभाव से प्रकट हो उससे कहा—हे राजन्, तेरे भाग्य में पुत्र नहीं है। पर पुत्र के प्राप्त्यर्थ

कठिन तपस्या करता ही रहा ॥ ७ ॥ संकट में हो ब्रह्मा ने फिर प्रकट हो कहा—हे राजन्, तुम्हें पुत्र होगा वह मेरा दिया हुआ पुत्र अल्पायु होगा ॥ ८ ॥ इस प्रश्न पर राजा रानी ने यों निश्चय किया पुत्र प्राप्ति से वन्ध्यापन हट जायगा। लोक में अपुत्र होने की निन्दा हट जायगी। यही बहुत है ॥९॥ ब्रह्मा के वरदान से प्रसन्न तथा शोक हर्ष वर्धक

दत्तस्तव मया अल्पायुः स भविष्यति ॥ ८ ॥ पत्नी राजा मन्त्रयेतां वन्ध्यात्वं तु गमिष्यति ॥ अपुत्रत्वापवादश्च अलमित्येव जायताम् ॥ ९ ॥ ततो ब्रह्मवरात्पुत्रो हर्षशोकपरोऽभवत् ॥ जातकर्मादिसंस्कारांश्चक्रे राजा यथाविधि ॥ १० ॥ राज्ञी सा दक्षिणा नाम राजा चैव स रोहितः ॥ शिवदत्त इति प्रेम्णा चक्रतुर्नाम तस्य तौ ॥ ११ ॥ उपनीतश्च तनयो राज्ञा तु भयचेतसा ॥ विवाहं न चकारास्य भूमिपालो मृतेर्भयात् ॥ १२ ॥ तदा षोडशवर्षेऽसौ मरणं प्राप पुत्रकः ॥ चिन्तामाप परां राजा ब्रह्मचारिमृतिं स्मरन् ॥ १३ ॥ येषां कुले ब्रह्मचारी निधनं

पुत्र हुआ। राजा ने जातकर्म आदि संस्कार यथाविधि किये ॥ १० ॥ दक्षिणा नाम वाली रानी तथा राजा रोहित ने स्नेहवश उसका शिवदत्त यह नाम रक्खा ॥ ११ ॥ मन से भय करते हुए भूमिपाल ने उस लड़के का उपनयन संस्कार किया। विवाह मृत्यु भय से न किया ॥ १२ ॥ जब सोलह सालका हुआ तो उसकी मृत्यु हो गई। उस ब्रह्मचारी के मरण की याद कर राजा महती चिन्ता में हो गया ॥ १३ ॥ जिस वंश में ब्रह्मचारी का मरण होता है उस

वंश का क्षय हो जाता है तथा उसकी दुर्गति हो जाती है ॥ १४ ॥ सनत्कुमारजीने शिव से कहा—देवदेव, जगन्नाथ, कोई उपाय है, या नहीं ॥ कोई उपाय यदि है तो मुझे कहें । जिसे करने से दोष की शान्ति हो ॥ १५ ॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, यदि स्नातक या ब्रह्मचारी आदि हो तो अर्क विधिसे विवाह संयोग कर पेड़ तथा

प्राप्नुयाद्यदि ॥ तत्कुलं क्षयमायाति सोऽपि दुर्गतिमापतेत् ॥ १४ ॥ सनत्कुमार उवाच—देवदेव जगन्नाथ परिहारोऽस्ति वा न वा ॥ अस्ति चेच्च वदस्वाद्य दोषशान्तिर्यदा भवेत् ॥ १५ ॥ ईश्वर उवाच—स्नातको ब्रह्मचारी च निधनं प्राप्नुयाद्यदि ॥ स योज्यश्चार्कविधिना संयोज्यौ तौ परस्परम् ॥ १६ ॥ देशकालौ तु संकीर्त्याऽमुकगोत्रादि नामतः ॥ व्रतं वैसर्गिकं कुर्वे मृतस्य ब्रह्मचारिणः ॥ १७ ॥ हेम्नाऽऽभ्युदयिकं कृत्वा प्रतिष्ठाप्य च पावकम् ॥ आघारान्तं च सम्पाद्य चतुर्व्याहृतिभिर्हुनेत् ॥ १८ ॥ व्रतपत्यग्नये चैव व्रतानुष्ठानसत्फलम् ॥ सम्पादनाय विश्वेभ्यो देवेभ्यश्च हुनेद् घृतम् ॥ १६ ॥ ततः स्विष्टकृते हुत्वा होमशेषं समापयेत् ॥ देशकालौ पुनः

तथा ब्रह्मचारी को मिला कर ॥ १६ ॥ देशकाल-गोत्रनाम को कहे—मैं मरे ब्रह्मचारी के शान्ति के लिए वैसर्गिक व्रत करता हूँ ॥ १७ ॥ पहले सोने से 'आभ्युदयिक' कर अग्नि स्थापन तथा आघार-आज्य संज्ञक आदि आहुति दे । व्याहृतियों से होम कर ॥ १८ ॥ व्रत के अनुष्ठानार्थ उत्तम फल के वास्ते व्रतकर्ता अग्नि तथा विश्वेदेव का घी से होम करे ॥१६॥ स्विष्टकृत् हवन कर होम अवशिष्ट समाप्त करे । देश-काल को याद कर कहे—मैं अर्कविवाह करूँगा ॥२०॥

करे ॥१६॥ स्विष्टकृत् हवन कर होम अवशिष्ट समाप्त करे। देश-काल को याद कर कहे—मैं अर्कविवाह करूँगा ॥२०॥ सोने से 'आभ्युदयिक' कर पीपल शाखा तथा शव को हलदी और तेल से लेप कर पीले सूत से वेष्टित करे ॥२१॥ दो पीले कपड़े द्वारा अच्छादित करे। अग्नि स्थापन कर विवाहविधि द्वारा आघारान्त हवन कर अग्नि में ॥ २२ ॥

स्मृत्वा करिष्येऽर्कविवाहकम् ॥ २० ॥ हेम्नाऽऽभ्युदयिकं कृत्वा अर्कशाखां शवं तथा ॥ लिप्त्वा तैलहरिद्राभ्यां पीतसूत्रेण वेष्टयेत् ॥ २१ ॥ पीतवस्त्रयुगेनापि अग्निं संस्थापयेत्ततः ॥ आघारान्तेऽग्नये चैव विवाहविधियोजकम् ॥ २२ ॥ बृहस्पतये कामाय चतुर्व्याहृतिभिस्तथा ॥ आज्यं स्विष्टकृतं हुत्वा कर्म चैवं समापयेत् ॥ २३ ॥ अर्कशाखां शवं चैव दाहयेच्च यथाविधि ॥ मृतस्य म्रियमाणस्य षडब्दं व्रतमाचरेत ॥ २४ ॥ त्रिंशद्भ्यो ब्रह्मचारिभ्यो दद्यात्कौपीनकान्नवान् ॥ हस्तमात्राः कर्णमात्रा दद्यात्कृष्णाजिनानि च ॥ २५ ॥ पादुकाछत्रमाल्यानि गोपीचन्दनमेव च ॥ मणिप्रवालमाल्यं च भूषणानि समर्पयेत् ॥ २६ ॥ एवं कृते विधानेन विघ्नः कोऽपि न

बृहस्पति, काम, व्याहृतियों से चार होम कर स्विष्टकृत् संज्ञक होम कर कर्म को समाप्त करे ॥ २३ ॥ यथाविधि पीपल की डाल तथा मृत शव को जला दे। मरण योग्य हो तो उसके लिए इस व्रत को छः साल तक करे ॥ २४ ॥ तीस ब्रह्मचारियों को नया कौपीन और एक-एक हाथ का या कर्णमात्र का कृष्णाजिन दे ॥ २५ ॥ खड़ाऊँ, छत्र, माला,

गोपीचन्दन, मणि, प्रवाल माला तथा आभूषण समर्पण करे ॥ २६ ॥ इस तरह से करने पर कोई विघ्न नहीं होता। ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे विप्रेन्द्र, ब्राह्मणों से इस विधि को श्रवण कर राजा ने अपने मन में विचारा ॥२७॥ यह असुख्य अर्क विवाह मुझे उत्तम नहीं लगा। विवाह ही मुख्य होना उचित है। जिससे मेरे जीव के वास्ते कोई बालिका

जायते ॥ ईश्वर उवाच—एवं श्रुत्वा ब्राह्मणेभ्यो राजा हृदि व्यचारयत् ॥ २७ ॥ भाति मेऽर्क-विवाहोऽयमनुकल्पो न मुख्यकः ॥ न ददाति प्रमीतस्य कन्यां कश्चिद्वधूं यतः ॥ २७ ॥ अहं राजाऽस्मि प्रददे रत्नानि च धनं बहु ॥ ददामि तस्मै यः कश्चिद्दास्यतेऽस्य वधूं यदि ॥ २९ ॥ विप्रः कश्चित्पुरे तस्मिन्नासीद्देशान्तरं गतः ॥ तस्य पूर्वमृतायास्तु भार्यायाः कन्यका शुभा ॥ ३० ॥ आसीद् द्वितीयभार्या तु दुष्टचित्ता व्यचारयत् ॥ सपत्नीद्वेषतश्चापि बहुद्रव्यस्य लोभतः ॥ ३१ ॥ दशवर्षां तु सा बाला दीना मातृवशंगता ॥ सापत्नमाता सा लक्षं गृहीत्वा प्रददौ सुताम् ॥ ३२ ॥

नहीं देता ॥ २८ ॥ राजा हूँ जो इसको लड़की देगा उसे मैं रत्न तथा बहुत धन दूँगा ॥ २९ ॥ उसके नगर में एक ब्राह्मण रहता था। वह दूसरे देश गया हुआ था। उसकी प्रथम मृत पत्नी से एक लड़की थी ॥ ३० ॥ दूसरी विवाहिता स्त्री दुष्टा थी। उसने डाह से और बहुत द्रव्य लोभ के कारण लड़की देने की इच्छा की ॥ ३१ ॥ उसने एक लाख रुपया ले दस साल की दीना बाला को मरे हुए राजा के लड़के के वास्ते दे दिया ॥ ३२ ॥ उस बाला को ले के मन्त्री

के किनारे श्मशान गये वहाँ उस शव के साथ बाला का विवाह किया ॥ ३३ ॥ मनुष्यों ने विधि से शव के साथ सम्बन्ध करा जलाने को तैयार हुए बाला ने कहा आप क्या करते हैं ॥ ३४ ॥ बाला की ऐसी वाणी को श्रवणकर वे सब दुःखित हो कहे—यह तेरा स्वामी है। इसको जला रहे हैं। यों सुन बाल स्वभाव से वह भय करती हुई रोने

कन्यां गृहीत्वा जग्मुस्ते श्मशानं सरितस्तटे ॥ विवाहं चक्रतुश्चैव शवेन सह कन्यकाम् ॥ ३३ ॥ भोजयित्वा विधानेन दग्धुं समुपचक्रमुः ॥ ततः सा कन्यकाऽपृच्छत्किमिदं क्रियते जनाः ॥ ३४ ॥ ततस्ते दुःखिताः प्रोचुर्दह्यतेऽयं पतिस्तव ॥ ततः प्रोवाच सा भीता रुदती बालभावतः ॥ ३५ ॥ पतिः किं दह्यते मेऽसौ दग्धुं नैव ददाम्यहम् ॥ गच्छध्वं सहिता सर्वे तिष्ठाम्यत्रा-ह्मेकिका ॥ ३६ ॥ पत्या सह गमिष्यामि उत्तिष्ठति यदा ह्यसौ ॥ दृष्ट्वा तस्यास्तु निर्बन्धं करुणादीनचेतसः ॥ ३७ ॥ प्रारब्धवादिनो वृद्धाः केचित्तत्रैवमूचिरे ॥ अहो किं वा भावी कर्म ज्ञायते नैव कस्यचित् ॥ ३८ ॥ दीनपालः कृपालुश्च भगवान् किं करिष्यति ॥ निराश्रिता च

लगी ॥३५॥ कहने लगी कि क्यों मेरे स्वामी को जलाते हो। मैं जलाने नहीं दूँगी। सब जाँय। मैं अकेली यहाँ रहूँगी ॥ ३६ ॥ यह जब उठेंगे इनके साथ हो जाऊँगी। ऐसा बालिका का हठ देख सब करुणा से आर्द्रचित्त हो चले गये ॥ ३७ ॥ जो प्रारब्ध वादी वृद्ध थे। उनने कहा अहो, अत्यन्त कष्ट है—भावीकर्म किसी का नहीं जान सकते ॥३८॥

दीन संरक्षक भगवान् दयालु क्या करेंगे। निराश्रय बाला यह कन्या सापत्नभाव द्वारा अन्य विमाता से ॥ ३९ ॥ बेची हुई है। अतः कदाचित् देव रक्षक हों तो इस बालिका तथा यह मरे हुआ राजकुमारको हम सब को जलाना नहीं चाहिये ॥ ४० ॥ यदि आप सबको वार्ता रोचक लगती हो तो हम यहाँ से घर चलें। ऐसा विचार कर सब अपने घर चले

कन्येयं मातुः सापत्नभावतः ॥ ३९ ॥ विक्रिता स्यादतो देवः कदाचित्पालको भवेत् ॥ अतो
ऽस्माभिरशक्येयं दग्धुं चायं तथा शवः ॥ ४० ॥ अतोऽस्माभिश्च मन्तव्यं सर्वेषां रोचते यदि ॥
सम्मन्त्र्यैवं तु सर्वेऽपि गतास्ते नगरं प्रति ॥ ४१ ॥ सैका शिवं पार्वतीं च स्मरन्ती भयविह्वला ॥
अजानती बालभावात्किमेतदिति विह्वला ॥ ४२ ॥ तस्याः संस्मरणाद्दैन्यात्सर्वज्ञौ पार्वतीशिवौ ॥
करुणापूर्णहृदयौ तत्राजग्मतुरञ्जसा ॥ ४३ ॥ वृषारूढौ तु तौ दृष्ट्वा दम्पतिं तेजसां निधिम् ॥
ननाम दण्डवद्भूमौ न जानत्यपि देवते ॥ ४४ ॥ आश्वासनं परं लेभे आगता सङ्गतिस्त्विति ॥
उवाच च पतिः किं मे जागृतो नैव जायते ॥ ४५ ॥ प्रसन्नौ बालभावेन दयया च परिप्लुतौ ॥

गये ॥ ४१ ॥ वह भय विह्वल हो अकेली बालिका शिव और पार्वती की याद करती बाल स्वभाव से न जानती हुई यह क्या है। यों कह विह्वल हुई ॥ ४२ ॥ उसकी याद मात्र से करुणा परिपूर्णसर्वज्ञ पार्वती और शंकर जल्दी वहाँ पर आये ॥४३॥ तेज पुञ्ज वृषपर सवार शंकर-पार्वती को देख प्रणाम किया। पर ये देवता हैं इसको न जानती थी ॥४४॥

उनके आ जाने से उसे बहुत आश्वासन हुआ तथा उनसे कहा—मेरा क्या स्वामी उठेगा नहीं ॥ ४५ ॥ उसके बालभाव तथा दया से आर्द्र हो शंकर पार्वती ने कहा—हे बाले, तेरी माता ने सूपौदन नाम का व्रत किया है ॥ ४६ ॥ उसके फल को तिल तथा जल ले सङ्कल्प कर अपने स्वामी को दे तथा मेरे से कह जो मेरी माँ ने 'सूपौदननामक' व्रत

ऊचतुस्ते जनन्यास्तु व्रतं सूपौदनाभिधम् ॥ ४६ ॥ व्रतं सङ्कल्प्य सतिलं गृहीत्वाऽस्य प्रयच्छ मे ॥ ब्रूहि यन्मज्जनन्यास्ति व्रतं सूपौदनाभिधम् ॥ ४७ ॥ कृतं तस्य प्रभावेण उत्तिष्ठतु पतिर्मम ॥ तया कृतं तथा सर्वं शिवदत्तस्तथोत्थितः ॥ ४८ ॥ उपदिश्य व्रतं तस्यास्तदान्तर्द्धतुः शिवौ ॥ शिवदत्तस्तु प्रपच्छ का त्वं क्वेहागतोऽस्म्यहम् ॥ ४६ ॥ सा चाह किञ्चिद् वृत्तान्तं रात्रिश्चापि गताऽभवत् ॥ प्रातर्नदीतीरगता जना राज्ञे न्यवेदयन् ॥ ५० ॥ राजन् पुत्रः स्नुषा चैव नदीतीरेऽवतिष्ठतः ॥ प्रामाणिकेभ्यः श्रुत्वाऽसौ हर्षं लोकोत्तरं ययौ ॥ ५१ ॥

किया है ॥ ४७ ॥ उसके प्रभाव से मेरा पति उठ जाय। उसने शंकर पार्वती के कथनानुसार किया। 'सूपौदननामक' व्रत के प्रभाव से शिवदत्त उठा ॥ ४८ ॥ शंकर पार्वती उस बाला को व्रतोपदेश दे अन्तर्हित हो गये। श्रीशंकर के जाने पर 'शिवदत्त' ने उसी कन्या से पूछा तुम कौन हो, मैं कैसे यहाँ आया ? ॥ ४९ ॥ शिवदत्त से कन्या ने उस कथा को कहा तथा रात भी व्यतीत हो गई। सुबह हो जाने पर नदी के किनारे आये हुए प्राणियों ने राजा से सारी कथा

कही ॥ ५० ॥ हे राजन्, आप के पुत्र पुत्रवधू नदी के किनारे हैं। प्रमाणिक मनुष्यों से इस वार्ता को श्रवण कर अत्यन्त प्रसन्न हो ॥ ५१ ॥ नगाड़े को बजवाता हुआ नदी के किनारे पर आ जाने पर सभी ने राजा की प्रसन्न होकर स्तुति की ॥ ५२ ॥ हे राजन्, आप का मरा लड़का फिर कालगृह से लौट आया । पुत्रवधू की प्रशंसा

हर्षभेरीं वादयन् स नदीतीरे समाययौ ॥ जनाश्च मुदिताः सर्वे प्रशशंसुर्जनाऽधिपम् ॥ ५२ ॥
राजन् गतः कालगृहं पुत्रस्ते पुनसंगतः ॥ प्रशशंस स्नुषां राजा किमहं शस्यते जनैः ॥ ५३ ॥
दुरदृष्टोऽधमश्चाहं धन्येयं सुभगा स्नुषा ॥ एतत्पुण्यप्रभावेण पुत्रोऽयं जीवितो मम ॥ ५४ ॥
एवं स्नुषां सुसम्भाव्य राजा ब्राह्मणसत्तमान् ॥ पूजयामास विभवैर्दानमानपुरःसरम् ॥ ५५ ॥
बहिर्नीतप्रमीतस्य पुनर्ग्रामप्रवेशने ॥ विधिं ब्राह्मणसंदिष्टं शान्तिकं विधिनाऽऽचरत् ॥ ५६ ॥
एतत्ते कथितं वत्स व्रतं सूपौदनाभिधम् ॥ पञ्चवर्षाणि कृत्वैतत्पश्चादुद्यापनं चरेत् ॥ ५७ ॥ प्रतिमां
पार्वतीशस्य अर्चयेत्प्रतिवासरे ॥ प्रातर्होमं प्रकुर्वीत चरुणाऽऽम्रदलैस्तथा ॥ ५८ ॥ नैवेद्यं

राजा ने की । कहा ये क्यों मेरी स्तुति करते हैं ॥ ५३ ॥ मैं महान् मन्दभागी अधम हूँ । मेरी यह पुत्रवधू सुभगा धन्य है । इसके सजीव पुण्य से यह मेरा लड़का जी उठा ॥ ५४ ॥ राजा ने यों पुत्रवधू की स्तुति तथा उत्तम द्विजों को दान द्वारा अर्चन किया ॥ ५५ ॥ मरे को गाँव से बाहर कर फिर जीवित हो जानेपर गाँव में प्रवेशार्थ ब्राह्मण के कहने से

विधान से शान्ति की ॥ ५६ ॥ हे वत्स, मैंने तुमसे 'सूपौदननामक व्रत को कहा। इसे पाँच साल कर उद्यापन करे ॥ ५७ ॥ शंकर पार्वती का रोज अर्चन कर चरु तथा आम के पत्ते से सुबह होम करे ॥ पूर्व विधान से व्रत कर

वायनं चैव व्रतोक्तविधिना चरेत् ॥ पुत्रं चिरायुषं लब्ध्वा अन्ते शिवपुरं व्रजेत् ॥ ५९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये सूपौदनषष्ठीव्रतकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

ईश्वर उवाच—अतःपरं प्रवक्ष्यामि शीतलासप्तमीव्रतम् ॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु सप्तम्यामाचरेद् व्रतम् ॥ १ ॥ कुड्ये लिखित्वा वापीं तु तथा सलिलदेवताः ॥ सप्तसंख्या दिव्यरूपा अशरीरिणसंज्ञकाः ॥ २ ॥ बालद्वययुता नारी पुरुषत्रयसंज्ञिता ॥ अश्वश्च वृषभश्चैव शिविका नरवाहना ॥ ३ ॥ पूजा वार्देवतानां स्यात् षोडशैरुपचारकैः ॥ दध्योदनस्य नैवेद्यं साधने

नैवेद्य तथा वायन दे। इस तरह व्रत करने मात्र से 'चिरायु पुत्र' प्राप्त कर अन्त में शिवपुर जाता है ॥ ५८-५९ ॥

शिवजी ने कहा—हे सनत्कुमार, शीतलासप्तमी व्रत कहूँगा। श्रावण महीने की शुक्ल पक्ष सप्तमी रोज व्रत करे ॥ १ ॥ पहले दीवार में बावली लिख उसमें अशरीरी संज्ञक दिव्य स्वरूपधारी गिनती के सात जल के देव लिखे ॥ २ ॥ दो लड़कों के सहित नारी तथा तीन पुरुष, एक घोड़ा, एक बैल, नरवाहन सहित पालकी लिखे ॥ ३ ॥

सोलह उपचार द्वारा जलदेवों की अर्चना कर ककड़ी, दही और भात का नैवे समर्पण करे ॥ ४ ॥ नैवेद्य पदार्थों का वायन ब्राह्मण को दे। इस तरह सात साल तक व्रत कर प्रति साल सात सौभाग्यवती को ॥ ५ ॥ भोजन करा उद्यापन करे। एक सोने के पात्र में सात जलदेवों की प्रतिमा रख ॥ ६ ॥ लड़के सहित उस प्रतिमा में पूर्वरोज साम को भक्ति

कर्कटीफलम् ॥ ४ ॥ द्विजाय वायनं दद्यान्नैवेद्यस्य पदार्थकैः ॥ सप्तवर्षाणि कृत्वैवं सुवासिन्यश्च सप्त वै ॥ ५ ॥ प्रत्यब्दं भोजनीयाः स्युः पश्चादुद्यापनं चरेत् ॥ वार्देवतानां प्रतिमा एकस्मि न्स्वर्णपात्रके ॥ ६ ॥ बालेन सहिताः पूज्याः सायं पूर्वेऽह्नि भक्तितः ॥ प्रातर्होमं च चरुणा ग्रहहोमपुरःसरम् ॥ ७ ॥ व्रतमेत्पुरा चीर्णं फलितं च तथा शृणु ॥ सौराष्ट्रदेशे नगरमासीच्छो- भनसंज्ञितम् ॥ ८ ॥ तत्रासीद्धनिकः कश्चित्सर्वधर्मपरायणः ॥ स वापीं खानयामास निर्जले विजने वने ॥ ९ ॥ पादमार्गां शुभां रम्यां बहुद्रव्यव्ययेन सः ॥ पशूनां जलपानाय अपि योग्यां दृढाश्मभिः ॥ १० ॥ बद्धां चिरस्थायिनीं च बहिःप्रान्ते द्रुमैर्युतम् ॥ आरामं कारया-

द्वारा अर्चन करे। दूसरे रोज सुबह ग्रहहोम सहित चरु होम करे ॥७॥ जिन्होंने पूर्व में इसको किया। उन्हें फल मिला उसे आप सुने। सौराष्ट्र देश में शोभन नाम वाला नगर था ॥ ८ ॥ उसमें एक धनी सर्व धर्म का माननेवाला निवास करता था। उसने निर्जल तथा विजन वन में वापी खुदवाई ॥ ९ ॥ उसमें उतरने के लिए बहुत धन खर्च कर

करता था। उसने निर्जल तथा विजन वन में वापी खुदवाई ॥ ९ ॥ उसमें उतरने के लिए बहुत धन खर्च कर

पशुओं के निमित्त जल पानार्थ दृढ़ पत्थरों की रमणीय सीढ़ी का निर्माण कराया ॥ १० ॥ जो बहुत काल वाली मजबूत बँधी थी। जिसके चारो ओर थके हुए पथिकों के लिए वृक्षों से संयुक्त बगीचे का निर्माण कराया ॥ ११ ॥ उस बावली का पानी सूख जाने से बिन्दुमात्र जल न भी मिला। उसी समय दुःखी हो धनी ने कहा मेरा परिश्रम

मास श्रान्तपान्थसुखाय च ॥ ११ ॥ परं शुष्कं जलं तत्र न लब्धं बिन्दुमात्रकम् ॥ प्रयासो मे
वृथा जातो द्रव्यं च व्ययितं वृथा ॥ १२ ॥ इति चिन्तापरश्चासीद्धनिको धनदाभिधः ॥ रात्रौ
तत्रैव सुष्वाप स्वप्ने तं जलदेवताः ॥ १३ ॥ आगत्य कथयामासुः शृणूपायं जलागमे ॥ दास्यसे
यदि ते पौत्रं बलिमस्माकमादृतः ॥ १४ ॥ तदैव वापिकेयं ते जलपूर्णा भविष्यति ॥ दृष्ट्वैवं
गृहमागत्य पुत्रायाकथयद्धनी ॥ १५ ॥ द्रविणो नाम तत्पुत्रः सोऽपि धर्मपरायणः ॥ शृणुष्व
मम वत्सस्य भवान्मज्जनको यतः ॥ १६ ॥ तत्राप्येतद्धर्मकार्यं किं विचार्यमिह त्वया ॥ स्थावर

व्यर्थ हुआ तथा धन भी व्यर्थ में खर्च हो गया ॥ १२ ॥ यों वह धनी चिन्ता कर रात को उस बावली के पास सो गया। उसी समय स्वप्न में धनद को जल देवों ने ॥ १३ ॥ आकर कहा—हे धनी, जल निकलने का उपाय सुनो। अपने पौत्र को यदि सादर हम लोगों के लिए बलि दो ॥ १४ ॥ तो यह बावली उसी क्षण जल से भर आयेगी। इस प्रकार स्वप्न देख धनिक अपने गृह आ अपने पुत्र से सारी कथा स्वप्न की कही ॥ १५ ॥ द्रविण नाम

वाला धनी का पुत्र था वह भी धर्म तत्पर था। उसने पिता से कहा—पितः, मेरे तथा मेरे पुत्र के भी आप जन्मदाता हैं॥ १६॥ उसमें भी यह धर्मकार्य है। इसमें आप का विचार क्या है। क्योंकि धर्म स्थायी तथा पुत्र आदि सब नाशवान् हैं॥ १७॥ अल्प मूल्य से बड़ी चीज का मिलना कठिन कहा है। मेरे 'शीतांशु' तथा 'चण्डांशु' नाम वाले

आस्ति धर्मोऽयं नश्वरं च सुतादिकम् ॥ १७ ॥ अल्पमौल्यं महावस्तु लाभोऽयं दुर्लभः क्रयः ॥ शीतांशुश्चैव चण्डांशुर्वर्तेते तनयौ मम ॥ १८ ॥ शीतांशुर्नाम ज्येष्ठोऽयं बलिर्देयोऽविचारतः ॥ मन्त्रोऽयं सर्वथास्त्रीभिर्ज्ञातव्यो नैव भोः पितः ॥ १९ ॥ उपायस्तत्र मत्पत्नी गर्भिणी वर्ततेऽ-धुना ॥ आसन्नप्रसवा चैव गन्त्र्यसौ स्वपितुर्गृहे ॥ २० ॥ प्रसूत्यर्थं कनिष्ठोऽसौ तया सह गमिष्यति ॥ तदा कार्यमिदं तात निर्विघ्नेन भविष्यति ॥ २१ ॥ इति श्रुत्वा पुत्रवाक्यं पिता तं स तुतोष ह ॥ धन्योऽसि पुत्र धन्योऽहं त्वया पुत्रेण पुत्रवान् ॥ २२ ॥ एतस्मिन्नन्तरे तस्या

दो लड़के हैं॥ १८॥ उसमें बिना विचारे बड़े 'शीतांशु' नाम वाले लड़के की बलि दें। पर हे पितः, यह बात स्त्रियों से गुप्त रखें ॥१९॥ गुप्त का प्रकार यह है मेरी पत्नी गर्भवती है। प्रसव समय पास है। वह अपने बाप के गृह में जाने वाली है॥ २०॥ उसके साथ मेरा कनिष्ठ बालक जायेगा उसी समय हे तात, यह काम निर्विघ्न होगा॥ २१॥ यों संवाद पुत्र का सुन धनद प्रसन्न [illegible] पुत्र, धन्य हो, तुम मेरे लड़के हो अतः धन्य मैं भी हूँ। मैं पुत्रवाला

अपने को मानता हूँ ॥ २२ ॥ इसी मध्य में पिता के गृह से सुशीला पत्नी का बुलावा आ गया। वह पिता के घर तद्वत् गई ॥ २३ ॥ उसी समय द्रविण ने पत्नी से कहा यह बड़ा पुत्र मेरे समीप रहेगा तथा छोटा लड़का तेरे साथ जायगा। सुशीला ने पति और श्वसुर के कहने मात्र से ऐसा ही किया ॥२४॥ उसके जाने के बाद पिता तथा पुत्र दोनों

सुशीलायाः पितृगृहात् ॥ आकारणं समगमत्तदा सा च जगाम ह ॥ २३ ॥ ज्येष्ठोऽस्माकं समीपेऽस्तु कनिष्ठो नीयतां त्वया ॥ सा तथैव सती चक्रे भर्तृश्वशुरवाक्यतः ॥ २४ ॥ तदा तौ पुत्रपितरौ तैलेनाभ्यज्य बालकम् ॥ स्नापयित्वा सुवस्त्रैश्च भूषणैः समलंकृतम् ॥ २५ ॥ पूर्वाषाढावारुणर्क्षे स्थापयामासतुर्मुदा ॥ वाप्या वा देवतास्तुष्टा भवन्त्विति समूचतुः ॥ २६ ॥ तदैव वापी पूर्णाऽभूत्सुधातुल्येन वारिणा ॥ उभौ गृहं जग्मतुस्तौ हर्षशोकसमन्वितौ ॥ २७ ॥ सा सुशीला पितुर्गेहे सूत पुत्रं तृतीयकम् ॥ मासत्रयोत्तरं गेहं निजं गन्तुं च निर्गता ॥ २८ ॥ वापीसमीपं प्राप्ताऽसौ

ने उस 'शीतांशु' लड़के की देह में तेल लगा नहवाया तथा रमणीय कपड़े भूषणों से भूषित किया ॥ २५ ॥ वरुण नक्षत्र पूर्वाषाढा के आजाने पर प्रसन्नता से उस बावली के किनारे पर उस लड़के को खड़ा कर दोनों ने कहा इस लड़के के बलि से जलदेवता प्रसन्न हों ॥ २६ ॥ उसी क्षण उस पुत्र-बलि से सुधा तुल्य जल पूर्ण बावली हो गई। दोनों ने बावली को जल से भरी देख राजी और पुत्र के नाश से दुःखि हो अपने घर आ गये ॥ २७ ॥ अपने पिता के घर

सुशीला ने तीसरा लड़का पैदा कर तीन मास बीत जाने पर अपने घर चली ॥ २८ ॥ उसी बावली के पास आयी तो उसे जल परिपूर्ण देख विस्मय को प्राप्त हो उसमें स्नान कर ॥ २९ ॥ कहा मेरे श्वसुर का उद्योग तथा धन खर्च यथोचित हुआ । उसी रोज श्रावण महीने शुक्ल पक्षकी सप्तमी तिथि थी ॥३०॥ सुशीला ने 'शीतला'का शुभ व्रत कर वहाँ

वापीं पूर्णां ददर्श ह ॥ विस्मयं परमं प्राप तत्र स्नानं चकार ह ॥ २९ ॥ श्वशुरस्य प्रयासो मे सार्थकश्च धनव्ययः ॥ तद्दिने सप्तमी चासीच्छ्रावणे शुक्लपक्षके ॥ ३० ॥ सुशीलाया व्रतं चासीच्छीतलासंज्ञितं शुभम् ॥ सा तत्र पाकमकरोदोदनं चानयद्दधि ॥ ३१ ॥ वार्देवताश्च सम्पूज्य दध्यन्नं कर्कटीफलम् ॥ नैवेद्यं कल्पयामास दत्त्वा विप्राय वायनम् ॥ ३२ ॥ स्वयं तदेव बुभुजे सहिता सह वासिभिः ॥ ततो योजनमात्रं तु तस्या ग्रामो बभूव ह ॥ ३३ ॥ ततः सा निर्गता चासीदारुह्य शिबिकां शुभाम् ॥ बालकत्रयसंयुक्ता तदा ता जलदेवता ॥ ३४ ॥ ऊचुः

पर ही दही तथा चावल मँगवाकर रमणीय पाक बनाया ॥ ३१ ॥ जलदेवता का अर्चन कर दही, चावल और ककड़ी का नैवेद्य दे ब्राह्मण वायन को दिया ॥ ३२ ॥ अपने साथ वालों के साथ आप भी उसी दही, चावल और ककड़ी का भोजन किया । वहाँ से सुशीला का गाँव चार कोश पर था ॥ ३३ ॥ जब वहाँ से रमणीय पालकी पर सुशीला सवार हो घर की ओर दोनों लड़कों के सहित चली तो [illegible] ॥ ३४ ॥ कहने लगे इसका लड़का देना चाहिये

तो घर की ओर दोनों लड़कों के सहित चली तो आपस में वे जलदेव ॥ ३४ ॥ कहने लगे इसका लड़का देना चाहिये

क्योंकि बड़ी सुबुद्धि से हम लोगों का इसने व्रत किया ॥ ३५ ॥ इस प्रभाव से नवीन पुत्र दें। यदि पूर्व का लड़का उत्पन्न नहीं किया तो हमें क्या प्रसन्नता का फल होगा ॥ ३६ ॥ इस तरह दयावान् जलदेवों ने आपस में बातचीत कर उसे जल के बाहर निकाल माता को दिखा विदा कर दिया ॥३७॥ माँको देख लड़का माँके पीछे-पीछे भागता हुआ

परस्परं चास्याः पुत्रो देयो यतोऽनया ॥ अस्माकं व्रतमाचीर्णं प्रज्ञा च विहिता परा ॥ ३५ ॥ एतद्व्रतप्रभावेण नूतनो दीयते सुतः ॥ पूर्वजातो यदि ग्राह्यो ह्यस्मत्तोषस्य किं फलम् ॥ ३६ ॥ विसर्जयामासुरिति उक्त्वाऽन्योन्यं दयालवः ॥ मातरं दर्शयामासुर्वाप्या निष्कास्य बाह्यतः ॥ ३७ ॥ अधावत्पृष्ठतो मातर्मातरित्याह्वयच्छिशुः ॥ संश्रुत्य पुत्रशब्दं सा परावृत्याऽवलोकयत् ॥ ३८ ॥ दृष्ट्वा सा नन्दनं स्वीयं चकिता साऽभवद्धृदि ॥ स्थाप्याङ्के मूर्ध्न्यवघ्राय किञ्चित्पप्रच्छ नो सुतम् ॥ ३९ ॥ बिभेष्यतीति बुद्ध्या सा हृदये त्वन्वचिन्तयत् ॥ तस्करैर्यदि वाऽऽनीतस्त्वर्ह्यलङ्कारवान्कथम् ॥ ४० ॥ पिशाचैर्यदि वाऽऽनीतो मोक्षितश्च पुनः कथम् ॥

हे मातः, कहकर यों पुकारा लड़के की ऐसी वाणी सुन माँ ने मुड़कर देखा ॥ ३८ ॥ सुशीला ने अपने लड़के को देख चकित हो उसको गोदी में बैठा सूँघने लगी। पर उससे कुछ नहीं पूछा ॥ ३९ ॥ यदि इससे पूछूँ तो यह भयकर जायगा। अपने चित्त में विचारने लगी यदि इसे यहाँ चोर ले आते तो इसका अलंकारों से भूपित होना कठिन था

॥ ४० ॥ पिशाच लाये होते तो कैसे छोड़ते घर के सम्बन्धीगण चिन्ता समुद्र में गोता लगा रहे होंगे ॥ ४१ ॥ यों विचार युक्त हो सुशीला के अपने मकानके दरवाजे पर आ जानेपर उसके आने का समाचार वहाँ के लोगों ने कहा॥४२॥ पिता, पुत्र दोनों विचारमग्न हो कहने लगे क्या सुशीला कहेगी तथा उसके पूछने पर क्या इससे हम कहें ॥ ४३ ॥

चिन्तासमुद्रे मग्नाः स्युर्गृहसम्बन्धिनो जनाः ॥ ४१ ॥ इत्येवं चिन्तयन्ती सा नगरद्वारमाप सा ॥ जनाः संकथयामासुः सुशीला सुखमागता ॥ ४२ ॥ श्रुत्वा तु पितृपुत्रौ तौ परां चिन्तामवापतुः ॥ किं वदिष्यति चास्माकमस्माभिर्वा किमुच्यताम् ॥ ४३ ॥ एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता पुत्रत्रयसमन्विता ॥ ज्येष्ठं दृष्ट्वा तु तं बालं श्वशुरश्च पतिश्च सः ॥ ४४ ॥ आश्चर्यं परमं प्राप परां मुदमवाप च ॥ त्वया किं पुण्यमाचीर्णं व्रतं वापि शुचिस्मिते ॥ ४५ ॥ पतिव्रताऽसि धन्याऽसि पुण्यवत्यसि भामिनि ॥ मासद्वयं तु सञ्जातमकस्मान्नास्त्यभूच्छिशुः ॥ ४६ ॥ स च त्वया पुनर्लब्धो वापी पूर्णाऽपि चाऽभवत् ॥ एकपुत्रा गताऽतस्त्वमागताऽसि त्रयान्विता ॥ ४७ ॥

इसी मध्य में तीनों बालकों के सहित सुशीला अपने घर पहुँची । श्वसुर तथा पति ने बड़े पुत्र शीतांशु को देख ॥ ४४ ॥ परम आश्चर्यान्वित प्रसन्न हो पूछा—हे शुचिस्मिते, किस पुण्य या किस व्रत को तूने किया ॥ ४५ ॥ हे भामिनी पतिव्रता हो, धन्य हो तथा पुण्यवती [illegible]

प्राप्त किया तथा बावली भी जल परिपूर्ण हुई । जाते समय यहाँ से एक लड़के को ले गई तथा आते वख्त तीन पुत्रों से आ गई ॥४७॥ हे सुभ्रू, वंश का उद्धार तुमने किया । हे शुभानने, मैं क्या तुम्हारी स्तुति करूँ । यों श्वसुर ने प्रशंसा की और पतिदेव ने प्रेम से देखा ॥४८॥ सास ने भी स्तुति की । प्रसन्न होकर उसने कहा यह सब सुमार्ग का पुण्यफल

त्वयोद्धृतं कुलं सुभ्रु किं त्वां स्तौमि शुभानने ॥ श्वशुरेण स्तुतैवं सा पत्या प्रेम्णा च वीक्षिता ॥४८॥ श्वश्र्वा चानन्दितोवाच पुण्यं मार्गस्य सर्वशः ॥ प्रापुः सर्वेऽपि चानन्दं भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ ४९ ॥ इत्येतत्कथितं वत्स शीतलासप्तमीव्रतम् ॥ दध्योदनं शीतलं च शीतलं कर्कटीफलम् ॥ ५० ॥ वापीजलं शीतलं तु शीतलाश्चापि देवताः ॥ तापत्रयस्य सन्त्राणाच्छीतलाव्रतिनस्ततः ॥ ५१ ॥ अतो हेतोः सप्तमीयं शीतलेति यथार्थिका ॥ ५२ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वर सनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये शीतलासप्तमीव्रतकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

है । इस संसार में मनोभिलषित भोग कर परमानन्दित हुए ॥४९॥ हे वत्स, यह 'शीतला सप्तमी' व्रत आप से कहा । इसमें दही, चावल, ठण्ढा शीतल ककड़ी फल ॥ ५० ॥ बावली जल ठण्ढा तथा शीतला देवता कहे गये हैं । इसे करनेवाले तापत्रय से मुक्त होते हैं ॥ ५१ ॥ इस कारण श्रावण महीने की शुक्लपक्ष की सप्तमी का यथार्थ 'शीतलासप्तमी' नाम हुआ ॥ ५२ ॥

ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे देवेश, अब शुभ पवित्रारोपण कहूँगा। पहली सप्तमी के रोज अधिवासन कर अष्टमी रोज पवित्रारोपण करे ॥ १ ॥ जो जीव पवित्र बनवाता है। उसके सुपुण्य फल सुनो। हे विप्र, वह सब यज्ञ, व्रत, दान तथा सब तीर्थाभिसेचन फल ॥ २ ॥ प्राप्तकर लेता है। इसमें यहाँ कोई संशय नहीं। क्योंकि सर्वगता शिवा

ईश्वर उवाच—अथ वक्ष्यामि देवेश पवित्रारोपणं शुभम् ॥ सप्तम्यामधिवास्याथ अष्टम्यामर्पयेत्तु तत् ॥ १ ॥ पवित्रं कारयेद्यस्तु तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ सर्वयज्ञव्रतं दानं सर्वतीर्थाभिषेचनम् ॥ २ ॥ प्राप्नुयान्नात्र सन्देहो यस्मात्सर्वगता शिवा ॥ नाधयो न च दुःखानि न पीडा व्याधयोऽपि च ॥ ३ ॥ न भयं शत्रुजं तस्य न ग्रहैः पीड्यते क्वचित् ॥ सिध्यन्ति सर्वकार्याणि अल्पानि च महान्ति च ॥ ४ ॥ नातः परतरं वत्स अन्यत्पुण्यविवृद्धये ॥ नराणां च नृपाणां च स्त्रीणां चैव विशेषतः ॥ ५ ॥ सौभाग्यजननं तात तव स्नेहात्प्रकाशितम् । श्रावणे

सबमें निवास करती हैं। अतः न तो आधि, दुःख, पीड़ा तथा व्याधि होती ॥३॥ न उसे शत्रु से उत्पन्न भय होता। न ग्रह से उत्पन्न पीड़ा कभी होती तथा उसके सब काम अल्प या महान् सिद्ध हो जाते हैं ॥४॥ हे वत्स, नर और राजाओं के सुपुण्यकी वृद्धि करने वाला इससे बढ़कर अन्य कोई साधन नहीं तथा विशेष स्त्रियों के वास्ते पुण्य की वृद्धि करने वाला कहा है ॥५॥ हे तात, आप के प्रेम से यह सौभाग्योत्पन्न साधन आप के प्रेम से प्रकाशित किया। हे विभातज, श्रावण

महीने की शुक्लपक्ष सप्तमी रोज अधिवासन कर ॥६॥ सब अर्चन का सामान ले, देवी में उत्तम भक्ति द्वारा गन्ध, पुष्प, फल आदि सब पूजन सामग्री ले ॥७॥ अनेक तरह के नैवेद्य, वस्त्र, आभरण आदि को संपादित कर पवित्र कर बाद पंचगव्य प्राशन करे ॥ ८ ॥ चरु द्वारा दिग्बलि और अधिवासन कर रमणीय कपड़ों तथा पत्रों से पवित्र का आच्छादन कर ॥९॥

शुक्लसप्तम्यामधिवास्य विधातृज ॥ ६ ॥ सर्वोपस्करसंयुक्तो देव्यां सद्भक्तिमांश्च सः ॥ सर्वाणि पूजाद्रव्याणि गन्धपुष्पफलानि च ॥ ७ ॥ नैवेद्यान्विविधांश्चैव वस्त्राद्याभरणानि च ॥ सम्पाद्य शोधयेदेतान्प्राशयेत्पञ्चगव्यकम् ॥ ८ ॥ चरुणा दिग्बलिं दद्यात्कार्यं चैवाधिवासनम् ॥ छादये-त्सदृशैर्वस्त्रैः पत्रैश्चैतत्पवित्रकम् ॥ ९ ॥ देव्यास्तन्मूलमन्त्रेण शतवाराभिमन्त्रितम् ॥ स्थापयेत्पुरतो देव्याः सर्वशोभासमन्वितम् ॥ १० ॥ देव्यास्तु मण्डपं कृत्वा रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ नटनर्तकवेश्यानां कुशलान्विविधान्गणाम् ॥ ११ ॥ स्थापयेद्वाद्यगीतादीन्नृत्यविद्याविशारदान् ॥ प्रत्यूषे विधिवत्स्नात्वा दिग्भ्यो दद्यात्पुनर्बलीम् ॥ १२ ॥ देवीं सम्पूज्य विधिवत्स्त्रियो भोज्यास्तथा

सौ बार देवी मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित कर संपूर्ण शोभा युक्त उस पवित्र को देवी के समक्ष स्थापित करे ॥ १० ॥ देवी के लिए रमणीय मण्डप का निर्माण कर रातमें जागे । उसके समक्ष नट, नर्तक, वेश्याओं के कुशल विविध गणों को ॥ ११ ॥ नृत्यविद्या विशारद वाद्य, गीत आदिकों को स्थापित करे । अन्य रोज सुबह सविधि स्नान कर

दिशाओं में बलि दे ॥ १२ ॥ विधिवत् देवी का अर्चन कर स्त्रियों और द्विजों को भोजन करा देवी के लिये पवित्र अर्पण कर आद्यन्त में दक्षिणा दे ॥ १३ ॥ हे वत्स, यथा शक्ति अनुसार कार्य साधक नियम करे । राजा, स्त्री, जूआ, शिकार और मांस को प्रयत्न से त्यागे ॥ १४ ॥ द्विज तथा आचार्य स्वाध्याय का वैश्य खेती और व्यापार कार्य सात

द्विजाः ॥ पवित्रमर्पयेद्देव्या आदावन्ते च दक्षिणाम् ॥ १३ ॥ यथाशक्ति भवेद्वत्स नियमा कार्य साधकः ॥ स्त्रियोऽक्षा मृगया मांसं राज्ञा वर्ज्यं प्रयत्नतः ॥ १४ ॥ स्वाध्यायश्च द्विजाचार्यैर्न कार्यं कर्षणं कृषेः । वणिग्भिर्न च वाणिज्यं सप्तपञ्चदिनानि वा ॥ १५ ॥ अथवा त्रीणि चैकं वा दिनं तस्यार्धमेव वा ॥ देव्या व्यापार आसक्तिः कर्तव्या सततं हृदि ॥ १६ ॥ न करोति विधानेन पवित्रारोपणं बुधः ॥ तस्य सांवत्सरी पूजा निष्फला मुनिसत्तम ॥ १७ ॥ तस्माद्भक्तिसमायुक्तैर्नरैर्देवीपरायणैः ॥ वर्षे वर्षे प्रकर्तव्यं पवित्रारोपणं शुभम् ॥ १८ ॥ कर्कोटकगते सूर्ये तथा सिंहगतेऽपि वा ॥ अष्टम्यां शुक्लपक्षस्य दद्याद्देव्याः पवित्रकम् ॥ १९ ॥ एतस्याकरणे दोषो

या पाँच रोज न करे ॥ १५ ॥ या तीन, एक, या आधे रोज व्यवहार त्याग निरन्तर हृदय से देवी व्यापार में मन लगाये ॥ १६ ॥ सविधि जो ज्ञानी पवित्रारोपण नहीं करता । हे मुनिश्रेष्ठ, उसके साल तक का अर्चन निष्फल होता है ॥ १७ ॥ अतः प्राणी भक्ति द्वारा देवी-परायण हो हरसाल शुभ पवित्रारोपण करे ॥ १८ कर्क या सिंह के सूर्य हो

जाने पर श्रावण मास की शुक्लपक्ष अष्टमी रोज देवी के लिये पवित्रारोपण करे ॥ १९ ॥ इसे न करने पर दोष होता है। क्योंकि इसे नित्यकर्म कहा है ॥ २० ॥ सनत्कुमार ने कहा—देवदेव, महादेव, आपने जो पवित्रारोपण कहा। हे स्वामिन्, उसकी निर्माण विधि और पूजनकी सही विधि कहें ॥२१॥ ईश्वर ने कहा—हे सनत्कुमार, सोना, ताँबा, चाँदी,

नित्यमेतत्प्रकीर्तितम् ॥ २० ॥ सनत्कुमार उवाच—देवदेव महादेव पवित्रं यत्त्वयोदितम् ॥ निर्मितव्यं कथं स्वामिंस्तद्विधिं वद सर्वशः ॥ २१ ॥ ईश्वर उवाच—हेमताम्रक्षौमरूप्यैः सूत्रैः कौशेयपट्टजैः ॥ कुशैः काशैश्च कार्पासैर्ब्राह्मण्या कर्तितैः शुभैः ॥ २२ ॥ कृत्वा त्रिगुणितं सूत्रं त्रिगुणीकृत्य साधयेत् ॥ तदोत्तमं पवित्रं तु षष्ट्या सह शतैस्त्रिभिः ॥ २३ ॥ सप्तत्या सहितं द्वाभ्यां शताभ्यां मध्यमं स्मृतम् ॥ साशीतिना शतेनैव कनिष्ठं तत्समाचरेत् ॥ २४ ॥ उत्तमं तु शतग्रन्थि पञ्चाशद्ग्रन्थि मध्यमम् ॥ पवित्रकं कनिष्ठं स्यात्षट्त्रिंशद्ग्रन्थि शोभनम् ॥ २५ ॥ अथवाङ्गगुणैर्वेदैर्द्वाभ्यां द्वादशतोऽपि वा ॥ चतुर्विंशद्द्वादशाष्टग्रन्थिभिर्वा पवित्रकम् ॥ २६ ॥

विशेष रेशमी वस्त्र, कुश या काश से निर्मित या रूई सूत से ब्राह्मणी काते ॥ २२ ॥ सूत्रों को त्रिगुणित कर पुनः त्रिगुणित करने पर उनका ३६० उत्तम पवित्र कहा है ॥ २३ ॥ तीन सौ साठ सूतों को उत्तम, दो सौ सत्तर को मध्यम, और एक सौ अस्सी सूतों को अधम कहा है ॥ २४ ॥ सौ ग्रन्थि का उत्तम, पचास ग्रन्थि का मध्यम तथा ३६

ग्रन्थि का कनिष्ठ पवित्र होता है ॥ २५ ॥ या छ, तीन, चार, दो, बारह, चौबीस, बारह और आठ ग्रन्थि का पवित्र निर्णय करे ॥ २६ ॥ या एक सौ आठ ग्रन्थि का उत्तम, चौवन ग्रन्थि का मध्यम, सताइस ग्रन्थि का कनिष्ठ पवित्र होता है ॥ २७ ॥ देवी प्रतिमा की नाभि सीमित पवित्र कनिष्ठ, जाँघ वाला मध्यम, जानु वाला पवित्र उत्तम होता है ॥२८॥

अथ चाष्टोत्तरशतं चतुःपञ्चाशदेव वा ॥ सप्तविंशतिरेवैवं ज्येष्ठमध्यकनीयसम् ॥ २७ ॥ अधमं नाभिमात्रं स्यादूरुमात्रं तु मध्यमम् ॥ उत्तमं जानुमात्रं तत्प्रतिमाया निगद्यते ॥ २८ ॥ रञ्ज्याः सर्वाः कुंकुमेन पवित्रग्रन्थयः शुभाः ॥ देवीं पूज्य पुरोभागे सर्वतोमण्डले शुभे ॥ २९ ॥ कलशे वेणुपटले पवित्राणि निधापयेत् ॥ त्रिसूत्र्यां ब्रह्मविष्णवीशानावाह्य च ततः शृणु ॥ ३० ॥ नवसूत्र्यां तथोङ्कारं सोमं वह्निं विधिं तथा ॥ नागांश्चन्द्ररवीशांश्च विश्वेदेवांश्च स्थापयेत् ॥ ३१ ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि स्थाप्या ग्रन्थिषु देवताः ॥ क्रिया च पौरुषी वीरा विजया चापराजिता

उक्त पवित्र की सब गाठों को केसर से रंगे । तथा सर्वतोभद्र वेदी पर देवी का अर्चन कर देवी के समक्ष ॥ २९ ॥ कलश या बाँस पर पवित्र रखे । तीन सूतों में ब्रह्मा, विष्णु और शंकर का आवाहन कर ॥ ३० ॥ नौ सूतों में ओंकार, सोम, वह्नि, नाग, चन्द्र, रवि, ईश और विश्वेदेव का आवाहन पूर्वक स्थापन करे ॥ ३१ ॥ ग्रन्थियों में देवों के स्थापन की विधि कहूँगा । क्रिया, पौरुषी, वीरा, विजया, अपराजिता ॥ ३२ ॥ मनोन्मनी, जया, भद्रा, मुक्ति और ईशा इन

नामों के आदि में प्रणव को लगा ग्रन्थिसंख्या अनुसार ॥ ३३ ॥ आवृत्ति कर आवाहन तथा चन्दनादि से अर्चन करे। धूप दे प्रणव द्वारा अभिमन्त्रित कर देवी को अर्पण करे ॥ ३४ ॥ यह पवित्रारोपण देवी विधान आप से मैंने कहा। यों दूसरे देवों को प्रतिपदा आदि तिथियों में ॥ ३५ ॥ पवित्रारोपण करे। उन देवों को आप से मैं कहता हूँ। धनद, श्री

॥ ३२ ॥ मनोन्मनी जया भद्रा मुक्तिरीशा तथैव च ॥ प्रणवादिनमोन्तैश्च नामभिर्ग्रन्थिसंख्यया ॥ ३३ ॥ आवर्त्यमानैरावाह्य पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥ धूपितं प्रणवेनाभिमन्त्र्य देव्या समर्पयेत् ॥ ३४ ॥ एतत्ते कथितं देव्याः पवित्रारोपणं शुभम् ॥ अन्येषां चैव देवानां प्रतिपत्प्रभृतिष्वपि ॥ ३५ ॥ पवित्रारोपणं कार्यं देवतास्ता वदामि ते ॥ धनदः श्रीस्तथा गौरी गणेशः सोमराड्गुरुः ॥ ३६ ॥ भास्करश्चण्डिकाम्बा च वासुकिश्च तथर्षयः ॥ चक्रपाणिर्ह्यनन्तश्च शिवः कः पितरस्तथा ॥ ३७ ॥ प्रतिपत्प्रभृतिष्वेताः पूज्यास्तिथिषु देवताः ॥ मुख्यया देवतायास्तु पवित्रारोपणं त्विदम् ॥ ३८ ॥ तदङ्गदेवतायास्तु त्रिसूत्रं स्यात्पवित्रकम् ॥ ३९ ॥ ईश्वर

गौरी, गणेश, चन्द्रमा, गुरु, ॥ ३६ ॥ भास्कर, चण्डिका, अम्बा, वासुकि, ऋषि, चक्रपाणि, अनन्त, शिव, ब्रह्मा, और पितर ॥३७॥ इन देवों का प्रतिपदा आदि तिथि में अर्चन करे। मैंने यह पवित्रारोपण प्रधान देवोंका कहा है ॥३८॥ अंग देवों को तीन तार वाला पवित्र समर्पण करे ॥३९॥ ईश्वर ने कहा—हे विप्रेन्द्र, सावन महीने के दोनों पक्ष की नवमी तिथि

रोज जो कुछ कर्तव्य है उसे कहूँगा ।।४०।। हे विप्रेन्द्र, नवमी रोज यथाविधि कुमारी नाम वाली दुर्गा का अर्चन कर नक्तव्रत कर दूध और सहद मिला भोजन करे ।।४१।। या दोनों पक्ष की नवमी को उपवास कर कुमारी नाम से चण्डिका का निरन्तर पूजन करे ।। ४२ ।। चाँदीकी प्रतिमा बना उसमें भक्ति द्वारा दुर्गा पापनाशिनीका कनैलफूल, गन्ध, अगर,

उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि कर्तव्यं नवमीदिने ।। श्रावणे मासि विप्रेन्द्र पक्षयोरुभयोरपि ।। ४० ।। कुमारी नामिका दुर्गा पूजनीया यथाविधिः ।। कुर्यान्नक्तव्रतं तत्र क्षीरमाक्षिकभोजनम् ।। ४१ ।। उपवासपरो वा स्यान्नवम्यां पक्षयोर्द्वयोः ।। कुमारी वेति नाम्ना वै चण्डिकामर्चयेत्सदा ।। ४२ ।। कृत्वा रौप्यमयीं भक्त्या दुर्गां वै पापनाशिनीम् ।। करवीरस्य पुष्पैस्तु गन्धैरगरुचन्दनैः ।। ४३ ।। धूपेन च दशाङ्गेन मोदकैश्चापि पूजयेत् ।। कुमारीं भोजयेत्पश्चात्स्त्रियो विप्रांश्च भक्तितः ।। ४४ ।। भुञ्जीत वाग्यतः पश्चाद् बिल्वपत्रकृताशनः ।। एवं यः पूजयेद् दुर्गां श्रद्धया परया युतः ।। ४५ ।। स याति परमं स्थानं यत्र देवो गुरुः स्थितः ।। एतत्ते नवमीकृत्यं कथितं विधिनन्दन ।। ४६ ।। सर्वपापप्रशमनं सर्वसम्पत्करं नृणाम् ।। पुत्र-

चन्दन ।।४३।। दशाङ्ग, धूप और लड्डू द्वारा पूजा करे । कुमारी को भोजन करा भक्ति से ब्राह्मण और ब्राह्मणियोंको भोजन करा दे ।। ४४ ।। फिर मौन हो बिल्वपत्र भोजन करे । जो उत्तम भक्ति द्वारा दुर्गा की पूजा कर लेता है ।।४५।।

वह गुरु जहाँ निवास करते हैं। उसी पुरुषोत्तमलोक को जाता है। हे सनत्कुमार, मैंने यह आप से नवमी विधान कहा ॥ ४६ ॥ यह प्राणियों के सब पापों को नष्ट करने वाला सब सम्पत्ति देनेवाला, पुत्र-पौत्र आदि की वृद्धि वाला और

पौत्रादिजननमन्ते सद्गतिदायकम् ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्येऽष्टम्यां देवीपवित्रारोपणं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

सनत्कुमार उवाच—भगवन्पार्वतीनाथ भक्तानुग्रहकारक ॥ कथयस्व दयासिन्धो माहात्म्यं दशमीतिथेः ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच—श्रावणे शुक्लपक्षे तु दशम्यां प्रारभेद् व्रतम् ॥ प्रतिमासे दशम्यां तु शुक्लायां व्रतमाचरेत् ॥ २ ॥ एवं द्वादशमासेषु कृत्वा व्रतमनुत्तमम् ॥ नभःशुक्लदशम्यां तु तत उद्यापनं चरेत् ॥ ३ ॥ राज्याशयो राजपुत्रः कृष्यर्थं च कृषीबलः ॥ वाणिज्यार्थं वणिक्पुत्रः पुत्रार्थं गुर्विणी तथा ॥ ४ ॥ धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं लोकः कन्या वरा-

अन्त में सद्गति दायक कहा है ॥ ४७ ॥

सनत्कुमार ने कहा—हे भगवन्, हे पार्वतीनाथ, हे भक्तानुग्रहकारक, हे दयासिन्धो, दशमी तिथि के माहात्म्य को कहो ॥ १ ॥ ईश्वर ने कहा—हे सनत्कुमार, सावन महीने की शुक्लपक्ष दशमी तिथि के रोज इस व्रत का शुभारम्भ कर। प्रति महीने की शुक्लपक्ष की दशमी तिथि रोज व्रत करे ॥ २ ॥ इस तरह बारह महीने उत्तम व्रत कर सावन शुक्ल

दशमी दिन उद्यापन करे ॥ ३ ॥ इस व्रत को राजपुत्र राज्य की आशा से, कृषक खेती के वास्ते, वैश्य पुत्र वाणिज्यार्थ गर्भिणी स्त्री पुत्र प्राप्त्यर्थ ॥४॥ प्राणीमात्र धर्म, अर्थ, काम और सिद्धि के वास्ते, कन्या पति वास्ते, श्रेष्ठ ब्राह्मण यज्ञार्थ, रोगी आरोग्यार्थ ॥ ५ ॥ अधिक समय परदेश में रहने पर पति के आगमनार्थ पत्नी व्रत करे। इनमें और दूसरे कामों

र्थिनी ॥ यष्टुकामो द्विजवरोऽरोग्यार्थमेव च ॥ ५ ॥ चिरं प्रवसिते कान्ते पत्नी तस्यागमाय च ॥ एतेष्वन्येषु कर्तव्यमाशाव्रतमिदं तदा ॥ ६ ॥ यस्माद्यस्य भवेदार्तिः कार्यं तेन तदा व्रतम् ॥ नभः शुक्लदशम्यां तु स्नात्वा सम्पूज्य देवताम् ॥ ७ ॥ नक्तमाशासु पूज्या वै पुष्पपल्लवचन्दनैः ॥ गृहाङ्गणे लेखयित्वा यवपिष्टातकेन वा ॥ ८ ॥ स्त्रीरूपाश्चाधिदेवस्य शस्त्रवाहनचिह्निताः ॥ दत्त्वा घृताक्तं नैवेद्यं पृथग्दीपांश्च दापयेत् ॥ ९ ॥ फलानि कालजातानि ततः कार्यं निवेदयेत् ॥ आशाः स्वाशाः सदा सन्तु सिद्ध्यन्तु मे मनोरथाः ॥ १० ॥ भवतीनां

में 'आशादशमी' व्रत करे ॥ ६ ॥ जिसे जिसके द्वारा दुःख हो वह सावन शुक्ल दशमी की रात नहा कर अर्चन कर व्रत करे ॥७॥ रात में दिशाओं में फूल, पल्लव, चन्दन, या यव पिसान द्वारा घर के प्रांगण में देवों को लिख ॥ ८ ॥ शस्त्र तथा वाहन सहित स्त्री चिह्न द्वारा चिह्नित कर घी निर्मित नैवेद्य दे। अलग-अलग दीपक दे ॥ ९ ॥ ऋतु समय में होने वाले फल देकर अपने काम [illegible] सिद्ध हों ॥ १० ॥ आप [illegible]

के प्रसाद से निरन्तर कल्याण हो। यों सविधि पूजा कर विप्र को दक्षिणा दे ॥ ११ ॥ इसी तरह से हर महीने निरन्तर व्रत करे। हे मुनिश्रेष्ठ, एक साल तक व्रत कर उद्यापन करे ॥ १२ ॥ सोने, चाँदी या पिसान की दश दिशाओं की प्रतिमा बनवा जाति-बन्धुजनों के सहित स्नानकर वस्त्राभूषण से अलंकृत हो ॥ १३ ॥ भक्तियुक्त मन से घर के चौक में

प्रसादेन सदा कल्याणमस्त्विति ॥ एवं सम्पूज्य विधिवद्दत्त्वा विप्राय दक्षिणाम् ॥ ११ ॥ अनेन क्रमयोगेन मासि मासि सदा चरेत् ॥ वर्षमेकं मुनिश्रेष्ठ तत उद्यापनं चरेत् ॥ १२ ॥ सौवर्णीः कारयेदाशा रौप्याः पिष्टातकेन वा ॥ ज्ञातिबन्धुजनैः सार्धं स्नातः सम्यगलंकृतः ॥ १३ ॥ पूजयेद्भक्तियुक्तेन चेतसा दश देवताः ॥ स्थापयेत्क्रमयोगेन मन्त्रैरेभिर्गृहाङ्गणे ॥ १४ ॥ त्वयि सन्निहितः शक्रः सुरासुरनमस्कृतः ॥ स्वामी च भुयनस्यास्य ऐन्द्रीदिग्देवते नमः ॥ १५ ॥ अग्नेः परिग्रहादाशे त्वमाग्नेयीति पठ्यते ॥ तेजरूपा पराशक्तिरतस्त्वं वरदा भव ॥ १६ ॥ धर्मराजः समाश्रित्य लोकान् संयमयत्यसौ ॥ तेन संयमिनी चासि याम्ये सत्कामदा भव ॥ १७ ॥

क्रम द्वारा मन्त्र से दिशाओं का आवाहन, स्थापन तथा पूजन करे ॥१४॥ ये दिशाओं के मन्त्र ये हैं–दिशा देवता ऐन्द्री, सुर तथा असुर नमस्कृत इस संसार का स्वामी इन्द्र आप के पास निवास करता है। ऐसे आप को नमस्कार है ॥ १५ ॥ हे आशे, अग्निदेवता के रहने से 'आग्नेयी' पढ़ी जाती हैं। आप तेजरूपा पराशक्ति हैं अतः हे आग्नेयी, मेरे लिये आप

वर देने वाली हों ॥ १६ ॥ हे याम्ये, आप का आश्रय ले यह धर्मराज सब संसार को दण्ड देते हैं । अतः आप को 'संयमनी' कहते हैं । हे संयमनि, आप उत्तम कार्य को मेरे लिये देने वाली हो ॥१७॥ हे आशे, हाथ में खड्ग लिये अत्यन्त विकरालरूपी मृत्यु देव निर्ऋति स्थान में आप निवास करती हैं अतः आप निर्ऋति रूपा हो । हे नैर्ऋते,

खड्गहस्तातिविक्रान्ता निर्ऋतिस्थानमाश्रिता ॥ तेन निर्ऋतिरूपासि त्वमाशां पूरयस्व मे ॥ १८ ॥ त्वय्याऽस्ते भुवनाधारो वरुणो यादसांपतिः ॥ कार्यार्थं मम धर्मार्थं वारुणि प्रवणा भव ॥ १६ ॥ अधिष्ठितासि यस्मात्त्वं वायुना जगदादिना ॥ वायव्ये त्वमतः शान्तिं नित्यं यच्छ ममालये ॥ २० ॥ धनाधिपाधिष्ठितासि प्रख्याता त्वमिहोत्तरा ॥ निरुत्तरा भवास्मासु दत्त्वा सद्यो मनोरथम् ॥ २१ ॥ ऐशानि जगदीशेन शम्भुना त्वमलंकृता ॥ पूरयस्व शुभे देवि वाञ्छितानि नमो नमः ॥ २२ ॥ सर्वलोकोपरिगता सर्वदा त्वं शिवप्रदा ॥ सनकाद्यैः परिवृता

मेरी आशा को आप पूर्ण करो ॥ १८ ॥ हे वारुणि, भुवन आधार तथा जलजन्तु अधिपति वरुण देव आप में निवास करते हैं । हे वारुणि, मेरे कार्य के लिये आप और धर्म के लिये तत्पर हों ॥१६॥ हे वातव्ये, संसार के आदि कारण प्राणरूप वायु देव से अधिष्ठित आप हैं । हे वायव्ये, मेरे घर में आप प्रतिदिन शान्ति दें ॥२०॥ हे कौबेरि, आप की दिशा में कुबेर देव निवास करते हैं । आपको उत्तरा कहा है । मेरे मनोरथों को दे आप जल्दी मेरे चित्त में निरुत्तरा

हों ॥ २१ ॥ हे ऐशानि, आप जगदीश शंभु से अलंकृत हो। हे शुभे, हे देवि, मेरे वाञ्छितों को परिपूर्ण करें। आप को नमस्कार है। नमस्कार है ॥ २२ ॥ सब संसार के ऊपर निवास करने वाली, सदा कल्याणदा, सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार आदि मुनिगणों के संग रहने वाली सदा आप मेरी रक्षा करें ॥ २३ ॥ सब नक्षत्र, ग्रह, तारागण,

मां त्राहि त्राहि सर्वदा ॥ २३ ॥ नक्षत्राणि च सर्वाणि ग्रहास्तारागणास्तथा ॥ नक्षत्रमातरो याश्च भूतप्रेतविनायकाः ॥ २४ ॥ पूजितास्तु मया भक्त्या भक्तिप्रवणचेतसा ॥ सर्वे ममेष्टसिद्ध्यर्थं भवन्तु प्रवणाः सदा ॥ २५ ॥ भुजङ्गनकुलेन त्वं सेवितासि यतो ह्यधः ॥ नागाङ्गनाभिः सहिता तुष्टा भव ममाद्य वै ॥ २६ ॥ एभिर्मन्त्रैः समभ्यर्च्य पुष्पधूपादिना ततः ॥ अलङ्कारांश्च वासांसि फलानि च निवेदयेत् ॥ २७ ॥ ततो वाद्यादिनादेन गीतनृत्यादिमङ्गलैः ॥ नृत्यतीभिर्वरस्त्रीभिर्जागरणो निशां नयेत् ॥ २८ ॥ कुंकुमाक्षतताम्बूलदानामानादिभिः सुखम् ॥ अति-

नक्षत्र—माता, भूत, प्रेत, विनायक ॥ २४ ॥ तथा भक्तियुक्त मन से दिग्देवोंका पूजन किया है। वे देवता सदा मुझको अभीष्ट सिद्धि देने वाले हों ॥२५॥ साँप तथा नेवला से नीचे के लोक में आप सेवित हैं। आज आप मेरे ऊपर नागांनाओं के साथ राजी हों ॥ २६ ॥ इन मन्त्रों को पढ़ पुष्प, धूप आदि द्वारा अर्चन कर अलंकार, वस्त्र और फल निवेदन करे ॥ २७ ॥ वाद्य आदि के नाद से गीत, नृत्य आदि मंगलों से तथा नाच करने वाली वेश्याओं के नाच से

जाग कर रात समाप्त करे ॥२८॥ कुङ्कुम, अक्षत, ताम्बूल, दान आदि से तथा प्रसन्न युक्त मन से उस रात को समाप्त करे ॥ २९ ॥ सुबह फिर प्रतिमा की पूजा कर ब्राह्मण को दे । इस विधान द्वारा अर्चन तथा क्षमापन कर प्रमाण करे ॥ ३० ॥ मित्रों तथा इष्ट बन्धुओं सहित भोजन करे । हे तात, इस तरह आदर से जो दशमी व्रत करता है ॥ ३१ ॥ वह

वाह्य च तां रात्रिं हर्षयुक्तेन चेतसा ॥ २९ ॥ प्रभाते प्रतिमां अर्च्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ अनेन विधिना कृत्वा क्षमाप्य प्रणिपत्य च ॥ ३० ॥ भुञ्जीत मित्रैः सहितः सुहृद्बन्धुजनेन च ॥ एवं यः कुरुते तात दशमीव्रतमादरात् ॥ ३१ ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति मनसोऽभिमता-न्नरः ॥ स्त्रीभिर्विशेषतः कार्यं व्रतमेतत्सनातनम् ॥ ३२ ॥ प्राणिवर्गे यतो नार्यः श्रद्धाकाम-परायणः ॥ धन्यं यशस्यमायुष्यं सर्वकामफलप्रदम् ॥ ३३ ॥ कथितं च मुनिश्रेष्ठ मया व्रतमिदं तव ॥ नानेन सदृशं चान्यद् व्रतमस्ति जगत्त्रये ॥ ३४ ॥ ये मानवा विधिजपुङ्गव कामकामाः सम्पूजयन्ति दशमीषु सदा दशाशाः ॥ तेषामशेषनिहितान्हृदयेऽतिकामानाशाः फलन्ति

स्वेच्छानुसार सब इच्छा प्राप्त कर लेता है । इस सनातन व्रत को निश्चित स्त्रियाँ करें ॥ ३२ ॥ क्योंकि प्राणिमात्र में स्त्री श्रद्धा तथा नाना इच्छाओं से युक्त रहती हैं । हे मुनिश्रेष्ठ, यह व्रत धन, यश, आयुष्य तथा सबइच्छाओं के फल का दाता है ॥ ३३ ॥ इस व्रत को आप से मैंने कहा— हे मुनिश्रेष्ठ, तीनों लोकों में इस व्रत के तुल्य अन्य व्रत नहीं है

॥ ३४ ॥ हे द्विज पुङ्गव, इच्छाओं के फल की कामना करने वाले जो प्राणी सदा दशमी रोज दिशाओं की पूजा करते हैं। उनके मनकी सब इच्छाओं को दिशा-देवता सुसफलीभूत करते हैं। हे ब्रह्मपुत्र, इसमें विशिष्ट कथन से क्या लाभ ॥३५॥

किमिहास्ति बहूदितेन ॥ ३५ ॥ मोक्षप्रदाने नायासो नात्रकार्या विचारणा ॥ व्रतं चानेन सदृशं न भूतं न भविष्यति ॥ ३६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमास-माहात्म्ये आशादशमीव्रतकथनं नामाऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

ईश्वर उवाच—अथ वक्ष्ये नाभोमासि पक्षयोरुभयोरपि ॥ एकदश्यां तु यत्कृत्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ १ ॥ न कस्यचिन्मयाख्यातं गुह्यमेतदनुत्तमम् ॥ महापुण्यप्रदं वत्स महापातकनाशनम् ॥ २ ॥ वाञ्छितार्थप्रदं नृणां श्रुतं पापापहारकम् ॥ श्रेष्ठं व्रतानां सर्वेषां शुभमेकादशी

यह व्रत मोक्षफल प्रदाता है—इसमें विचार न करें। इस व्रत के तुल्य अन्य व्रत न हुआ, न होगा ॥ ३६ ॥

ईश्वर ने कहा—हे महामुने, सावन महीने के दोनों पक्षों की एकादशी तिथि रोज जो कार्य करना होगा उसे मैं कहूँगा। उसे आप सुनो ॥ १ ॥ हे वत्स, इस व्रत को मैंने किसी से भी नहीं कहा। यह गुप्त योग्य उत्तम बड़ा पुण्य दायक तथा बड़े पापों को नष्ट करने वाला है ॥ २ ॥ प्राणियों के अभिलषित फलदाता सावन मास पापनाशक और

सब व्रतों में उत्तम यह पवित्र एकादशी व्रत है ॥ ३ ॥ हे विप्र, उसे आप से मैं कहूँगा । आप एकाग्रमन हो सुनें । दशमी रोज सुबह नहा तथा सन्ध्या कर पवित्र हो ॥ ४ ॥ गुरुदेवों की आज्ञा से वेदवेत्ता पुराण ज्ञाता जितेन्द्रिय द्विजों का पूजन करे । देवदेवेश भगवान् विष्णु का सोलह उपचारों से पूजा करे ॥ ५ ॥ प्रार्थना करे हे पुण्डरीकाक्ष, मैं दूसरे

व्रतम् ॥ ३ ॥ ततोऽहं सम्प्रवक्ष्यामि समाहितमनाः शृणु ॥ दशम्यामुषसि स्नात्वा कृतसन्ध्यादिकः शुचिः ॥ ४ ॥ प्राप्याज्ञां वेदविदुषः पुराणज्ञाञ्जितेन्द्रियान् ॥ सम्पूज्य देवदेवेशं षोडशैरुपचारकैः ॥ ५ ॥ एकादश्यां निराहारः स्थित्वाऽहमपरेऽहनि ॥ भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥ ६ ॥ कुर्याच्च नियमं वत्स गुरुदेवाग्निसन्निधौ ॥ तद्दिने भूमिशायी स्यात्कामक्रोध विवर्जितः ॥ ७ ॥ ततः प्रभाते विमले केशवार्पितमानसः ॥ श्रीधरेति तदा वाक्यं क्षुतप्रस्खलनादिषु ॥ ८ ॥ पाखण्डादिभिरालापं दर्शनं श्रवणं तथा ॥ त्यजेद्दिनत्रयं वत्स व्रतं

रोज आने वाली एकादशी निराहारी रहूँगा । उसके अन्य रोज भोजन करूँगा । हे अच्युत, मेरे आप रक्षक हों ॥ ६ ॥ हे वत्स, उस रोज गुरुदेव तथा अग्नि के समीप नियम कर भूमिपर सोवे काम और क्रोध छोड़ ॥७॥ एकादशी रोज सुबह भगवान् केशव में चित्त लगा रास्ते चलते समय वार्ता करते हुए आदि सब करता श्रीधर इस वाक्य को कहे ॥ ८ ॥ हे वत्स, तीन रोज पाखण्ड आदि सहित वार्ता-लाप और उनका देखना उसकी वार्ता श्रवण भी त्यागे । हे वत्स, ऐसा

करने मात्र से व्रत मोक्ष फलदाता हो जाता है ॥ ६ ॥ मध्याह्न के समय पंचगव्य ले नदी आदि के सुन्दर जल में अक्रोधी हो स्नान करे ॥ १० ॥ भगवान् सूर्य को नमस्कार कर श्रीधर की शरण में जाकर वर्णों के अनुसार अपने आचार से सब कामको कर घर जाये ॥११॥ घर में आने पर श्रद्धा तथा भक्ति द्वारा भगवान् श्रीधर का पुष्प, धूप, दीप

कैवल्यकारकम् ॥ ६ ॥ ततो मध्याह्नसमये नद्यादौ विमले जले ॥ स्नानं कुर्याज्जितक्रोधः पञ्चगव्यपुरःसरम् ॥ १० ॥ आदित्याय नमस्कृत्य श्रीधरं शरणं व्रजेत् ॥ स्ववर्णाचारविधिना कृतकृत्यो गृहं व्रजेत् ॥ ११ ॥ पूजयेच्छ्रीधरं तत्र श्रद्धाभक्तिपुरःसरम् ॥ पुष्पधूपैस्तथा दीपै-र्नैवेद्यैर्विविधैरपि ॥ १२ ॥ गीतवाद्यैः कथाभिश्च जागरं कारयेन्निशि ॥ कुम्भं संस्थापयित्वा तु रत्नगर्भं सकाञ्चनम् ॥ १३ ॥ छादितं वस्त्रयुग्मेन सितचन्दनचर्चितम् ॥ प्रतिमां देवदेवस्य शंखचक्रगदाभृताम् ॥ १४ ॥ कृत्वा यथावत्सम्पूज्य प्रभाते विमले सति ॥ द्वादश्यां कृतकृत्यस्तु श्रीधरेति जपेद् बुधः ॥ १५ ॥ पूजयेद्देवदेवेशं शंखचक्रगदाधरम् ॥ विप्राय दद्यात्कलशं हेम-

और अनेक तरह के नैवेद्य से अर्चन करे ॥१२॥ रात को गीत, वाद्य तथा कथा सुनता हुआ जागे। पहले घड़े स्थापन कर पञ्चरत्न और सोने को कलश में डाल सफेद चन्दन से पूजा कर दो कपड़ों से ढके ॥ १३ ॥ देवदेव की प्रतिमा शङ्ख, चक्र तथा गदा युक्त कर ॥१४॥ सविधि पूजा कर द्वादशी रोज विद्वान् सुबह आह्निक कर 'श्रीधर' इस नाम

को जपे ॥१५॥ शङ्ख, चक्र, गदाधारी भगवान् देवदेवेश की पूजा कर सोने की दक्षिणा सहित कलश ब्राह्मण को दे ॥१६॥ ब्राह्मण को उस घड़े दान सहित मक्खन अवश्य दे। यह कहे भगवान, श्रीधर, प्रसन्न हों तथा मुझे उत्तम लक्ष्मी दें ॥ १७ ॥ यों कह जगद्गुरु श्रीधर का अर्चन कर श्रेष्ठ द्विजों को भोजन करा दक्षिणा स्वशक्ति से दे ॥१८॥

दक्षिणयान्वितम् ॥ १६ ॥ विशेषान्नवनीतं तु तत्र देयं द्विजातये ॥ श्रीधरः प्रीयतां मेऽद्य श्रियं पुष्णात्वनुत्तमाम् ॥१७॥ इत्युच्चार्य मुनिश्रेष्ठ समभ्यर्च्य जगद्गुरुम् ॥ सम्भोज्य विप्रमुख्यांश्च दद्याच्छक्त्या च दक्षिणाम् ॥ १८ ॥ भृत्यादीन्भोजयित्वा तु यवसं गोषु दापयेत् ॥ स्वयं भुञ्जीत च ततः सहृद्बन्धुसमन्वितः ॥ १९ ॥ सनत्कुमारकथितक्ते शुक्लैकादशीविधिः ॥ एवमेव नभोमासि कृष्णायामपि साधयेत् ॥ २० ॥ अनुष्ठानं तुल्यमेव देवनाम्नि परं भिदा ॥ जनार्दनः प्रीयतां मे वाक्यमेतदुदीरयेत् ॥ २१ ॥ शुक्लायां श्रीधरो देवः कृष्णायां तु जनार्दनः ॥ एतत्ते

नौकर समूह को भोजन करा भूसा घास गौ को दे। सुहृद तथा स्वयं बन्धु-बान्धव के सहित भोजन करे ॥१९॥ हे सनत्कुमार, यह आप से 'शुक्लपक्ष एकादशी तिथि' का व्रत विधान कहा। इसी प्रकार सावन कृष्णपक्ष एकदशी रोज भी कार्य करे ॥ २० ॥ शुक्लपक्ष तथा कृष्णपक्ष की विधि तुल्य है। केवल नामका भेद है। कृष्णपक्ष में कहे—भगवान् जनार्दन प्रसन्न हों तथा मुझे उत्तम लक्ष्मी दें ॥२१॥ शुक्लपक्ष में भगवान् श्रीधर तथा कृष्णपक्ष में भगवान् जनार्दन

कहे हैं। आप से दोनों पक्ष की एकादशी व्रत विधान कहा ॥२२॥ इस व्रतके तुल्य कोई भी पुण्य देनेवाला व्रत न हुआ न होगा। इसे गुप्त रखे किसी दुष्ट प्रकृति चित्तवाले को न दे ॥२३॥ ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—द्वादशी रोज भगवान् विष्णु के निमित्त पवित्रारोपण कहूँगा। देवी पवित्रारोपण में प्रायः विधान आप से मैंने कहा ॥२४॥ श्री विष्णु पवित्रा

सम्यगाख्यातमुभयैकदशीव्रतम् ॥ २२ ॥ नानेन सदृशं पुण्यं न भूतं न भविष्यति ॥ इदं त्वया गोपनीयं न देयं दुष्टमानसे ॥२३॥ ईश्वर उवाच ॥ अथ वक्ष्यामि द्वादश्यां पवित्रारोपणं हरेः ॥ उक्तः प्रायो विधिर्देव्याः पवित्रारोपणे तव ॥ २४ ॥ विशेषो यश्च तं वक्ष्ये सावधानमनाः शृणु ॥ अत्राधिकारी संदिष्टस्तं शृणुष्व महामुने ॥ २५ ॥ ब्राह्मणः क्षत्त्रियो वैश्यस्तथा स्त्री शूद्र एव च ॥ स्वधर्मावस्थिताः सर्वे भक्त्या कुर्युः पवित्रकम् ॥२६॥ अतो देवेति मन्त्रेण द्विजो विष्णोर्निवेदयेत् ॥ स्त्रीशूद्राणां नाममन्त्रो येन सम्पूजयेद्धरिम् ॥२७॥ कद्रुद्रायेति मन्त्रेण द्विजः शम्भोर्निवेदयेत् ॥ स्त्रीशूद्राणां नाममन्त्रो येन सम्पूजयेद्धरिम् ॥२८॥ कृते मणिमयं कार्यं त्रेतायां हेमसम्भवम् ॥ पट्टजं

रोपण में विधि विशेष को कहूँगा उसे सावधान हो आप सुनो। हे महामुने, इसमें कौन अधिकारी है उसे भी सुनो ॥२५॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्री, शूद्र और स्वधर्म स्थित सब भक्ति द्वारा पवित्रारोपण करें ॥ २६ ॥ ब्राह्मण 'अतो देवा' इस मन्त्र से पवित्रारोपण करे। स्त्री तथा शूद्र नाममन्त्र द्वारा हरि का पूजन करें ॥२७॥ द्विज 'कद्रुदाय' इस मन्त्रसे स्त्री तथा

शूद्र नाम द्वारा भगवान् शंकर के निमित्त हरि पूजन करे ॥ २८ ॥ सतयुग में मणि का, त्रेता में सोने का, द्वापर में रेशमी तथा कलियुग में रूई का निर्माण कर ॥ २९ ॥ संन्यासी मानस पवित्रारोपण करे। पवित्रों को शुभ बाँस के पात्र में ॥ ३० ॥ रख पवित्र कपड़े से ढक भगवान् श्रीधर के सन्मुख रख कहे—हे प्रभो, आपने क्रियालोपार्थ ढका

द्वापरे सूत्रं कार्पासं तु कलौ स्मृतम् ॥२९॥ यतिभिर्मानसं कार्यं पवित्रारोपणं शुभम् ॥ कृतानि च पवित्राणि वैणवे पट्टले शुभे ॥ ३० ॥ संस्थाप्य शुचिवस्त्रेण पिधाय्य पुरतो न्यसेत् ॥ क्रियालोप विधानार्थं यत्त्वया पिहितं प्रभो ॥३१॥ मयैतत्क्रियते देव तव तुष्ट्यै पवित्रकम् ॥ न मे विघ्नो भवेद्देव कुरु नाथ दयां मयि ॥ ३२ ॥ सर्वथा सर्वदा देव मम त्वं परमा गतिः ॥ एतत्पवित्रतोऽहं त्वां तोषयामि जगत्पते ॥ ३३ ॥ कामक्रोधादयोऽप्येते न मे स्युर्व्रतघातकाः ॥ अद्यप्रभृति देवेश यावत्स्या-द्वार्षिकं दिनम् ॥३४॥ तावद्रक्षा तस्य पवित्रस्य त्वया कार्या त्वद्भक्तस्य नमोऽस्तु ते ॥ देवं सम्प्रार्थ्य कलशे पात्रे वेणुमये शुभे ॥३५॥ संस्थितस्य पवित्रस्य कुर्यात्प्रार्थनमादृतः ॥ संवत्सरकृतार्चायाः

है ॥३१॥ हे देव, आप के प्रीत्यर्थ उस पवित्र को ढकने की विधि करता हूँ। हे देव, मेरे काम में विघ्न न हो। हे नाथ, आप मेरे पर दया करो ॥३२॥ हे देव, सब तरह से मेरे आप गति हो। हे जगत्पते, आप को मैं इस पवित्र द्वारा राजी करता हूँ ॥ ३३ ॥ हे देवेश, आज से लेकर सालभर तक व्रत नाशक काम, क्रोध आदि न हो ॥ ३४ ॥ हे देवेश, मेरी

सुरक्षा तब तक करो आपका मैं भक्त हूँ। आप को नमस्कार है। इस प्रकार भगवान् श्रीधर की प्रार्थना करे। कलश पर रखे बाँस के पात्र में ॥ ३५ ॥ रख नम्रता से पवित्र की प्रार्थना करे। हे पवित्र, एक साल तक किये अर्चन से पवित्रार्थ ॥ ३६ ॥ आज विष्णुलोक से यहाँ आओ। अतः आप को नमस्कार है। हे देव, विष्णु तेज से उत्पन्न रमणीय

पवित्रीकरणाय भोः ॥३६॥ विष्णुलोकात्पवित्राद्य आगच्छेहं नमोऽस्तु ते ॥ विष्णुतेजोद्भवं रम्यं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ ३७ ॥ सर्वकामप्रदं देव तवाङ्गे धारयाम्यहम् ॥ आमन्त्रितोऽसि देवेश पुराणपुरुषोत्तमम् ॥ ३८ ॥ अतस्त्वां पूजयिष्मामि सान्निध्यं कुरु ते नमः ॥ निवेदयाम्यहं तुभ्यं प्रातरेतत्पवित्रकम् ॥ ३९ ॥ ततः पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ एकादश्यामधिवसेद् द्वादश्यामर्चयेद्बुधः ॥ ४० ॥ गन्धदूर्वाक्षतैर्युक्तं समादाय पवित्रकम् ॥ देवदेव नमस्तुभ्यं गृहाणेदं पवित्रकम् ॥४१॥ पवित्रीकरणार्थाय वर्षपूजाफलप्रदम् ॥ पवित्रं मां कुरुष्वाद्य यन्मया दुष्कृतं कृतम्

तथा सब पाप नाशक ॥३७॥ सब इच्छाओं के प्रदाता आप के शरीर में पवित्र को ग्रहण करता हूँ। हे देवेश, हे पुराण-पुरुषोत्तम, आप मुझ द्वारा निमन्त्रित हैं ॥३८॥ अतः आपका का पूजन करूँगा। मेरे आप सामीप्य हो, आपको नमस्कार है। हे देव, सुबह आप के निमित्त इस पवित्र को अर्पण करूँगा ॥३९॥ फिर पुष्पांजलि दे रात में जागरण कर एकादशी रोज अधिवासन कर द्वादशी रोज सुबह पूजा करे ॥ ४० ॥ गन्ध, दूर्वा, चावल तथा हाथ में पवित्र को ग्रहण कर कहे—हे

देवदेव, आपको नमस्कार है। इस पवित्र को आप स्वीकार करें ॥४१॥ पवित्रार्थ के निमित्त एक लाख सालतक पूजा के फलप्रद पवित्र को निवेदन करे। आप मुझे पवित्र करें। हे देव, जो मैंने कुछ पाप किया है ॥४२॥ हे देव, हे सुरेश्वर, आप के सुप्रसाद द्वारा उस पाप से मैं पवित्र होऊँ। मूलमन्त्र द्वारा पवित्र को संपुटित कर दे ॥ ४३ ॥ महानैवेद्य दे।

॥ ४२ ॥ शुद्धो भवाम्यहं देव त्वत्प्रसादात्सुरेश्वर ॥ मूलसम्पुटितैरेतैर्मन्त्रैर्दद्यात्पवित्रकम् ॥ ४३ ॥ महानैवेद्यकं दत्त्वा नीराज्यं प्रार्थयेत्ततः ॥ मूलमन्त्रेण जुहुयाद्वह्नौ सघृतपायसम् ॥४४॥ विसर्जयित्वा मन्त्रेण अनेनैव पवित्रकम् ॥ सांवत्सरीं शुभां पूजांसम्पाद्य विधिवन्मम ॥ ४५ ॥ व्रजेदानीं पवित्र त्वं विष्णुलोकं विसर्जितम् ॥ उत्तार्य ब्राह्मणे दद्यात्तोये वाथ विसर्जयेत् ॥४६॥ एतत्ते कथितं वत्स पवित्रारोपणं हरेः ॥ इहलोके सुखं भुक्त्वा अन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये उभयैकादशीव्रतकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

नीराजन तथा प्रार्थना करे। मूलमन्त्र से अग्नि में घृत तथा पायस द्वारा हवन करे ॥ ४४ ॥ इसी मन्त्र द्वारा पवित्र का विसर्जन कर कहे—हे पवित्र, एक साल मेरे पूजन को सविधि परिपूर्ण करें॥ ४५ ॥ हे पवित्र विसर्जित हो विष्णुलोक जाओ। यों कह ब्राह्मण को दे या जलमें डाल दे ॥४६॥ हे वत्स, मैंने भगवान् विष्णुका आपसे पवित्रारोपण विधि कही। हे वत्स, जो कोई हरिका इस भाँति पवित्रारोपण करता है। वह इस संसारमें आनन्द भोग अन्तमें वैकुण्ठ जाता है ॥४७॥

हे वत्स, जो कोई हरिको इस भाँति पवित्रारोपण करता है । वह इस संसारमें आनन्द भोग अन्तमें वैकुण्ठ जाता है ॥४७॥

ईश्वर ने सनत्कुमार से कहा—हे सनत्कुमार, आप के समक्ष त्रयोदशी दिन के कार्य को कहता हूँ, उस दिन का देव का सोलह उपचारों से पूजन करे ॥ १ ॥ अशोक, मालती, पद्म, देवप्रिय, कौसुम्भ, वकुल तथा अन्य मादक पुष्प ॥२॥ लाल चावल, पीले चन्दन, सुगन्धित शुभ द्रव्य, पौष्टिकजनक द्रव्य और दूसरे वीर्यवर्धक द्रव्यों का ॥ ३ ॥

ईश्वर उवाच—त्रयोदशीदिने कृत्यं कथयामि तवाग्रतः ॥ अत्रानङ्गः पूजनीयः षोडशोपचारकैः ॥ १ ॥ अशोकैर्मालतीपुष्पैः पद्मैर्देवप्रियैस्तथा ॥ कौसुम्भैर्बकुलैः पुष्पैस्तथान्यैरपि मोदकैः ॥ २ ॥ रक्ताक्षतैः पीतगन्धैर्द्रव्यैः सौगन्धिकैः शुभैः ॥ पुष्टिकाजनकैर्द्रव्यै रेतोवृद्धिकरैः परैः ॥ ३ ॥ नैवेद्यमर्पयेच्चैव ताम्बूलं मुखरोचकम् ॥ ताम्बूले योजयेद् द्रव्यं चिक्कणं क्रमुकं शुभम् ॥ ४ ॥ खादिरं चूर्णकं जातित्वचं जातिफलं तथा ॥ लवङ्गैलानारिकेलबीजस्य शकलं लघु ॥ ५ ॥ स्वर्णरूप्याणि पत्राणि कर्पूरं केशरं तथा ॥ जातानि मगधे देशे नागवल्लीदलानि च ॥ ६ ॥ श्वेतवर्णानि पक्वानि जीर्णानि च दृढानि च ॥ रक्तयुक्तानि देयानि प्रीतये शम्बर-

नैवेद्य समर्पण कर मुखरोचक पान दे । उस पान में शुभ चिकनी पूगफल ॥ ४ ॥ कत्था, चूना, जावित्री, जायफल, लवंग, इलायची गिरी के अल्प अल्प टुकड़े ॥ ५ ॥ केशर कपूर तथा सोने, चाँदी के तबक ऊपर से लगे हों । मगध देशीय प्रादुर्भूत पान ॥ ६ ॥ सफेद वर्ण के परिपक्व अधिक रोज की पुरानी, अच्छी, रस युक्त हों । ऐसे पान को

शम्बरासुर के शत्रु के प्रीति के लिए दे ।।७।। माक्षिक मलसार द्वारा निर्मित बत्तियों से आरती कर पुष्पाजलि दे ।।८।। कामदेव के नामों को कह कर प्रार्थना करे । हे विप्र, आप से मैं उन नामों को कहता हूँ । सर्वोपमान सौन्दर्य, प्रद्युम्न नामक भगवान् कृष्ण पुत्र ।। ९ ।। मीनकेतन, कन्दर्प, अनंग, मन्मथ, मार, कामात्मसम्भूत, झषकेतु तथा मनोभव

द्विषः ।। ७ ।। माक्षिकमलसारेण निर्मिताभिश्च वर्तिभिः ।। नीराजयेच्चित्तभवं पुष्पाञ्जलिमथार्पयेत् ।। ८ ।। प्रार्थयेन्नामभितस्य तानि ते कथयाम्यहम् ।। सर्वोपमानसौन्दर्यः प्रद्युम्नाख्यो हरेः सुतः ।। ९ ।। मीनकेतनकन्दर्पकानङ्गा मन्मथस्तथा ।। मारः कामात्मसम्भूतो झषकेतुर्मनोभवः ।। १० ।। रतिपीनघनोत्तुङ्गस्तनयोः पत्रवल्लिका ।। यस्य वक्षसि कस्तूर्याः शोभते परिरम्भणात् ।। ११ ।। पुष्पधन्वञ्छम्बरारे कुसुमेषो रतेः पते ।। मकरध्वज पञ्चेषो मदनस्मर सुन्दर ।।१२।। देवानां कार्यसिद्ध्यर्थं शिवक्षिप्तहुताशन ।। परोपकारसीमानं ध्वनयंस्तेन कर्मणा ।। १३ ।। निमित्तमात्रं विजये वसन्तस्य सहायता ।। त्वन्मनोरञ्जने शक्रस्तिष्ठत्येव दिवानिशि ।। १४ ।।

जिसके वक्षःस्थल में रति के पीन, कठिन, ऊपर उठे हुए स्तनों पर कस्तूरी द्वारा निर्मित पत्रवल्लि के चिह्न आलिंगन करने मात्र से सुशोभित होते हैं ।। १०-११ ।। पुष्पधन्वन्, शम्बरारे, कुसुमेषोरतिपते, मकरध्वज, पञ्चेषो, मदन, स्मर, सुन्दर ।। १२ ।। देवों की कामना सिद्धि के निमित्त शिव से भस्मीभूत, आप उस कार्य से परोपकारी सीमा कहा जाता

है ॥ १३ ॥ विजय में आप ऋतु वसन्त के निमित्तमात्र सहायक हैं। आप के मनोरंजन निमित्त रात-दिन इन्द्र तैयार रहते हैं ॥ १४ ॥ क्योंकि तपस्वियों से वही इन्द्र अपने स्थान के नष्ट के बारे में डरा करते हैं। आप को छोड़ कौन अन्य सुदृढ़ मन से विरोध शंकर के साथ कर सकता है ॥१५॥ आप को छोड़ परब्रह्मानन्द तुल्य अन्य आनन्ददाता

स्वपदभ्रंशने यस्मात्तपस्विभ्यो बिभेति सः ॥ त्वदन्यः शम्भुना कोऽन्यो विरुध्येद्दृढमानसः ॥ १५ ॥ परब्रह्मानन्दसमानन्ददस्त्वदृतेऽत्र कः ॥ महामोहस्य सैन्येषु त्वादृशः कोऽस्ति वीर्यवान् ॥ १६ ॥ अनिरुद्धपतिः कृष्णात्मजो यश्च सुरप्रभुः ॥ मलयाचलसम्भूतचन्दनागरु-वासितः ॥ १७ ॥ दक्षिणादिङ्मातरिश्वा सहायस्ते जगज्जये ॥ शरत्सुधांशुसन्मित्र जगत्सर्जन-कारण ॥ १८ ॥ नाथ त्वदं परममोघमतिदूरगम् ॥ मर्मच्छिदामकरुणं रहितं प्रतिकारतः ॥ १९ ॥ सुकुमारं श्रुतमपि निःसीमक्षोभकारणम् ॥ स्वतुल्यस्य पदार्थस्य दर्शनादपि

कौन है। आप के तुल्य महामोह सेना में अन्य कौन वीर्यशाली है ? ॥ १६ ॥ आप अनिरुद्ध पति कृष्ण पुत्र सुर प्रभु, मलयाचल संभूत चन्दन तथा अगरु सुगन्धित हैं ॥ १७ ॥ संसार के विजय में दक्षिणदिशा की वायु सहायक आपका है। शरद् ऋतु चन्द्रमा के उत्तम मित्र, जगत्सर्जन कारण ॥ १८ ॥ नाथ, आप का अस्त्र उत्तम अमोघ, अति दूरगामी करने वाला, मर्मच्छेदियों में करुणा रहित तथा प्रतिकार रहित है ॥ १९ ॥ वह सुकुमार उत्तम है। परन्तु निःसीमक्षोभ

कारण है। स्व तुल्य पदार्थ दर्शन का साधक है ॥ २० ॥ हे विभो, संसार के विजय में प्रवृत्ति स्वरूप मुख्य अलंकार सहायक है। हे विभो, आपने सभी उत्तम देवों को हँसी का पात्र बनाया है ॥ २१ ॥ आपके ही निमित्त ब्रह्मा पुत्री में लम्पट, भगवान् विष्णु वृन्दा में आसक्त तथा शङ्कर पर स्त्री कलंक से अस्पृश्य हुए ॥ २२ ॥ इन्द्र ने अपनी शक्ति में

साधकम् ॥ २० ॥ प्रवृत्तिमुख्यालङ्कार सहायेन जगज्जये ॥ सर्वे श्रेष्ठास्त्वया देवा उपहास्याः कृता विभो ॥ २१ ॥ ब्रह्मा कन्यालम्पटोऽभूद्वृन्दासक्तो हरिः स्मृतः ॥ परदारकलङ्केन अस्पृश्यः शिवो यतः ॥ २२ ॥ स्वशक्त्यामेव निरतो बहुकालं व्यवायवान् ॥ दुष्कर्मनिरतश्चेन्द्रो गौतमस्य वधूं प्रति ॥ २३ ॥ द्विजराजो गुरोर्भार्यां बलादेवापहारवान् ॥ विश्वामित्रस्तपो भ्रष्टः केनाकारि च भूयसः ॥ २४ ॥ उक्ताः प्राधान्यतस्त्वेते किं बहूक्तेन मानद ॥ विरलाः सन्ति लोकेऽस्मिन्ब्राह्मणा वशवर्तिनः ॥ २५ ॥ तस्मात्प्रसीद भगवन्कृतया पूजयाऽनया ॥

हो कर गौतम की पत्नी के संग दुष्कर्म में निरत हो बहुत काल व्यतीत किया ॥ २३ ॥ बलात्कार द्वारा चन्द्रमा ने बृहस्पति की पत्नी को चुराया तथा बारंबार विश्वामित्र को किसने तपोभ्रष्ट किया ॥ २४ ॥ हे मानद, प्रधान्यतया इन लोगों का कहा है, अधिक कहने में लाभ क्या है। हे मानद, इस संसार में बिरले ही जितेन्द्रिय ब्राह्मण मिलेंगे, आप ने वशीभूत जिन्हें न किया हो ॥२५॥ हे भगवन्, अतः इस पूजा से सुप्रसन्न हों। श्रावण शुक्ला तेरस के रोज कामदेव पूजित

हो जाने से ॥२६॥ प्रवृत्तिमार्ग लंपट जीव को आप अत्यधिक वीर्य तथा पुष्टि देते हैं और निवृत्तिमार्ग में लगे हुए निरत जीव के काम रूपी विकार हर लेते हैं ॥ २७ ॥ सकामी के लिये रमणीय, ऊपर उटे हुए स्थानों वाली शरद्ऋतु जन्य पूर्णचन्द्रमा तुल्य रश्मि मुख वाली तथा कमलनेत्र वाली ॥ २८ ॥ अति नील रंग के घुघुराले चिकले बालों वाली,

पूजितः श्रावणे शुक्लत्रयोदश्यां मनोभवः ॥ २६ ॥ प्रवृत्तिलम्पटस्यातिवीर्यं पुष्टिं ददात्यलम् ॥
निवृत्तिमार्गनियतः स्वविकारं हरत्यपि ॥ २७ ॥ सकामस्य स्त्रियो रम्याः पीनोत्तुङ्गपयोधराः ॥
शरत्पूर्णसुधारश्मिवदनाः कमलेक्षणाः ॥ २८ ॥ लम्बातिनीलकुरलस्निग्धकेश्यः सुनासिकाः ॥
रम्भोरूर्वा गुप्तगुल्फा गतिनिर्जितकुञ्जराः ॥ २६ ॥ कामागारा जिताश्वत्थपलाशा अतिशोभनाः ॥
बृहच्छ्रोण्यः कम्बुकण्ठ्यो बृहज्जघनशोभिताः ॥ ३० ॥ बिम्बोष्ठ्यः सिंहकट्यश्च नानालङ्कार-
भूषिताः ॥ मनोरमा ददात्येष सन्तुष्टः श्रावणेऽर्चया ॥ ३१ ॥ शुक्लपक्षे त्रयोदश्यां ददाति च

रमणीया नाक वाली, केले के तुल्य जंघा वाली, गुप्त गुल्फवाली, गति में गज के तरह गामिनी ॥ २६ ॥ पीपल के पत्र तुल्य कामागार योनिवाली, अधिक शोभायमान, बड़े श्रोणिवाली, शङ्ख तुल्य गलेवाली, बड़े जघनों द्वारा सुशोभित ॥ ३० ॥ बिम्बफल तुल्य ओठो वाली, सिंह तुल्य कटिवाली, नाना अलंकार विभूषित और मनोरमा श्रावण में पूजा से राजी हो कर देते हैं ॥३१॥ श्रावण शुक्लपक्ष त्रयोदशीके रोज अर्चित हो चिरायु, गुणसंपन्न, सुखदायी, श्रेष्ठ, बहुत सन्तान

देते हैं ॥ ३२ ॥ हे मानद, त्रयोदशी के कार्य को आप से मैंने कहा चतुर्दशी रोज के कार्य को आप सुनें ॥ ३३ ॥
हे विप्र, जो अष्टमी रोज आप से देवी का पवित्रारोपण कहा है । उसी रोज न किया हो तो चतुर्दशी रोज करे ॥ ३४ ॥
भगवान् शंकर को चतुर्दशी रोज पवित्रार्पण करे । देवी तथा विष्णु तुल्य ही पवित्र निर्माण प्रकार है ॥ ३५ ॥ केवल

सुतान्बहून् ॥ चिरायुषो गुणाढ्यांश्च सुखरूपान् सुसन्ततीन् ॥ ३२ ॥ कर्तव्यं यत्त्रयोदश्या-
मेतत्ते कथितं शुभम् ॥ अतः परं चतुर्दश्यां कर्तव्यं शृणु मानद ॥ ३३ ॥ अष्टम्यां कथितं
देव्याः पवित्रारोपणं तव ॥ तत्र चेन्न कृतं तर्हि चतुर्दश्यां तु कारयेत् ॥ ३४ ॥ पवित्रं तु
त्रिनेत्रस्य चतुर्दश्यां समर्पयेत् ॥ पवित्रसाधनं सर्वं देवीविष्णुपवित्रवत् ॥ ३५ ॥ ऊहः परं
प्रकर्तव्यः प्रार्थनादिषु नामसु ॥ शैवागमे मया प्रोक्तं जाबालादिषु यत्परम् ॥ ३६ ॥ विकल्पा-
त्कश्चिदस्तीह विशेषस्तं वदामि ते ॥ एकादशाथवा सूत्रैस्त्रिंशता चाष्टयुक्तया ॥ ३७ ॥ पञ्चाशता
वा कर्तव्यं तुल्यग्रन्थ्यन्तरालकम् ॥ द्वादशांगुलमानानि तथा चाष्टाङ्गुलानि वा ॥ ३८ ॥

प्रार्थना तथा नाम भेद कल्पना करे । मैंने शैवागम, जावाल आदि के अनुसार कहा ॥३६॥ विकल्प से कुछ यहाँ विशिष्ट
बात है । उसे मैं आप से कहता हूँ । ग्यारह, अड़तीस ॥ ३७ ॥ या पचास तार का बराबर ग्रन्थि वाले तथा तुल्य मध्य
भाग वाला पवित्र बना दे । पवित्र बारह अंगुल, आठ अंगुल प्रमाण के हों ॥३८॥ या लिंग विस्तार से या चार अंगुल

विस्तार से बना शिव प्रीत्यर्थ समर्पण करे। बाकी विधि पहले के तुल्य ही है ॥ ३९ ॥ फल आदि पहले के तुल्य ही है। हे मानद, यों करने मात्र से अन्त में कैलास जाता है। हे वत्स, मैंने यह तुमसे पूजा विधि कही. आप अब क्या

लिङ्गविस्तारमानानि चतुरङ्गुलिकानि वा ॥ अर्पयेच्छिवतुष्ट्यर्थं विधिः पूर्वोक्त एव हि ॥ ३९ ॥ फलादिपूर्वमेवोक्तमन्ते कैलासमाप्नुयात् ॥ एतत्ते कथितं वत्स किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ ४० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये त्रयोदशीचतुर्दशीकर्तव्य-कथनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

सनत्कुमार उवाच—पौर्णमास्या विधिं ब्रूहि कृपां कृत्वा दयानिधे ॥ माहात्म्यं शृण्वतां स्वामिन् श्रवणेच्छा प्रवर्धते ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच—उत्सर्जनमुपाकर्म अध्यायानां भवेदिह ॥ पौषपूर्णा माघपूर्णा अथवोत्सर्जने तिथिः ॥ २ ॥ पौषस्य प्रतिपद्वापि माघमासस्य वा भवेत् ॥

श्रवण करना चाहते हैं ॥ ४० ॥

सनत्कुमार ने कहा—हे दयानिधे, पूर्णमासी विधि को दयाकर कहो। हे स्वामिन्, माहात्म्य श्रवणार्थियों की अधिक इच्छा सुनने में बढ़ जाती है ॥१॥ ईश्वर ने कहा—हे सनत्कुमार, श्रावण शुक्ला पूर्णिमा रोज वेदोत्सर्जन-उपाकर्म होता है। या पौष मास पूर्णिमा या माघ मास पूर्णिमा तिथि उत्सर्जन की कही गई है ॥२॥ उत्सर्जन में पौष मास

या माघ मास की प्रतिपद् तिथि या रोहिणी नक्षत्र कहा गया है ॥३॥ दूसरा समय अपने-अपने शाखा के अनुसार उत्सर्जन तथा उपाकर्म दोनों एक ही समय करना उत्तम कहा है ॥ ४ ॥ अतः श्रावणमास पूर्णिमा रोज उत्सर्जन अभीष्ट है तथा बहृत शाखार्थी उपाकर्म में श्रवण नक्षत्र अभीष्ट है ॥५॥ चतुर्दशी, पूर्णमासी या प्रतिपत् तिथि रोज या किसी

ऋक्षं वा रोहिणी संज्ञमुत्सर्जनकृतौ भवेत् ॥ ३ ॥ अथवान्येषु कालेषु स्वस्वशाखानुसारतः ॥
सहप्रयोगो युक्तः स्यादुत्सर्गप्रकृतिद्वये ॥ ४ ॥ अतो नभः पौर्णमास्यामुत्सर्जनमिहेष्यते ॥ उपा-
कर्मणि चैवं स्याच्छ्रवणर्क्षं तु बह्वृचाम् ॥ ५ ॥ चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां प्रतिपद्दिवसेऽपि वा ॥
यत्र वा श्रवणर्क्षं स्याद्बह्वृचानां तु तद्दिने ॥ ६ ॥ यजुषां पौर्णमास्यां स्यात्सामगानां तु हस्तभे ॥
शुक्रगुर्वोरस्तमये उपाकर्म चरेत्सुखम् ॥ ७ ॥ आरम्भः प्रथमो न स्यादिति शास्त्रविदां मतम् ॥
ग्रहसंक्रान्तदुष्टे तु काले कालान्तरे भवेत् ॥ ८ ॥ पञ्चम्यां हस्तयुक्तायां पूर्णायां वा नभस्यके ॥
स्वस्वगृह्यानुसारेण उत्सर्जनमुपाकृतिः ॥ ९ ॥ मलमासे तु सम्प्राप्ते शुद्धमासि तु सा भवेत् ॥

भी रोज श्रवण नक्षत्र हो उसी रोज ऋग्वेदियों का उपाकर्म होता है ॥ ६ ॥ उपाकर्म पूर्णिमा में यजुर्वेदियों तथा सामवेदियों का हस्त नक्षत्र में होता है । उपाकर्म गुरु और शुक्रास्त रहने पर भी आनन्द से करे ॥७॥ गुरु तथा शुक्रास्त में पहला उपाकर्म शुभारंभ न करे । यह शास्त्र मत है । ग्रहण तथा संक्रान्ति आदि योग युक्त समय आजाने पर उसके

काल में करे ॥ ८ ॥ हस्त नक्षत्र युक्त पंचमी या भाद्रपद पौर्णिमा रोज अपने अपने गृह्यसूत्र के नुसार उत्सर्जन, उपाकर्म करे ॥ ६ ॥ मलमास आ जाने पर शुद्ध में करे। ये दोनों उत्सर्जन और उमाकर्म नित्य है। नियम द्वारा इनको हरसाल करे ॥ १० ॥ उपाकर्म की समाप्ति होने पर द्विजातियों के समक्ष उसी सभा में स्त्री सभादीप समर्पण करे ॥ ११ ॥ उसे

नित्यं कर्मद्वयं चेदं प्रत्यब्दं नियमाच्चरेत् ॥ १० ॥ उपाकर्मसमाप्तौ तु संस्थितेषु द्विजातिषु ॥ अर्पणीयः सभादीपो योषिद्भिस्तत्र संसदि ॥ ११ ॥ आचार्यः प्रतिगृह्णाति दद्याद्वान्यद् द्विजा-तये ॥ सौवर्णे राजते वापि पात्रे ताम्रमयेऽपि वा ॥ १२ ॥ प्रस्थमात्रं तु गोधूमा दीपं तत्पिष्टसम्भवम् ॥ दीपपात्रं संविधाय ज्वालयेत्तत्र दीपकम् ॥ १३ ॥ आज्येन वाथ तैलेन वर्तित्रयसमन्वितम् ॥ सदक्षिणं सताम्बूलं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ १४ ॥ दीपं सम्पूज्य विप्रं च मन्त्रमेतमुदीरयेत् ॥ सदक्षिणः सताम्बूलः सभादीपोऽयमुत्तमः ॥ १५ ॥ अर्पितो देवदेवस्य मम

आचार्य या अन्य ब्राह्मण को दे। पहले सोने चाँदी या ताँबे के पात्र में ॥१२॥ एक सेर गोधूम रख उसके ऊपर गेहूँ के आटे का दीया बना कर रखे तथा उसे जला दे ॥ १३ ॥ घी या तेल से योग कर तीन बत्ती, ब्राह्मण को दक्षिणा पान सहित दे ॥ १४ ॥ दीया तथा ब्राह्मण पूजन कर इस मन्त्र को कहे। यह सभादीप श्रेष्ठ दक्षिणा पान सहित ॥ १५ ॥

देवदेवार्थ के लिये दिया है। इस सभादीप के देने से मेरे सब मनोरथ परिपूर्ण हो तथा पुत्र-पौत्र आदि सब कुल ॥१॥
समुज्ज्वल हो, यश वृद्धि हो। इस तरह प्रार्थना मात्र से जन्मान्तर में देवाङ्गनाओं के तुल्य रूप मिल जाता है ॥ १७ ॥
सौभाग्य प्राप्त करती है तथा पति प्रिय अधिक होती है। इस प्रकार पाँच साल तक कह उद्यापन करे ॥१८॥ यथाशक्ति

सन्तु मनोरथाः सभादीपप्रदानेन पुत्रपौत्रादिकं कुलम् ॥ १६ ॥ सर्वं ह्युज्ज्वलतां याति वर्धते यशसा सह ॥ स्वरङ्गनाभिः सदृशं रूपं जन्मान्तरे लभेत् ॥ १७ ॥ सौभाग्यं चैव लभते भर्तुः प्रियतरा भवेत् ॥ एवं कृत्वा पञ्चवर्षं तत उद्यापनं चरेत् ॥ १८ ॥ विप्राय दक्षिणां दद्याद्यथा-शक्ति च भक्तितः ॥ सभादीपस्य माहात्म्यमेतत्ते कथितं शुभम् ॥ १६ ॥ श्रवणाकर्मसंस्था च तस्यामेव निशि स्मृता ॥ तदुत्तरं सर्पबलिस्तत्रैव च विधीयते ॥ २० ॥ इदं संस्थाद्वयं कुर्यात्स्व-स्वगृह्यमवेक्ष्य च ॥ ह्यग्रीवस्यावतारस्तस्यामेव तिथौ मतः ॥ २१ ॥ ह्यग्रीवजयन्त्यास्तु अतोऽत्रैव महोत्सवः ॥ उपासनावतां तस्य नित्यस्तु परिकीर्तितः ॥ २२ ॥ श्रावण्यां श्रवणे

भक्ति से दक्षिणा ब्राह्मण को दे। हे विप्र, आप से यह सभादीप का उत्तम महात्म्य कहा ॥ १६ ॥ उसी रात में श्रवण कर्म कहा। उसी के समीप सर्प बलि करे ॥ २० ॥ दोनों कार्य अपने-अपने गृह्यसूत्रों को देखकर करे। उसी तिथि में भगवान् हयग्रीव का अवतार होता है ॥ २१ ॥ इस रोज हयग्रीव जयन्ती महोत्सव करे। ह्यग्रीव उपासक के लिए

यह नित्य है ॥ २२ ॥ श्रावण मास पूर्णिमा रोज श्रवण नक्षत्र में भगवान् हयग्रीव ने पहले जन्म लिया। उसी समय सम्पूर्ण पाप नाश करने वाला सामवेद गाया ॥ २३ ॥ सिन्धु तथा वितस्ता नदी के संगम में श्रवण नक्षत्र में जन्म ले गाया था। अतः उस संगम में नहाकर सब काम की सिद्धि देता है ॥ २४ ॥ वहाँपर ही शार्ङ्ग धनुष चक्र गदाधारी

पूर्वं जातो हयशिरा हरिः ॥ जगाम सामवेदं तु सर्वकिल्विषनाशनम् ॥ २३ ॥ सिन्धूनदी-वितस्तायां प्रवृत्तस्तत्र सङ्गमे ॥ श्रवणर्क्षे ततस्तत्र स्नानं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥ २४ ॥ तत्र सम्पूजयेद्विष्णुं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ श्रोतव्यान्यथ सामानि पूज्या विप्राश्च सर्वथा ॥ २५ ॥ क्रीडितव्यं च भोक्तव्यं तत्रैव स्वजनैः सहः ॥ जलक्रीडा च कर्तव्या नारीभिर्भर्तृलब्धये ॥ २६ ॥ स्वस्वदेशे स्वस्वगृहे अपि कुर्यान्महोत्सवम् ॥ पूजयच्च हयग्रीवं जपेन्मन्त्रं च तं शृणु ॥२७॥ प्रणवादिर्नमःशब्दस्ततो भगवते इति ॥ धर्माथाथ चतुर्थ्यन्तं योज्यं चात्मविशोधनम् ॥ २८ ॥ पुनरन्ते

भगवान् विष्णु की पूजा करे। सामवेद को सुने और द्विजों की पूजा करे ॥ २५ ॥ वहाँपर बन्धुओं सहित क्रीड़ा और भोजन करे। वहींपर नारियाँ पति प्राप्त्यर्थ जलक्रीड़ा करें ॥ २६ ॥ अपने-अपने देश और घर में भी महोत्सव करे। हयग्रीव का अर्चन करे। मन्त्र जप करे। आप उसे सुनो ॥ २७ ॥ आदि में 'प्रणव' योजना करे। फिर भगवते कह, धर्माय कह चतुर्थ्यन्त आत्मविशोधन शब्द की योजना करे ॥ २८ ॥ फिर अन्त में नमः शब्द कहे। यह अठारह

अक्षर का मन्त्र सब सिद्धि को देने वाला तथा वश्य मोहन आदि छः प्रयोगों का एक ही साधक मन्त्र है ॥२६॥ इसका पुरश्चरण अक्षर संख्या के नुसार अठारह लाख या अठारह हजार है। पर कलियुग में चौगुना करे ॥३०॥ यों करने से भगवान् हयग्रीव राजी हो श्रेष्ठ कामना दे देते हैं। इसी पूर्णिमा रोज रक्षाबन्धन कहा है ॥ ३१ ॥ यह सब रोगों तथा

नमःशब्दो मन्त्रश्चाष्टादशाक्षरः ॥ सर्वसिद्धिकरश्चायं षट्प्रयोगैकसाधकः ॥ २६ ॥ पुरश्चरणमेतस्य अक्षराणां तु संख्यया ॥ लक्षं वाथ सहस्रं वा कलौ तु स्याच्चतुर्गुणम् ॥३०॥ एवं कृते हयग्रीवस्तुष्टः सत्कामदो भवेत् ॥ एतस्यामेव पूर्णायां रक्षाबन्धनमिष्यते ॥ ३१ ॥ सर्वरोगोपशमनं सर्वाशुभविनाशनम् ॥ शृणु त्वं मुनिशार्दूल इतिहासं पुरातनम् ॥ ३२ ॥ इन्द्राण्या यत्कृतं पूर्वमिन्द्रस्य जयसिद्धये ॥ देवासुरमभूद्युद्धं पुरा द्वादशवार्षिकम् ॥ ३३ ॥ शक्रं दृष्ट्वा तदा श्रान्तं देवी प्राह सुरेश्वरम् ॥ अद्य भूतदिनं देवं प्रातः सर्वं भविष्यति ॥ ३४ ॥ अहं रक्षां विधास्यामि तेनाजेयो भविष्यसि ॥ इत्युक्त्वा पौर्णमास्यां सा पौलोमी कृतमङ्गला ॥ ३५ ॥ बबन्ध दक्षिणे पाणौ

सब अशुभों का नाश करने वाला है। हे मुनि शार्दूल, इसमें पुराने इतिहास को आप सुनो ॥ ३२ ॥ पहले इन्द्राणी ने जयसिध्यर्थ जो कुछ इन्द्र के लिए किया। हे विप्र ! पहले बारह साल एकतार देव तथा असुर युद्ध हुआ ॥ ३३ ॥ इन्द्राणी ने उसी समय सुरेश्वर को थका देख कहा—हे देव, आज चतुर्दशी है। सुबह कल अच्छा होगा ॥ ३४ ॥

रक्षा मैं करूँगी। जिसे करने मात्र से आप अजेय होंगे। यों कह इन्द्राणी ने पूर्णिमा रोज मङ्गल आदि कर ॥ ३५ ॥ हर्ष देनेवाली रक्षा को दाहिने हाथ में बाँध दी। इन्द्र ने रक्षा बाँध स्वस्तिवाचन ब्राह्मणों सहित किया ॥ ३६ ॥ दानव सेना पर चढ़ाई की। क्षणभर में प्रतापी इन्द्र ने दानवों को जीत लोक त्रय में फिर विजय प्राप्त किया ॥ ३७ ॥ हे

रक्षां मोदप्रदां ततः ॥ बद्धरक्षस्ततः शक्रः कृतस्वस्त्ययनो द्विजैः ॥ ३६ ॥ दुद्राव दानवानीकं क्षणाज्जिन्ये प्रतापवान् ॥ वासवो विजयी भूत्वा पुनरेव जगत्त्रये ॥ ३७ ॥ एष प्रभावो रक्षायाः कथितस्ते मुनीश्वर ॥ जयदः सुखदश्चैव पुत्रारोग्यधनप्रदः ॥ ३८ ॥ सनत्कुमार उवाच—क्रियते केन विधिना रक्षाबन्धः सुरोत्तम ॥ कस्यां तिथौ कदा देव एतन्मे वक्तुमर्हसि ॥ ३९ ॥ यथायथा हि भगवान्विचित्राणि प्रभाषसे ॥ तथातथा न मे तृप्तिर्बह्वर्थाः शृण्वतः कथाः ॥ ४० ॥ ईश्वर उवाच—सम्प्राप्ते श्रावणे मासि पौर्णमास्यां दिनोदये ॥ स्नानं कुर्वीत मतिमान् श्रुतिस्मृति-

मुनीश्वर, आप से मैंने रक्षा का प्रभाव कहा। यह जय, सुख, पुत्र, आरोग्य तथा धनप्रद है ॥ ३८ ॥ सनत्कुमार ने कहा—हे सुरोत्तम, किस विधान से, किस तिथि में तथा किस समय में रक्षाबन्धन करे। हे देव, यह आप सब मुझे कहें ॥ ३९ ॥ हे भगवन्, जैसे-जैसे विचित्र कथा को आप कहते हैं, वैसे-वैसे नाना अर्थों से युक्त कथाओं के श्रवण से मुझे तृप्ति होती नहीं ॥ ४० ॥ ईश्वर ने कहा—हे सनत्कुमार, सावन महीने की पूर्णिमा रोज सुबह के मतिमान् श्रुति

स्मृति विधान द्वारा नहा ले ॥ ४१ ॥ सन्ध्या जपादि कर पितर, देवता और ऋषि तर्पण करे सोने के पात्र की सुरक्षा बना ॥ ४२ ॥ उसको सोने के सूत्र से बाँध मोती आदि द्वारा विभूषित कर स्वच्छ रेशमी सूत के बने ॥ ४३ ॥ विचित्र ग्रन्थि युक्त, पद्गुच्छों शोभित, सरसों-चावलों के अन्दर गर्भ में रख रमणीय बना दे ॥ ४४ ॥ वहाँ पहले कलश को

विधानतः ॥ ४१ ॥ सन्ध्याजपादि सम्पाद्य पितृन्देवानृषींस्तथा ॥ तर्पयित्वा ततः कुर्यात्स्वर्णपात्रविनिर्मिताम् ॥ ४२ ॥ हैमसूत्रैश्च सम्बद्धा मौक्तिकादिविभूषिताम् ॥ कौशेयतन्तुभिः कीर्णैर्विचित्रैर्मलवर्जितैः ॥ ४३ ॥ विचित्रग्रन्थिसंयुक्तां पद्गुच्छैश्च राजिताम् ॥ सिद्धार्थैश्चाक्षतैश्चैव गर्भितां सुमनोहराम् ॥ ४४ ॥ संस्थाप्य कलशं तत्र पूर्णपात्रे तु तां न्यसेत् ॥ उपविश्यासने रम्ये सुहृद्भिः परिवारितः ॥ ४५ ॥ वेश्यानर्तनगानादि-कृतकौतुकमङ्गलः ॥ ततः पुरोधसा कार्यो रक्षाबन्धः समन्त्रकः ॥ ४६ ॥ येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ॥ तेन त्वामनुबध्नामि रक्षे मा चल मा चल ॥ ४७ ॥ ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैश्चैवान्यमानवैः ॥ रक्षाबन्धः

रख उसमें पूर्णपात्र उसपर रक्षा रखे। अपने रमणीय आसन पर मित्र-बान्धवों सहित बैठ ॥ ४५ ॥ वेश्याओंका नाच, गान आदि कौतुक मङ्गल करे। मन्त्रोंसे पुरोहित रक्षाबन्धन करे ॥ ४६ ॥ महाबली दानवेन्द्र राजाबली को जिस बन्धन से बाँध दिया आप को उसी से बाँधता हूँ। हे रक्षे आप कभी भी मत चलायमान होना ॥ ४७ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय,

वैश्य, शूद्र अन्य मानव भी पहले द्विजों की पूजा कर रक्षाबन्धन करें ॥ ४८ ॥ इस विधान से जो रक्षाबन्धन करता है, वह सब दोषों से दूर हो सालभर तक आनन्द करता है ॥ ४९ ॥ विधानविज्ञ मनुष्य जो इस विमल सावन महीने में रक्षाबन्धन करता है। वही प्राणी पुत्र, पौत्र तथा सुहृद् जनों के साथ एक साल परम आनन्द से निवास करता

प्रकर्तव्यो द्विजान्सम्पूज्य यत्नतः ॥ ४८ ॥ अनेन विधिना यस्तु रक्षाबन्धनमाचरेत् ॥ स सर्वदोषरहितः सुखी संवत्सरं भवेत् ॥ ४९ ॥ यः श्रावणे विमलमासि विधानविज्ञो रक्षाविधानदिमाचरम मनुष्यः ॥ आस्ते सुखेन परमेण स वर्षमेकं पुत्रैश्च पौत्रसहितः ससुहृज्जनश्च ॥ ५० ॥ भद्रायां च न कर्तव्यो रक्षाबन्धः शुचिव्रतैः ॥ बद्धा रक्षा तु भद्रायां विपरीतफलप्रदा ॥ ५१ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वर सनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये उपाकर्मोत्सर्जनश्रावणीकर्मसर्पबलिसभादीपहयग्रीवजयन्तीरक्षाबन्धविधिकथनं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

ईश्वर उवाच—श्रावणे बहुले पक्षे चतुर्थ्यां मुनिसत्तम ॥ व्रतं सङ्कटहरणं सर्वकामफलप्रदम्

है ॥ ५० ॥ पर रक्षाबन्धन कार्य भद्रा में न करे। पवित्र व्रत को यदि करने वाले भद्रा में करते हैं तो उसे विपरीत फल देता है ॥ ५१ ॥

ईश्वर ने कहा—हे मुनि सत्तम, सावन शुक्ल पक्ष चतुर्थी के दिन सर्वकाम फलप्रद संकट हरण नाम का व्रत होता

है ॥ १ ॥ सनत्कुमार ने कहा—हे देवदेव, किस विधि से व्रत तथा पूजा करे। कब उद्यापन करे। यह सब मुझे सविस्तार कहो ॥ २ ॥ ईश्वर ने कहा—चतुर्थी रोज सुवह उठ दन्तधावन आदि क्रिया को समाप्त कर पुण्यदाता शुभ संकट हरण नाम का व्रत स्वीकार करे ॥ ३ ॥ हे देवेश, आज मैं चन्द्रोदय तक निराहार रहूँगा। आप की पूजा

॥ १ ॥ सनत्कुमार उवाच—क्रियते केन विधिना किं कार्यं किं च पूजनम् ॥ उद्यापनं कदा कार्यं तन्मे वद सुविस्तरम् ॥ २ ॥ ईश्वर उवाच—चतुर्थ्यां प्रातरुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ॥ ग्राह्यं व्रतमिदं पुण्यं सङ्कष्टहरणं शुभम् ॥ ३ ॥ निराहारोऽस्मि देवेश यावच्चन्द्रोदयो भवेत् ॥ भोक्ष्यामि पूजयित्वा त्वां सङ्कष्टात्तारयस्व माम् ॥ ४ ॥ एवं सङ्कल्प्य वैधात्रः स्नात्वा कृष्णतिलैः शुभैः ॥ विधाय चाह्निकं सर्वं पश्चात्पूज्यो गणाधिपः ॥ ५ ॥ त्रिभिर्माषैस्तदर्धेन तृतीयांशेन वा पुनः ॥ यथाशक्त्याऽथवा हैमीं प्रतिमां कारयेद् बुधः ॥ ६ ॥ हेमाभावे तु रूप्यस्य ताम्रस्यापि यथासुखम् ॥ सर्वथा तु दरिद्रेण कर्तव्या मृन्मयी शुभा ॥ ७ ॥ वित्तशाठ्यं न कर्तव्यं कृते

कर भोजन करूँगा। मेरे संकट को आप हटावें ॥ ४ ॥ हे वैधात्र, इस प्रकार संकल्प कर काले तिलों से नहा तथा सब आह्निक कार्य कर गणाधिप की पूजा करे ॥ ५ ॥ बुद्धिमान तीन मासा, डेढ़ मासा, एक मासा या अपनी शक्त्यनुसार सोने की प्रतिमा बनावे ॥ ६ ॥ सोने के अभाव में चाँदी या ताँबे की मूर्ति बनावे। एकदम दरिद्र हो तो

रमणीय मृत्तिका की प्रतिमा बनावे ॥७॥ पर शठता धन की न करे। शठता करने पर एकदम कार्य का नाश होता है। पहले रमणीय अष्टदल कमल के ऊपर कपड़े के सहित घट का स्थापन करे ॥ ८ ॥ जल से भर उसपर पूर्णपात्र तथा प्रतिमा रख सोलह उपचार द्वारा वैदिक तथा तान्त्रिक मन्त्रों से पूजा करे ॥ ९ ॥ हे विप्र, तिलयुक्त श्रेष्ठ दस लड्डू

कार्यं विनश्यति ॥ रम्येऽष्टदलपद्मे तु कुम्भं वस्त्रयुतं न्यसेत् ॥ ८ ॥ जलपूर्णं तत्र पूर्णपात्रे देवं प्रपूजयेत् ॥ षोडशैरुपचारैस्तु मन्त्रैर्वैदिकतान्त्रिकैः ॥ ९ ॥ मोदकान्कारयेद्विप्र तिलयुक्तान्दशोत्तमान् ॥ देवाग्रे स्थापयेत्पञ्च पञ्च विप्राय दापयेत् ॥ १० ॥ पूजयित्वा तु तं विप्रं भक्तिभावेन देववत् ॥ दक्षिणां तु यथाशक्ति दत्त्वा च प्रार्थयेत्ततः ॥ ११ ॥ विप्रवर्य नमस्तुभ्यं मोदकांस्ते ददाम्यहम् ॥ सफलान्पञ्चसंख्याकान्देव दक्षिणया युतान् ॥ १२ ॥ आपदुद्धरणार्थाय गृहाण द्विजसत्तम ॥ अवद्भमतिरिक्तं वा द्रव्यहीनं मया कृतम् ॥ १३ ॥ तत्सर्वं पूर्णतां यातु

बनावे। उनमें से पाँच गणाधिप के लिए दे। अवशिष्ट पाँच ब्राह्मण को दे ॥ १० ॥ भक्ति द्वारा देवता की तरह उस ब्राह्मण की पूजा करे। दक्षिणा यथाशक्ति दे प्रार्थना करे। ११ ॥ हे विप्रश्रेष्ठ, हे देव, आप को नमस्कार है। आप के निमित्त इन पाँच लड्डू को फल तथा दक्षिणा सहित देता हूँ ॥१२॥ हे द्विजश्रेष्ठ ग्रहण करें। मेरा उद्धार आपत्ति से करो। जो कुछ मैंने द्रव्यदान कम या अधिक किया है ॥ १३ ॥ हे विप्ररूप गणेश्वर, वह सब परिपूर्ण हो। सुस्वादु अन्नों द्वारा

ब्राह्मण भोजन करा दे ॥ १४ ॥ चन्द्रमा को अर्घ्य दे । आदर से उस अर्घ्य मन्त्र को सुनो ॥ १५ ॥ क्षीरसागरसम्भूत, सुधारूप, निशाकर तथा गणेश प्रीतिवर्धन, आप मेरे अर्घ्य को स्वीकार करें ॥१६॥ इस तरह विधि से व्रत करे तो गणाधिप प्रसन्न हो जाते हैं तथा अभिलषित कार्यों को देते हैं। अतः इसे स्वीकार करें ॥१७॥ विद्यार्थी विद्या, धनार्थी धन,

विप्ररूप गणेश्वर ॥ ब्राह्मणान्भोजयेच्चैव स्वाद्वन्नेन यथासुखम् ॥ १४ ॥ चन्द्रायार्घ्यं प्रदातव्यं शृणु तन्मंत्रमादितः ॥ १५ ॥ क्षीरसागरसम्भूत सुधारूप निशाकर ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं गणेशप्रीतिवर्धन ॥ १६ ॥ एवं कृते विधाने तु प्रसन्नः स्याद् गणाधिपः ॥ ददाति वाञ्छितान्कामांस्तस्मात्तद्व्रतमाचरेत् ॥ १७ ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् ॥ पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोत्ति मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥ कार्यार्थी कार्यमाप्नोति रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥ १८ ॥ आपत्सु वर्तमानानां नृणां व्याकुलचेतसाम् ॥ चिन्तया ग्रस्तमनसां वियोगः सुहृदां तथा ॥ १९ ॥ सर्वसङ्कष्टहरणं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥ पुत्रपौत्रादिजननं सर्वसम्पत्करं नृणाम् ॥ २० ॥ पूजने च

पुत्रार्थी पुत्र प्राप्त कर लेता है। मोक्षार्थी गति, कार्यार्थी कार्य और रोगी रोग से छुटकारा पाता है ॥१८॥ आपत्ति में मग्न व्याकुल मन वाले, चिन्ता से व्यग्र चित्त वाले, सुहृदों के वियोगी प्राणियों के ॥ १९ ॥ सब संकट हरने वाला, सम्पूर्ण इष्ट फल देने वाला, पुत्र, पौत्र आदि देने वाला सम्पूर्ण सम्पत्ति वाला यह व्रत है ॥ २० ॥ आप से पूजा तथा

जप में विहित मन्त्र कहता हूँ। पहले 'ओंकार' शब्द, फिर 'नमः' शब्द 'हेरम्ब' के अनन्तर मनमोदित शब्द ॥ २१ ॥ फिर संकष्ट निवारण शब्द को चतुर्थ्यन्त बनाकर अन्त में स्वाहा शब्द कहे। यों इकीस अक्षर का मन्त्र हुआ ॥ २२ ॥ बुद्धिमान् इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा करे। हे विप्र, लड्डू निर्माण का आप से अन्य प्रकार भी कहता हूँ ॥ २३ ॥

जपे चैव मन्त्रं ते कथयाम्यहम् ॥ तारोत्तरं नमः शब्दं हेरम्बं मनमोदितम् ॥ २१ ॥ चतुर्थ्यन्तं प्रशस्तं च संकष्टस्य निवारणम् ॥ स्वाहान्तं च वदेन्मन्त्रमेकविंशतिवर्णकम् ॥ २२ ॥ इन्द्रादि-लोकपालाश्च समन्तादर्चयेत्सुधीः ॥ मोदकानां प्रकारं च अन्यं ते कथयाम्यहम् ॥ २३ ॥ पक्वमुद्गतिलैर्युक्ता मोदका घृतपाचिताः ॥ अर्पणीया गणेशाय नारिकेलेन गर्भिताः ॥ २४ ॥ ततो दूर्वाङ्कुरान्गृह्णन्नेभिर्नामपदैः पृथक् ॥ पूजयेद् गणनाथं च तानि नामानि मे शृणु ॥ २५ ॥ गणाधिप नमस्तेऽस्तु उमापुत्राघनाशन ॥ एकदन्तेभवक्त्रेति तथा मूषकवाहन ॥ २६ ॥ विनायकेशपुत्रेति सर्वसिद्धिप्रदायक ॥ विघ्नराज स्कन्दगुरो सर्वसङ्कष्टनाशन ॥ २७ ॥ लम्बोदर

घी से परिपूर्ण तिल सहित मूँग के लड्डू गिरी के टुकड़े डाल कर बनावे। उन को गणेश को समर्पण करे ॥ २४ ॥ दूर्वा अंकुरों को ग्रहणकर अलग-अलग नामपदों द्वारा गणनाथ की पूजा करे। हे विप्र, आप मुझसे उन नामों को सुनो ॥ २५ ॥ गणाधिप, आप को नमस्कार है। उमापुत्र, अघनाशन, एकदन्त, इभवक्त्र, मूषकवाहन, ॥ २६ ॥ विनायक,

ईशपुत्र, सर्वसिद्धिदायक, विघ्नराज, स्कन्दगुरो, सर्वसंकष्टनाशन, ॥ २७ ॥ लम्बोदर, गणाध्यक्ष, गौर्यङ्गमलसम्भव, धूम्रकेतो, भालचन्द्र, सिन्दूरासुरमर्दन ॥ २८ ॥ विद्यानिधान, विकट और शूर्पकर्ण, आप को नमस्कार है। इन इक्कीस नामों द्वारा गणेश की पूजा करे ॥ २९ ॥ भक्ति द्वारा विनम्र हो प्रसन्न मन से देव की प्रार्थना कर कहे—हे विघ्नराज,

गणाध्यक्ष गौर्यङ्गमलसम्भव ॥ धूम्रकेतो भालचन्द्र सिन्दूरासुरमर्दन ॥ २८ ॥ विद्यानिधान विकट शूर्पकर्णेति चैव हि ॥ पूजयेद् गणपं चैवमेकविंशतिनामभिः ॥ २९ ॥ प्रार्थयेच्च ततो देवं भक्तिनम्रः प्रसन्नधीः ॥ विघ्नराज नमस्तेऽस्तु उमापुत्राघनाशन ॥ ३० ॥ यदुद्दिश्य कृतं मेऽद्य यथाशक्ति प्रपूजनम् ॥ तेन तुष्टो भवाद्याशु हृत्स्थान्कामान्प्रपूरय ॥ ३१ ॥ विघ्नान्नाशाय मे सर्वान्विविधोपस्थितान्प्रभो ॥ त्वत्प्रसादेन कार्याणि सर्वाणीह करोम्यहम् ॥ ३२ ॥ शत्रूणां बुद्धिनाशं च मित्राणामुदयं कुरु ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत शतमष्टोत्तरं तथा ॥ ३३ ॥ मोदकै-

उमापुत्र, अघनाशन, आपको नमस्कार है ॥ ३० ॥ मैंने आज जिस कारण के लिए पूजा यथाशक्ति की मेरे पर जल्दी आप प्रसन्न हों। मेरे मन की सब इच्छाओं को परिपूर्ण करो ॥ ३१ ॥ प्रभो, उपस्थित मेरे नाना तरह के सब विघ्नों को नाश करो। प्रभो, आप की दया से मैं सब कामों को करता हूँ ॥ ३२ ॥ मेरे शत्रुओं की बुद्धि का नाश तथा मित्रों का उदय करो। यों प्रार्थना कर अष्टोत्तरशत होम करे ॥ ३३ ॥ व्रत की समाप्ति के लिये लड्डुओं का वायन दे।

फलों से युक्त सात लड्डू कर कहे ॥ ३४ ॥ गणेश के प्रसन्नार्थ मैं ब्राह्मण को दे रहा हूँ । फिर उत्तम कथा सुन अच्छी प्रकार से अर्घ्य दे ॥ ३५ ॥ हे सत्तम, इस मन्त्र से पाँच वार चन्द्रमा को अर्घ्य दे ॥३६॥ क्षीरोदार्णवसंभूत, अत्रिगोत्र समुद्भूत, शशिन्, रोहिणी सहित मेरे द्वारा दिये हुए आप इस अर्घ्य को स्वीकार करें ॥ ३७ ॥ फिर क्षमा प्रार्थना

र्वायनं दद्याद्व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥ लड्डुकैर्मोदकैर्वापि सप्तभिः फलसंयुतम् ॥ ३४ ॥ गणेशप्रीणनार्थाय ब्राह्मणाय ददाम्यहम् ॥ कथां श्रुत्वा ततः पुण्यां दद्यादर्घ्यं प्रयत्नतः ॥ ३५ ॥ चन्द्राय पञ्चवारं तु मन्त्रेणानेन सत्तम ॥ ३६ ॥ क्षीरोदार्णवसम्भूत अत्रिगोत्रसमुद्भव ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं रोहिण्या सहितः शशिन् ॥ ३७ ॥ ततः क्षमापयेद्देवं शक्त्या विप्रांश्च भोजयेत् ॥ स्वयं भुञ्जीत तच्छेषं यदेव ब्राह्मणार्पितम् ॥ ३८ ॥ सप्तग्रासान्मौनयुक्तो ह्यशक्तस्तु यथासुखम् ॥ इत्थं कुर्यान्त्रिमासेषु चतुर्ष्वपि विधानतः ॥ ३९ ॥ उद्यापनं पञ्चमे च कुर्याद्धीमान्प्रयत्नतः ॥ सौवर्णं वक्रतुण्डं च शक्त्या कुर्याद्विचक्षणः ॥ ४० ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन पूजयेद् भक्तिमान्नरः ॥

करे । ब्राह्मणों को यथा शक्ति भोजन करा दे । जो देव ब्राह्मणों के अर्पण से अवशिष्ट रह गया हो उसे स्वयं भोजन करे ॥ ३८ ॥ मौन हो सात ग्रास भोजन करे । ऐसा न कर सके तो भोजन यथासुख करे । इस प्रकार तीन या चार महीने तक विधि द्वारा व्रत करे ॥ ३९ ॥ पाँचवें महीने में अच्छी प्रकार बुद्धिमान उद्यापन करे । पहले वक्रतुण्ड की

विद्वान् शक्त्यानुसर प्रतिमा बनावे ॥४०॥ भक्तिमान् नर पहले वाली विधि से पूजा कर सुगन्धित चन्दन तथा नाना प्रकार फूलों से पूजा करे ॥४१॥ समाहित होकर नारिकेल फल ही से अर्घ्य दे तथा ब्राह्मण भक्त को फल संयुत वायन दान दे ॥ ४२ ॥ सूप और पायस दक्षिणा सहित सोने की गणेश प्रतिमा लाल कपड़े से वेष्टित कर ब्राह्मण को दे ॥ ४३ ॥

चन्दनेन सुगन्धेन पुष्पैर्नानाविधैः शुभैः ॥ ४१ ॥ नारिकेलफलेनैव दद्यादर्घ्यं समाहितः ॥ दद्याद् भक्ताय विप्राय वायनं फलसंयुतम् ॥ ४२ ॥ शूर्पपायससंयुक्तं रक्तवस्त्रेण वेष्टितम् ॥ सौवर्णं गणपं तस्मै दद्याच्चैव सदक्षिणम् ॥ ४३ ॥ तिलनामाढकं दद्याद्व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥ ततः क्षमापयेद् देवं विघ्नेशः प्रीयतामिति ॥ ४४ ॥ इत्थमुद्यापनं कृत्वा हयमेधफलं लभेत् ॥ सर्व-कार्याणि सिद्ध्यन्ति मनोऽभिलक्षितान्यपि ॥ ४५ ॥ पुराकल्पे गते स्कन्दे पार्वत्या वै कृतं किल ॥ चतुर्ष्वपि च मासेषु मम वाक्येन सत्तम ॥ ४६ ॥ पञ्चमे मासि दृष्टस्तु कार्तिकेयो ह्यपर्णया ॥ समुद्रपानवेलायां ह्यगस्त्येन पुरा कृतम् ॥ ४७ ॥ त्रिषु मासेषु विघ्नेशप्रसादात्सि-

व्रत समाप्ति के लिए पाँच सेर तिल दे और क्षमा प्रार्थना कर कहे विघ्नेश इससे प्रसन्न हों ॥ ४४ ॥ इस तरह उद्यापन करने मात्र से 'हयमेध' फल को प्राप्त करता है । मनोभिलषित सारे काम सिद्ध हो जाते हैं ॥४५॥ हे सत्तम, मेरे वाक्य से पूर्व कल्प में पार्वती ने इस व्रत को चार महीने तक स्कन्द की प्राप्ति के लिए किया ॥ ४६ ॥ पाँचवें महीने में

कार्तिकेय को पार्वती ने पुत्र स्वरूप में देखा। पहले अगस्त्य ऋषि ने समुद्र पान के समय इसे किया ॥ ४७ ॥ तीन महीने में विघ्नेश प्रसाद से ही सिद्धि मिली। हे विप्रेन्द्र, इस व्रत को छः महिने तक दमयन्ती ने किया था ॥ ४८ ॥ राजा नल को देखा। चित्रलेखा ने अनिरुद्ध को खोजती हुई उसने देखा ॥ ४९ ॥ वे कहाँ गये, कौन ले गया। यों

द्धमाप सः ॥ षण्मासावधि विप्रेन्द्र दमयन्त्या कृतं त्विदम् ॥ ४८ ॥ नलमन्वेषयन्त्यां च ततो दृष्टो नलोऽभवत् ॥ नीतेऽनिरुद्धे बाणस्य नगरं चित्रलेखया ॥ ४९ ॥ क्व गतः केन नीतोऽसावित्यभूद्व्याकुलः स्मरः ॥ प्रद्युम्नं पुत्रशोकार्तं प्रीत्या रुक्मिण्यभाषत ॥ ५० ॥ शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि यद्धृतं मामके गृहे ॥ राक्षसेन पुरानीते बालके त्वयि खण्डिते ॥ ५१ ॥ त्वद्वियोगजदुःखेन हृदयं मम दारितम्। कदा द्रक्ष्याम्यहं पुत्रमुखमत्यन्तसुन्दरम् ॥ ५२ ॥ अन्यस्त्रीणां सुतान्दृष्ट्वा मम चेतो विदीर्यते ॥ मम पुत्रो भवेन्नासौ वयसा मे न मानतः ॥ ५३ ॥ इति

बाणासुर के यहाँ जाते समय कामदेव व्याकुल हो गये। उसी समय रुक्मिणी ने प्रीति से कहा ॥ ५० ॥ हे पुत्र, मैं जिस व्रत को कहती हूँ उसे सुनो। पूर्व समय में तेरे जन्म काल के समय मेरे सौरी घर से राक्षस ने चुराया ॥ ५१ ॥ उसी समय तेरे वियोग से मेरा हृदय विदीर्ण हो गया था। अति सुन्दर पुत्र का मुख कब देखूँगी ॥ ५२ ॥ उस समय अन्य स्त्रियों के सुतों को देख मेरा मन विदीर्ग होता था। अवस्थानुसार मेरा ही यह पुत्र न हो ॥ ५३ ॥ यों चिन्ता

द्वारा व्याकुल दशा में संलग्न हुई मुझे बहुत साल बीत गये। दैवयोग से मेरे यहाँ लोमशमुनि आगये ॥५४॥ उन्होंने विधिवत् संपूर्ण चिन्तानाशक व्रत का उपदेश दिया। मैंने संकष्ट चतुर्थी का व्रत चार बार किया ॥ ५५ ॥ उसी के प्रभाव से तुमने शम्बर वध किया और आये। हे पुत्र, तुम इस व्रत को जानकर करोगे तो पुत्र का पता चलेगा ॥५६॥ हे विप्र,

चिन्ताकुलाया मे गतान्यब्दानि भूरिशः ॥ ततो मे दैवयोगेन लोमशो मुनिरागतः ॥ ५४ ॥
तेनोपदिष्टं विधिवत्सर्वचिन्ताहरं व्रतम् ॥ सङ्कटाख्यचतुर्थ्यास्तु चतुर्वारं मया कृतम् ॥ ५५ ॥
तत्प्रसादात्त्वमायातो हत्वा शम्बरमाहवे ॥ ज्ञात्वा प्रकुरु पुत्र त्वं ततो ज्ञास्यसि नन्दनम् ॥ ५६ ॥
प्रद्युम्नेन कृतं विप्र गणनाथस्य तोषणम् ॥ श्रुतो बाणासुरपुरेऽनिरुद्धो नारदात्ततः ॥ ५७ ॥
गत्वा बाणासुरपुरं युद्धं कृत्वा सुदारुणम् ॥ कृशानुरेतसा सार्द्धं जित्वा बाणासुरं रणे ॥ ५८ ॥
आनीतः स्नुषया सार्धमनिरुद्धस्तदा मुने ॥ अन्यैर्देवासुरैः पूर्वं कृतं विघ्नेशतुष्टये ॥ ५९ ॥
अनेन सदृशं लोके सर्वसिद्धिकरं व्रतम् ॥ तपोदानं च तीर्थं च विद्यते नात्र कुत्रचित् ॥ ६० ॥

गणनाथ के प्रसन्नार्थ प्रद्युम्न ने व्रत किया यों बाणासुरपुर में अनिरुद्ध हैं नारदजी से यह समाचार सुना ॥ ५७ ॥ उसी समय बाणासुर के कलवे में जा सुदारुण युद्ध कर अग्नि सहित युद्ध में बाणासुर को जीता ॥ ५८ ॥ हे मुने, अनिरुद्ध को पुत्रवधू सहित ले आये। पूर्वकाल में दूसरे देवता तथा असुरों ने भी विघ्नेश प्रीत्यर्थ इसी व्रत को किया

था ॥ ५६ ॥ इसके सदृश सिद्धि देने वाला लोक में अन्य व्रत नहीं है और न कहीं पर तप तथा तीर्थ ही विराजमान है ॥ ६० ॥ क्या विशेष कहने से है । अन्य कार्य की सिद्धि के लिये नहीं है । अतः नास्तिक अभक्त शठ को उपदेश न दे ॥ ६१ ॥ पुत्र, शिष्य तथा श्रद्धायुक्त साधु को उपदेश दे ॥ ६२ ॥ विप्रर्षे, धर्मिष्ठ, विधिनन्दन, मेरे प्रिय तथा

बहुनात्र किमुक्तेन नास्त्यन्यत्कार्यसिद्धये ॥ नोपदेश्यं त्वभक्ताय नास्तिकाय शठाय च ॥ ६१ ॥ देयं पुत्राय शिष्याय श्रद्धायुक्ताय साधवे ॥ ६२ ॥ मम प्रियोऽसि विप्रर्षे धर्मिष्ठ विधिनन्दन ॥ कार्यकर्तासि लोकानामुपदिष्टमतस्तव ॥ ६३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे चतुर्थीव्रतकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

ईश्वर उवाच ॥ कृष्णाष्टम्यां नभोमासि वृषे चन्द्रे निशीथके ॥ देवक्यजीजनत्कृष्णं योगेऽस्मिन्वसुदेवतः ॥ १ ॥ सिंहराशिगते सूर्ये कर्तव्य : सुमहोत्सवः ॥ सप्तम्यां लघुभुक्कुर्याद्दन्तधावनपूर्वकम् ॥ २ ॥ उपवासस्य नियमः स्वपेद्रात्रौ जितेन्द्रियः ॥ केवलेनोपवासेन कृष्णजन्मदिनं

संसार के कर्ता हो । अतः आप को उपदेश दिया है ॥ ६३ ॥

ईश्वर ने कहा—सावन महीने की कृष्णपक्ष की अष्टमी रोज वृष के चन्द्रमा की आधीरात के वखत इस योग के आने से वसुदेव से देवकी ने कृष्ण को उत्पन्न किया ॥ १ ॥ यों सिंहराशि के सूर्य आने पर महोत्सव करे । पहले

सप्तमी रोज दन्तधावन तथा अल्प भोजन करे ॥ २ ॥ रात में जितेन्द्रिय हो सो जाय । सुबह हो जानेपर उपवास नियम करे । केवल उपवास द्वारा कृष्ण जन्म दिन बितावे ॥ ३ ॥ ऐसा करने से सात जन्म के किये पाप से निश्चित मुक्ति मिलती है । पापों से मुक्त हो गुणों के सहित जो वास है ॥ ४ ॥ उस भोगों से वर्जित वास को उपवास कहते हैं ।

नयेत् ॥ ३ ॥ सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ उपावृत्तस्तु पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह ॥ ४ ॥ उपवासः स विज्ञेयः सर्वभोगविवर्जितः ॥ ततोऽष्टम्यां तिलैः स्नात्वा नद्यादौ विमले जले ॥ ५ ॥ सुदेशे शोभनं कुर्याद्देवक्याः सूतिकागृहम् ॥ नानावर्णैः सुवासोभिः शोभितं कलशैः फलैः ॥ ६ ॥ पुष्पैर्दीपावलीभिश्च चन्दनागरुधूपितम् ॥ हरिवंशस्य चरितं गोकुलं तत्र लेखयेत् ॥ ७ ॥ युक्तं वादित्रनिनदैर्नृत्यगीतादिमङ्गलैः ॥ षष्ठ्या देव्याधिष्ठितां च तन्मध्ये प्रतिमां हरेः ॥ ८ ॥ काञ्चनीं राजतीं ताम्रीं पैत्तलीं मृन्मयीं तु वा ॥ वार्क्षीं मणिमयीं वापि

अष्टमी रोज विमल नदी आदि जल में तिलों के साथ नहा ले ॥५॥ शोभन देश में देवकी के सूतिका घर को बना नाना वर्णों के कपड़ों से कलश तथा फलों द्वारा सुशोभित करे ॥ ६ ॥ पुष्प, दीपमाला, चन्दन, अगरु तथा धूप देकर वहाँ पर कृष्णचरित्र गोकुल लिखे ॥ ७ ॥ वाद्य-शब्द, नृत्य, गान आदि मंगल करे । उसके बीच हिस्से में षष्ठी देवी सहित कृष्ण प्रतिमा रखे ॥ ८ ॥ सोने, चाँदी, ताँबा, पीतल, मिट्टी, लकड़ी या मणि की नाना रंगों से लिखी हो ॥ ९ ॥

सर्व लक्षण युक्त अष्टशल्य वाली प्रतिमा को शय्या पर प्रसूता देवकी प्रतिमा रखे ॥ १० ॥ शय्या पर सोते, स्तन पीते हों, सूतिका घर के समीप एक ओर यशोदा को लिखे ॥ ११ ॥ प्रसूत बालिका को लिख कृष्ण के पास हाथ जोड़ते हुए देवता, यक्ष, विद्याधर तथा अमरों को लिखे ॥ १२ ॥ वहीं पर खड्ग चर्म धारण करने वाले वसुदेव को

वर्णकैर्लिखितां [illegible] ॥ ९ ॥ सर्वलक्षणसम्पन्नां पर्यङ्के चाष्टशल्यके ॥ प्रसूतां देवकीं तत्र स्थापयेन्मञ्चकोपरि ॥ १० ॥ सुप्तं बालं तत्र हरिं पर्यङ्के स्तनपायिनम् ॥ यशोदां तत्र चैकस्मिन्प्रदेशे सूतिकागृहे ॥ ११ ॥ प्रसूतां कन्यकां चैव कृष्णपार्श्वे तु संलिखेत् ॥ कृताञ्जलिपुटान्देवान्यक्षविद्याधरामरान् ॥ १२ ॥ वसुदेवं च तत्रैव खड्गचर्मधरं स्थितम् ॥ कश्यपो वसुदेवोऽयमदितिश्चैव देवकी ॥ १३ ॥ शेषो बली यशोदापि अदित्यंशाद्बभूव ह ॥ नन्दः प्रजापतिर्दक्षो गर्गश्चापि चतुर्मुखः ॥ १४ ॥ गोप्यश्चाप्सरसः सर्वा गोपाश्चापि दिवौकसः ॥ कालनेमिश्च कंसोऽयं नियुक्तास्तेन चासुराः ॥ १५ ॥ गोधेनुकुञ्जराश्वाश्च दानवाः शस्त्रपाणयः ॥ लेखनीयाश्च तत्रैव

लिखे । वसुदेव में कश्यप, देवकी में अदिति ॥ १३ ॥ और बलदेव में शेष की भावना कर अदिति अंश से यशोदा उत्पन्न हुई । नन्द दक्ष प्रजापति, गर्ग ब्रह्मा ॥ १४ ॥ सब अप्सरा गोपियाँ, गोप देवता, कालनेमि-कंस, उसके भेजे असुर ॥ १५ ॥ वृषासुर, धेनुकासुर, कुवलयापीड, केशी आदि शस्त्रधारी दानव तथा यमुनाह्रद में कालियनाग

लिखे ॥ १६ ॥ जो कुछ चरित्र भगवान् कृष्ण ने किया उसे लिख भक्ति से अच्छे प्रकार से पूजा करे ॥ १७ ॥ सोलह उपचार द्वारा 'देवकी कान्तयुक्ता' से देवकी की पूजा करे ॥ १८ ॥ सतत वेणु-वीणा निनाद सहित गायनादि से किन्नरों द्वारा स्तुति हुई तथा भृङ्गार, दर्पण, दूर्वा, दधि कलश धारण किन्नरों से सेवित खटिया पर अपने निवास स्थान में रह

कालियो यमुनाह्रदे ॥ १६ ॥ इत्येवमादि यत्किञ्चिच्चरितं हरिणा कृतम् ॥ लेखयित्वा प्रयत्नेन पूजयेद् भक्तितत्परः ॥ १७ ॥ उपचारैः षोडशभिर्देवकी चेति मन्त्रतः ॥ १८ ॥ गायद्भिः किन्नराद्यैः सततपरिणता वेणुवीणानिनादैर्भृङ्गारादर्शदूर्वादधिकलाकरैः किन्नरैः सेव्यमाना ॥ पर्यङ्के स्वासनस्था मुदिततरमुखी पुत्रिणी सम्यगास्ते सा देवी दिव्यमाता विजयसुतसुता देवकी कान्तयुक्ता ॥ १६ ॥ प्रणवादिनमोऽन्तैश्च पृथङ्नामानुकीर्तनैः ॥ कुर्यात्पूजां विधिज्ञस्तु सर्वपापापनुत्तये ॥ २० ॥ देवक्या वसुदेवस्य वासुदेवस्य चैव हि ॥ बलदेवस्य नन्दस्य यशोदायाः पृथक् पृथक् ॥ २१ ॥ चन्द्रोदये शशाङ्काय अर्घ्यं दद्याद्धरिं स्मरन् ॥ क्षीरोदार्णवसम्भूत अत्रिगोत्रसमुद्भव ॥

खूब प्रसन्नमुख पुत्र वाली वह देवमाता देवी कृष्ण के सहित वसुदेव युक्त शय्यापर स्थित हैं ॥ १६ ॥ विधि ज्ञाता सब पाप नाशार्थ आदि में 'प्रणव' तथा अन्त में 'नमः' पद जोड़ चतुर्थ्यन्त अलग-अलग नाम-कीर्तन कर पूजा करे ॥ २० ॥ अलग देवकी, वसुदेव, वासुदेव, बलदेव, नन्द और यशोदा की पूजा करे ॥ २१ ॥ चन्द्रोदय हो जानेपर

भगवान् हरि को याद कर चन्द्रमा को अर्घ्य दे कहे—हे क्षीरोदार्ण संभूत, अत्रिगोत्र समुद्भव, आप को नमस्कार है। हे रोहिणीकान्त, आप मेरे अर्घ्य को स्वीकार करें ॥ २२ ॥ देवकी सहित वसुदेव का, यशोदा सहित नन्द का, रोहिणी सहित चन्द्रमा का और कृष्ण सहित बलदेव का ॥ २३ ॥ सविधि पूजा करने से सभी वस्तुओं को प्राप्त करता है।

नमस्ते रोहिणीकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम् ॥ २२ ॥ देवक्या वसुदेवं च नन्दं चैव यशोदया ॥ रोहिण्या च सुधारश्मिं बलं च हरिणा सह ॥ २३ ॥ सम्पूज्य विधिवद्देही किं नाप्नोति सुदुर्लभम् ॥ एकादशीकोटिसंख्या तुल्या कृष्णाष्टमी तथा ॥ २४ ॥ एवं सम्पूज्य तद्रात्रौ प्रभाते नवमीदिने ॥ यथा हरेस्तथा कार्यो भगवत्या महोत्सवः ॥ २५ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेद् भक्त्या दद्याद्वै गोधनादिकम् ॥ यद्यदिष्टतमं तत्र कृष्णो मे प्रीयतामिति ॥ २६ ॥ नमस्ते वासुदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ॥ शान्तिरस्तु शिवं चास्तु इत्युक्त्वा तं विसर्जयेत् ॥ २७ ॥ ततो बन्धुजनैः सार्धं स्वयं

कृष्णाष्टमी व्रत एक करोड़ एकादशी तुल्य होता है ॥२४॥ इस प्रकार रात में पूजा कर नवमी के दिन सुबह भगवती का कृष्ण तुल्य महोत्सव करे ॥ २५ ॥ भक्ति द्वारा ब्राह्मणों को भोजन करा जो इष्ट गो, धन आदि का दान करे। कहे, इस व्रत द्वारा कृष्ण मेरे पर प्रसन्न हों ॥ २६ ॥ गौ तथा ब्राह्मण रक्षक वासुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ। शान्ति हो तथा कल्याण हो। यों कह विसर्जित करे ॥ २७ ॥ मौन हो भाई-बन्धु के साथ स्वयं भोजन करे। जो देवी और कृष्ण का

महोत्सव करता है ॥२८॥ वह हर साल सविधि पूजा से उपरोक्त फल प्राप्त करता है। वह पुत्र, सन्तान, आरोग्य तथा अतुलनीय सौभाग्य प्राप्त करता है ॥ २६ ॥ यहाँ पर धर्ममति हो अन्त में वैकुण्ठ जाता है। अब उद्यापन कहूँगा। सविधि किसी पुण्य रोज करे ॥ ३० ॥ उसके पूर्व दिन एक समय भोजन कर मन से विष्णु स्मरण कर सोये। सुबह

भुञ्जीत वाग्यतः ॥ एवं यः कुरुते देव्याः कृष्णस्य च महोत्सवम् ॥ २८ ॥ प्रतिवर्षं विधानेन यथोक्तं लभते फलम् ॥ पुत्रसन्तानमारोग्यं सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥ २६ ॥ इह धर्ममतिर्भूत्वा अन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ उद्यापनमथो वक्ष्ये पुण्येऽह्नि विधिपूर्वकम् ॥ ३० ॥ पूर्वेद्युरेकभक्ताशी स्वपेद्विष्णुं स्मरन्हृदि ॥ प्रातःसन्ध्यादि सम्पाद्य ब्राह्मणैः स्वस्ति वाचयेत् ॥३१॥ आचार्यं वरयित्वा तु ऋत्विजश्चैव पूजयेत् ॥ पलेन वा तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः ॥ ३२ ॥ प्रतिमां कारयेत्पश्चा-द्वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ मण्डपे मण्डले देवान्ब्रह्माद्यान्स्थापयेद् बुधः ॥ ३३ ॥ तत्र संस्थापयेत्कुम्भं ताम्रं मृन्मयमेव वा ॥ तस्योपरि न्यसेत्पात्रं राजतं वैणवं तु वा ॥३४॥ वाससाऽऽच्छाद्य गोविन्दं

सन्ध्या आदि कर ब्राह्मणों द्वारा स्वस्तिवाचन करा ॥ ३१ ॥ आचार्य वरण कर ऋत्विजों की पूजा करे। धन का लोभ न कर एक पल, आधा पल, चौथाई पल सोने की ॥ ३२ ॥ प्रतिमा का निर्माण करावे। मण्डप में मण्डल पर ब्रह्मादि देव स्थापन करे ॥ ३३ ॥ उसपर ताँबे या मिट्टी का कलश रख उसमें चाँदी या बाँस का पूर्णपात्र रखे ॥ ३४ ॥ कपड़े

से आच्छादित कर उसपर गोविन्द की विद्वान् वैदिक या तान्त्रिक मन्त्रों द्वारा सोलह उपचार द्वारा पूजा करे ॥ ३५ ॥ देवकी सहित हरि को अर्घ्य दे। शंख में शुद्ध जल, फूल, फल तथा चन्दन रख ॥ ३६ ॥ नारिकेलफल युक्त कर भूमि में अपने घुटनों के बल हो कहे हे हरे, आपका अवतार कंस वधार्थ तथा भूभार दूरी करणार्थं है ॥३७॥ कौरवों के नाशार्थ

तत्र सम्पूजयेद् बुधः ॥ उपचारैः षोडशभिर्मन्त्रैर्वैदिकतान्त्रिकैः ॥ ३५ ॥ ततोऽर्घ्यं हरये दद्याद्देवकीसहिताय च ॥ शङ्खे कृत्वा जल शुद्धं सपुष्पफलचन्दनम् ॥ ३६ ॥ जानुभ्यामवनीं गत्वा नारिकेलफलान्वितम् ॥ जातः कंसवधार्थाय भूभारोत्तारणाय च ॥ ३७ ॥ कौरवाणां विनाशाय दैत्यानां निधनाय च ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं देवक्या सहितो हरे ॥ ३८ ॥ चन्द्रायार्घ्यं ततो दद्यात्पूर्वोक्तविधिना सुधीः ॥ ३९ ॥ नमस्तुभ्यं जगन्नाथ देवकीतनय प्रभो ॥ वसुदेवात्मजानन्त त्राहि मां भवसागरात् ॥ ४० ॥ इत्थं सम्प्रार्थ्य देवेशं रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ प्रत्यूषे विमले स्नात्वा पूजयित्वा जनार्दनम् ॥ ४१ ॥ पायसेन तिलाज्यैश्च मूलमन्त्रेण भक्तितः ॥

तथा दैत्यों के विनाशार्थ हुआ है। देवकी सहित ही आप मेरे द्वारा दिए हुए इस अर्घ्य को स्वीकार करें ॥ ३८ ॥ पूर्वोक्त विधि से ज्ञानी चन्द्रमा के लिए अर्घ्य दे ॥ ३९ ॥ जगन्नाथ, देवकीतनय, प्रभो, वसुदेवात्मज, अनन्त, आप को नमस्कार है। भवसागर से आप मेरी रक्षा करें ॥ ४० ॥ इस प्रकार देवेश से प्रार्थना कर रात में जागता रहे । अन्य रोज सुबह

स्नान कर जनपद की पूजा करे ॥ ४१ ॥ भक्ति से मूलमन्त्र द्वारा पायस, तिल तथा घी एक सौ आठ बार होम कर पुरुष सूक्त से हवन करे ॥ ४२ ॥ 'इदं विष्णुः' इस मन्त्र से होम कर पूर्णाहुति होम शेष कार्य करे ॥ ४३ ॥ आचार्य का भूषणाच्छादन आदि द्वारा पूजा करे । व्रत की समाप्ति के लिये एक गौ कपिला दे ॥ ४४ ॥ पयस्विनी, सुशीला,

अष्टोत्तरशतं हुत्वा ततः पुरुषसूक्ततः ॥ ४२ ॥ मन्त्रेणेदं विष्णुरिति जुहुयाद्वै घृताहुतीः ॥ होमशेषं समाप्याथ पूर्णाहुतिपुरःसरम् ॥ ४३ ॥ आचार्यं पूजयेत्पश्चाद् भूषणाच्छादनादिभिः ॥ गामेकां कपिलां दद्याद् व्रतसम्पूर्तिहेतवे ॥ ४४ ॥ पयस्विनीं सुशीलां च सवत्सां सगुणां तथा ॥ स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां कांस्यदोहनिकायुताम् ॥ ४५ ॥ मुक्तापुच्छां ताम्रपृष्ठीं स्वर्णघण्टासमन्विताम् ॥ वस्त्रच्छन्नां दक्षिणाढ्यामेवं सम्पूर्णतामियात् ॥ ४६ ॥ कपिलाया अभावेऽपि गौरन्यापि प्रदीयते ॥ ततः प्रदद्यादृत्विग्भ्यो दक्षिणां च यथार्थतः ॥ ४७ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादष्टौ तेभ्यश्च दक्षिणाम् ॥ कलशाञ्जलसम्पूर्णान्दद्याच्चैव समाहितः ॥ ४८ ॥ प्राप्यानुज्ञां तथा तेभ्यो

सवत्सा, सगुणा, स्वर्ण शृंगी, रौप्यखुरा, कांस्य दोहनिक युता ॥ ४५ ॥ मोती की पूँछ वाली, ताँबे की पीठ वाली, कण्ठ में सोने की घण्टा वाली, कपड़े द्वारा आच्छादित तथा दक्षिण सहित गौ के दान से व्रत परिपूर्ण हो जाता है ॥ ४६ ॥ अभाव में दूसरी गौ दान करे ॥ ऋत्विजों को वरण क्रम की श्रेष्ठता से दक्षिणा दे ॥ ४७ ॥

आठ ब्राह्मण भोजन करा एकाग्र मन से दक्षिणा तथा जल से भरे आठ घड़े का दान दे ॥ ४८ ॥ उन ब्राह्मणों की आज्ञा ले बन्धुओं सहित भोजन करे। हे ब्रह्मपुत्र, इस प्रकार व्रतोद्यापन कर्म करे ॥४९॥ तो उसी काल में पाप से रहित हो सकता है। पुत्र, पौत्र, धन, धान्य परिपूर्ण हो इस संसार में विबुधोत्तम बहुत काल तक सुख भोग

भुञ्जीत सह बन्धुभिः ॥ एवं कृते ब्रह्मपुत्र व्रतोद्यापनकर्मणि ॥ ४९ ॥ निष्पापस्तत्क्षणादेव जायते विबुधोत्तमः ॥ पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनधान्यसमन्वितः ॥ भुक्त्वा भोगांश्चिरं कालमन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ ५० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे कृष्णजन्माष्टमीव्रतकथनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

ईश्वर उवाच ॥ पुरा कल्पे ब्रह्मपुत्र दैत्यभारप्रताडिता ॥ ब्रह्माणं शरणं प्राप पृथ्वी दीनातिविह्वला ॥ १ ॥ वृत्तान्ते तन्मुखाच्छ्रुत्वा ब्रह्मा देवगणैः सह ॥ क्षीरार्णवे हरिं गत्वा तुष्टाव स्तुतिभिर्बहु ॥ २ ॥ प्रादुरासीत्ततो दिक्षु श्रुत्वा सर्वं विधेर्मुखात् ॥ मा भैष्ट देवा

अन्त में वैकुण्ठ जाता है ॥५०॥

ईश्वर ने कहा—हे ब्रह्मपुत्र, पूर्व कल्प में दैत्य भार से अति दुःखी विह्वल अति दीन हो पृथ्वी ब्रह्मा की शरण गई ॥१॥ उसके मुख से कथा सुन देवगणों के सहित ब्रह्मा ने क्षीरसागर में बहुत स्तुति द्वारा हरि को प्रसन्न

किया ॥२॥ ब्रह्मा मुख से सब सुन दिशाओं में प्रादुर्भूत भगवान् ने कहा—हे देवता गण, डरो मत, क्योंकि देवकी के उदर से वसुदेव द्वारा ॥३॥ अवतार ग्रहण कर पृथ्वी का कष्ट हटाऊँगा। आप देवता गण पृथिवी पर जा यादवरूप से उत्पन्न हों। यों कह विभु अन्तर्ध्यान हो गये ॥ ४ ॥ देवकी के जठर से उत्पन्न हो वसुदेव ने कंस डर से गोकुल में

देवक्या जठरे वसुदेवतः ॥ ३ ॥ अवतीर्णो भविष्यामि हरिष्ये भूमिवेदनाम् ॥ भवन्तु यादवा देवा इत्युक्त्वाऽन्तर्दधे विभुः ॥ ४ ॥ देवक्या जठरे जाता वसुदेवेन गोकुले ॥ स्थापितः कंस-भीतेन ववृधे तत्र कंसहा ॥ ५ ॥ आगत्य मथुरां पश्चात्कंसः सगणमाहनत् ॥ ततः सर्वे पौर-जनाः प्रार्थयामासुरादरात् ॥ ६ ॥ कृष्ण कृष्ण महायोगिन् भक्तानामभयप्रद ॥ प्राणघ्नान्पाहि नो देव शरणागतवत्सल ॥ ७ ॥ किञ्चिद्विज्ञापये देव एतन्नो वक्तुमर्हसि ॥ तव जन्मदिने कृत्यं न ज्ञातं केनचित्क्वचित् ॥ ८ ॥ ज्ञात्वा च तद्दिने सर्वे कुर्मो वर्द्धापनोत्सवम् ॥ तेषां दृष्ट्वा च

भगवान् को रखा। वहाँ पर भगवान् बढ़ने लगे ॥५॥ फिर मथुरा में आ सब गणों सहित कंस वध कर सादर सब नगर निवासी प्राणि जनों ने प्रार्थना की ॥ ६ ॥ कृष्ण, कृष्ण, महायोगिन्, भक्तानामभयप्रद, देव, शरणागत-वत्सल, आप को हम लोग नमस्कार करते हैं। हमारी रक्षा करो ॥ ७ ॥ हे देव, हमें आप से कुछ प्रार्थना करनी है उसे करने के योग्य आप हैं। हे देव, किसी को भी जन्म रोज का ज्ञान आप का नहीं हुआ ॥ ८ ॥ जानकर सब उस

रोज वर्द्धापनोत्सव करेंगे । इस प्रकार उसमें उनकी भक्ति, श्रद्धा तथा अपने में आत्मीयता देख ॥ ९ ॥ केशव ने जन्म रोज में हो जानेवाले कार्य को उन लोगों से कहा । उन्होंने श्रवण कर उसी विधान से व्रत किया ॥ १० ॥ व्रत करने वाले को भगवान् ने बहुत वरों को दिया । इसमें एक प्राचीन इतिहास कहते हैं ॥११॥ अंग देश में उत्पन्न 'मितजित'

तां भक्तिं स्वस्मिन्श्रद्धां च सौहृदम् ॥ ९ ॥ कृत्यं जन्मदिने तेभ्यः कथयामास केशवः ॥ श्रुत्वा तेऽपि तथा चक्रुर्विधानात्तेन तद् व्रतम् ॥ १० ॥ वरांश्च बहुधा प्रादाद् भगवान्व्रतकारिणे ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ ११ ॥ अङ्गदेशोद्भवो राजा मितजिन्नाम नामतः ॥ तस्य पुत्रो महासेनः सत्यजित्सत्पथे स्थितः ॥ १२ ॥ पालयामास सर्वज्ञो विधिवद्रञ्जयन्प्रजाः ॥ तस्यैवं वर्तमानस्य कदाचिद्दैवयोगतः ॥ १३ ॥ पाखण्डैः सह संवासो बभूव बहुवासरम् ॥ तत्संसर्गात्स नृपतिरधर्मे निरतोऽभवत् ॥ १४ ॥ वेदशास्त्रपुराणानि निनिन्द बहुशो नृपः ॥ एवं बहुतिथे काले प्रयाते मुनिसत्तम ॥ कालेन वर्णाश्रमगते धर्मे विद्वेषं परमं गतः ॥ १५ ॥

नाम वाला राजा हुआ । उसका पुत्र महासेन नाम वाला हुआ । वह सत्य द्वारा जीतने वाला तथा सन्मार्गानुयायी था ॥ १२ ॥ सर्वज्ञ वह राजा सविधि प्रजा को राजी रखता रक्षा करता था । उसे समय दैवयोग से ॥ १३ ॥ पाखण्डियों के साथ बहुत दिनों तक रहन-सहन होने से उनके संसर्ग से अधर्म में राजा लग गया ॥ १४ ॥ उसने वेद,

शास्त्र तथा पुराणों की बहुत निन्दा की और वर्णाश्रमधर्म से बहुत ही द्वेष करता था ॥ १५ ॥ हे मुनिसत्तम, यों बहुत काल बीतने पर काल वशीभूत हो यमदूत के वश हुआ ॥ १६ ॥ पाशबन्धन में बाँधकर यमदूतों ने यम के समीप लाकर दुष्ट संगति योग से उसे बहुत पीड़ा तथा ताड़ना दी ॥ १७ ॥ फिर नरक में गिरा बहुत कालतक यातना

निधनं प्राप्तो यमदूतवशं गतः ॥ १६ ॥ बद्ध्वा पाशैर्नीयमानो यमदूतैर्यमोऽन्तिकम् ॥ पीडितस्ताड्यमानोऽसौ दुष्टसङ्गतियोगतः ॥ १७ ॥ नरके पातितः प्राप यातनां बहुवत्सरम् ॥ भुक्त्वा पापस्य शेषेण पैशाचीं योनिमास्थितः ॥ १८ ॥ क्षुधातृष्णासमाक्रान्ते भ्रमन्स मरुधन्वसु ॥ कस्यचित्त्वथ वैश्यस्य देहमाविश्य संस्थितः ॥ १९ ॥ सह तेनैव संयातो मथुरां पुण्यदां पुरीम् ॥ समीपे रक्षकैस्तस्य तस्माद्देहाद्बहिष्कृतः ॥ २० ॥ बभ्राम विपिने सोऽथ ऋषीणामाश्रमेषु च ॥ कदाचिद्दैवयोगेन हरेर्जन्माष्टमीदिने ॥ २१ ॥ क्रियमाणां महापूजां व्रतिभिर्मुनिभिर्द्विजैः ॥

दी। भोगकर पाप-अवशिष्ट द्वारा पिशाचयोनि में गया ॥ १८ ॥ भूख-प्यास से दुःखी हो मारवाड़ देश में घूमता हुआ किसी वैश्य के शरीर में प्रवेश कर ॥ १९ ॥ उसी के साथ पुण्य देनेवाली मथुरा पुरी गया। मथुरा के पास पहुँचा तो उस मथुरा रक्षकों ने उसकी देह से अलग कर दिया ॥ २० ॥ वह वन में तथा ऋषियों के आश्रमों में घूमता हुआ कदाचित् दैवयोग से जन्माष्टमी रोज ॥ २१ ॥ मुनियों तथा द्विजों द्वारा की जानेवाली महापूजा और नाम

संकीर्तन आदि से रात में जागा ॥ २२ ॥ सविधि सब कामों को देख हरि कथा सुनी । जिससे उसी क्षण ही निष्पाप पवित्र स्वच्छ चित्त हो गया ॥ २३ ॥ उसी समय प्रेत शरीर छोड़ विष्णुलोक विमान द्वारा गया । यमदूतों से युक्त हो दिव्य भोग समन्वित हो गया ॥ २४ ॥ इस व्रत के प्रभाव से विष्णु के सान्निध्य से मुक्तिफल प्राप्त किया । यह सार्व-

रात्रौ जागरणं चैव नामसङ्कीर्तनादिभिः ॥ २२ ॥ ददर्श सर्वं विधिवच्छुश्रावाथ हरेः कथाम् ॥
निष्पापस्तत्क्षणादेव शुद्धो निर्मलमानसः ॥ २३ ॥ प्रेतदेहं समुत्सृज्य विष्णुलोके विमानगः ॥
यमदूतैः परित्यक्तो दिव्यभोगसमन्वितः ॥ २४ ॥ विष्णुसान्निध्यमापन्नो व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥
नित्यमेतद्व्रतं चैव पुराणे सार्वलौकिकम् ॥ २५ ॥ कथ्यते विधिवत्सम्यङ्मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥
सार्वकामिकमेवैतत्कृत्वा कामानवाप्नुयात् ॥ २६ ॥ एवं यः कुरुते कृष्णजन्माष्टम्यां व्रतं शुभम् ॥
भुक्त्वेह विविधान्भोगाञ्शुभान्कामानवाप्नुयात् ॥ २७ ॥ तत्र देवविमानेन वर्षलक्षं विधेः सुतः ॥
भोगन्नानाविधान्भुक्त्वा पुण्यशेषादिहागतः ॥ २८ ॥ सर्वकामसमृद्धस्तु सर्वाशुभविवर्जितः ॥ कुले

लौकिक नित्य पुराण में व्रत कहा ॥ २५ ॥ मुनि तत्त्वदर्शियों ने सविधि इस व्रत को करने के लिए कहा । यह व्रत सब इच्छाओं का दाता है । इसे करने से सब इच्छा प्राप्त कर लेता है ॥ २६ ॥ जो इस प्रकार कृष्णजन्माष्टमी का शुभ व्रत कर लेता है वह इस संसार में अनेक तरह के भोगों को भोग शुभेच्छाओं को प्राप्त कर लेता है ॥ २७ ॥ हे ब्रह्मपुत्र,

वैकुण्ठ लोक में वह देव के विमान द्वारा एक लाख तक अनेक तरह के भोगों को भोग पुण्य शेष मात्र से यहाँ आता है ॥ २८ ॥ इच्छा समृद्ध तथा सब अशुभ रहित राजश्रेष्ठ वंश में कामदेव तुल्य होकर उत्पन्न होता है ॥२६॥ इसमें ही सदा कृष्णजन्म व्रत विधान लिख अन्य को समर्पण तथा सर्व शोभा समन्वित कृष्णजन्माष्टमी एक जगह संसार इकट्ठा करे

नृपतिवर्याणां जायते मदनोपमः ॥२६॥ यस्मिन्सदैव विषये लिखितं स्यात्परार्पितम् ॥ कृष्णजन्मोपकरणं सर्वशोभासमन्वितम् ॥ ३० ॥ पूज्यते विश्वसृट् तत्र व्रतैरुत्सवसंयुतैः ॥ परचक्रभयं तत्र न कदाचिद्भविष्यति ॥३१॥ पर्जन्यः कामवर्षी स्यादीतिभ्यो न भयं क्वचित् ॥ गृहे वा पूजयेद्यस्तु चरितं देवकीजनः ॥ ३२ ॥ तत्र सर्वसमृद्धं स्यान्नोपसर्गाद्भयं भवेत् ॥ संसर्गेणापि यो भक्त्या व्रतं पश्येदनाकुलः ॥ सोऽपि पापविनिर्मुक्तः प्रयाति हरिमन्दिरम् ॥ ३३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे कृष्णजन्माष्टमीव्रतकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

॥ ३० ॥ उस जगह में विश्वसृट् व्रत और उत्सव सहित पूजा हो तो वहाँ कभी भी यदि भय न हो तो ॥३१॥ उस जगह स्वेच्छा से मेघ वर्षा करता है और कभी भय नहीं होता। जिस घर में भगवान् कृष्ण की पूजा होती है ॥ ३२ ॥ वहाँ सब प्रकार की ऋद्धियाँ होती हैं तथा प्रेत आदि का डर नहीं होता। संसर्ग से भी जो भक्ति द्वारा अव्याकुल मन से व्रत देख लेता है वह भी पाप से रहित हो हरिमन्दिर चला जाता है ॥ ३३ ॥

ईश्वर ने कहा—हे मुनिश्रेष्ठ, सावन महीने की अमावस्या के रोज सब सम्पत्ति प्रदायक 'पिठोरव्रत उत्तम होता है ॥ १ ॥ सर्वाधिष्ठान हो जाने से घर को पीठ कहा जाता है। उसमें पूजन उपयोगी वस्तुमात्र समुदाय को आर कहते हैं ॥ २ ॥ हे मुनीश्वर, अतः 'पिठोरव्रत' इसका नाम हुआ। इस व्रत की विधि आप से कहूँगा, आप सावधान

ईश्वर उवाच ॥ अथ वक्ष्ये मुनिश्रेष्ठ पठोरव्रतमुत्तमम् ॥ अमायां श्रावणे मासि सर्व-सम्पत्प्रदायकम् ॥ १ ॥ सर्वाधिष्ठानमेतद्यद्गृहं पीठं ततो मतम् ॥ आरस्तत्र समूहः स्याद् वस्तु मात्रस्य पूजने ॥ २ ॥ पिठोरमिति संज्ञास्य व्रतस्यातो मुनीश्वर ॥ तत्प्रकारं च वक्ष्येऽहं सावधानमनाः श्रृणु ॥ ३ ॥ कुड्ये विलिख्य ताम्रेण कृष्णेनाऽथ सितेन वा ॥ धातुना तत्र ताम्रे तु पीतेन विलिखेत्सुधीः ॥ ४ ॥ शुक्लेन वाथ कृष्णेन पूर्ववच्चैव संलिखेत् ॥ सितपीतेन रक्तेन कृष्णेन हरितेन वा ॥ ५ ॥ मध्ये शिवं शिवायुक्तं लिङ्गं या मूर्तिमेव वा ॥ विस्तीर्ण कुड्यमालिख्य सर्वसंसारमालिखेत् ॥ ६ ॥ चतुःशालासमायुक्तं पाकागारं सुरालयम् ॥ शय्या-

मन से सुनो ॥ ३ ॥ दीवार में तामे के वर्ण काले या सफेद वर्ण से पोत उस तामे के वर्ण पर पीले रंग से बुद्धिमान् लिखे ॥ ४ ॥ सफेद, काले, सफेद-पीले, लाल या काला, रंग द्वारा लिखे ॥ ५ ॥ पहले मध्य हिस्से में पार्वती सहित शिवलिंग या मूर्ति लिख उसके सब तरफ दीवाल पर सब संसार की चीज लिखे ॥ ६ ॥ चतुःशाला संयुक्त

रसोई घर, देव मन्दिर, शय्या घर, सात खजाना, तथा स्त्रियों के निवास घर अन्दर ॥ ७ ॥ प्रासाद, अट्टालिका शोभा वाली शाल पेड़ निर्मित ईंटा, पत्थर चूने पकी गँधी सुशोभित करे ॥ ८ ॥ विचित्र दरवाजे छरदिवार सहित बनावे । बकरी, गौ, भैंस, अश्व, ऊँट, हाथी ॥ ६ ॥ पालकी, रथ आदि, विविध गाड़ी, स्त्री, बाल, बृद्ध, युवा पुरुष ॥ १० ॥

गृहं सप्तकोशांस्तथान्तः स्त्रीनिकेतनम् ॥ ७ ॥ प्रसादाट्टालिकाशोभं शालवृक्षसमुद्भव ॥ इष्टका-मिश्र पाषाणैश्च चूर्णनद्धैः सुशोभनम् ॥ ८ ॥ द्वाराणि च विचित्राणि बलभीचेष्टिकास्तथा ॥ अजा गावो महिष्यश्च अश्वा उष्ट्रा मतङ्गजाः ॥ ६ ॥ गन्त्रीरथप्रभृतयः शकटानां प्रभेदकाः ॥ स्त्रियो बालाश्च वृद्धाश्च तरुण्य पुरुषास्तथा ॥ १० ॥ पालक्यान्दोलिका चैव मञ्चका बहुरूपकाः ॥ ११ ॥ हैमानि रौप्यानि च ताम्रकाणि सैसानि लौहानि च मृन्मयानि ॥ रङ्गप्रसूतानि च पैत्तलानि पात्राणि नानाविधिकारकाणि ॥ १२ ॥ यावन्तः कशिपभेदा उपबर्हणजातयः ॥ मार्जाराः सारिकाश्चैव शुभा अन्येऽपि पक्षिणः ॥ १३ ॥ पुरुषाणामलङ्कारः स्त्रीणां चैवाप्यने-

पालकी, झूला, बहुरूपिका मचान ॥ ११ ॥ सोने, चाँदी, ताँबा, सीसा, लोहा, मट्टी, कलई द्वारा निर्मित अनेक तरह के बने पीतल पात्र ॥ १२ ॥ जितने खाट, खटोले, पीढ़ा, शय्या आदि तकिया मसलन्द आदि हैं । बिल्ली, शुभ मैना अन्य पक्षी भी ॥ १३ ॥ पुरुषों तथा स्त्रियों के अनेक प्रकार के अलंकार, बिछौने, गलीचा आदि ॥ १४ ॥ यज्ञ के सब

पात्र, स्तम्भ, दण्ड, मन्थनार्थ तीन रस्सी, दूध, मक्खन, दधि, मट्ठा, तक्र, घृत, तेल, तिल ॥ १५ ॥ गोधूम, अक्षत, अरहर, यव, मक्का, चना, मसूर, कुलथी, मूँग, प्रियंगू, तिल, कोदो, अतसी, सामा, उड़द, चावल ये धान्यवर्ग हैं ॥१६॥ सिल, लोढ़ा, चूल्हा, झाड़ू, सभी स्त्री पुरुषों के कपड़े ॥ १७ ॥ बाँस द्वारा निर्मित सूप, उलूखल, मूसल, चक्की ॥१८॥

कशः ॥ यानि चास्तरणानीह तथा प्रावरणानि च ॥ १४ ॥ यज्ञपात्राणि यावन्ति स्तम्भदण्डौ च मन्थने ॥ रज्जुत्रयं च तद्धेतुं दुग्धं च नवनीतकम् ॥ दधि तक्रं तथा वस्तु आज्यं तैलं तिलांस्तथा ॥ १५ ॥ गोधूमशालितुवरीयवयावनालवार्तानिलं च चणका मसुराः कुलित्थाः ॥ मुद्गप्रियङ्गुतिलकोद्रवकातसीतिश्यामाकमाषचवला इति धान्यवर्गाः ॥ १६ ॥ दृषदं चोपलं चुल्हिं तथा सम्मार्जनीमपि ॥ पुरुषाणां च वस्त्राणि नारीणां चैव सर्वशः ॥ १७ ॥ वेणुजन्यं च शूर्पादि तथा तृणभवानि च ॥ उलूखलं च मुसलं यन्त्रं दलयुगान्वितम् ॥ १८ ॥ व्यजनं चामरं छत्रमुपानत्पादुकाद्वयम् ॥ दास्यो दास्या भृत्यपोष्याः पशुभक्ष्यं तृणादिकम् ॥ १६ ॥ धनुर्बाणशतघ्न्यश्च खड्गाः कुन्ताश्च शक्तयः ॥ चर्मपाशाङ्कुशगदास्त्रिशूलं भिन्दि-

पंखा, चामर, छत्र, जूता, दो खड़ाऊँ दासी, दास, भृत्य, पोष्य, पशु, भक्ष्य, तृण आदि ॥ १६ ॥ धनुष, बाण, तोप, खड्ग, भाला, शक्ति, चर्मपाश, अंकुश, गदा, त्रिशूल, भिन्दिपाल ॥ २० ॥ तोमर, मुद्गर, फरसा, पट्टिश, भुशुण्डी,

परिघ, चक्र, यन्त्र आदि ॥ २१ ॥ फूहारा, दावात, कलम, पुस्तक, छूरी, सरौता ॥ २२ ॥ नाना प्रकार के विल्वपत्र, तुलसी, दीपक, दीप रखने की दीवट ॥ २३ ॥ अनेक तरह के साग, भक्ष्य, पक्वान्न अनेक भेद जो कुछ नहीं कहा है उन्हें भी लिखे ॥ २४ ॥ जगत् की चीजों के लेखन विषय में हम कहाँ तक कहें। क्योंकि एक-एक चीजों के सौ

पालकाः ॥ २० ॥ तोमरो मुद्गरश्चैव परशुः पट्टिशस्तथा ॥ भुशुण्डी परिघश्चैव चक्रं यन्त्रादिकं च यत् ॥ २१ ॥ जलयन्त्रा मषीपात्रं लेखनी पुस्तकादिकम् ॥ फलजातं सर्वमपि छुरिका कर्तरी तथा ॥ २२ ॥ नानाविधानि पुष्पाणि बिल्वश्च तुलसी तथा ॥ दीपिकाश्चैव दीपाश्च तथा तत्साधनानि च ॥ २३ ॥ शाकं नानाविधं भक्ष्यं पक्वान्नानां च या भिदा ॥ लेख्यं तच्चैत्र सकलमनूक्तमपि चैव हि ॥ २४ ॥ कियल्लेख्यं जनेनात्र वक्तव्यं वा मया कियत् ॥ एकैकस्य पदार्थस्य भेदाः शतसहस्रशः ॥ २५ ॥ उपचारैः षोडशभिः सर्वेषां पूजनं भवेत् ॥ नानाविधश्च गन्धः स्यात्पुष्पधूपोऽपि चन्दनम् ॥ २६ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेद् बालान्सुवासिन्यश्च पुष्कलान् ॥ प्रार्थयेच्च शिवं साम्बं व्रतं सम्पूर्णमस्त्विति ॥ २७ ॥ शिव साम्ब दयासिन्धो गिरीश शशि-

हजारों भेद कहे गये हैं ॥२५॥ दिवाल पर सब चीजों को लिख कर सोलह उपचारों से उनकी पूजा करे। अनेक तरह के गन्ध, धूप, चन्दन आदि दे ॥ २६ ॥ ब्राह्मण, बालक सौभाग्यवती को बहुतक भोजन करा अम्बिका सहित शिवजी से

कहे हे साम्ब, व्रत संपूर्ण हो ॥ २७ ॥ हे शिव, हे साम्ब, हे दयासिन्धो, हे गिरीश, हे शशिशेखर, इस व्रत से सन्तुष्ट हो मेरे सारे मनोरथों को दो ॥ २८ ॥ इस तरह पाँच साल व्रत कर उद्यापन करे। शिवमन्त्र द्वारा घी तथा बिल्वपत्र का हवन करे ॥ २९ ॥ पूर्वदिन अधिवासन कर ग्रह हवन करे। एक हजार आठ या एक सौ आठ आहुति दे ॥ ३० ॥

शेखर ॥ व्रतेनानेन सन्तुष्टः प्रयच्छास्मान्मनोरथान् ॥ २८ ॥ एवं कृत्वा पञ्चवर्षं तत उद्यापनं चरेत् ॥ आज्येन बिल्वपत्रैश्च होमः स्याच्छिवमन्त्रतः ॥ २९ ॥ ग्रहहोमः पुरा कार्यः पूर्वेद्युरधिवासनम् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा ॥ ३० ॥ होमसंख्या भवेद्वत्स आचार्यं पूजयेत्ततः ॥ भूयसीं दक्षिणां दद्यात्स्वयं भोजनमाचरेत् ॥ ३१ ॥ इष्टबन्धुजनैः सार्धं कुटुम्बसहितो बुधः ॥ एवं कृते विधाने तु सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ यद्यदिष्टतमं लोके तत्सर्वं लभते नरः ॥ ३२ ॥ एतत्ते कथितं वत्स पिठोरव्रतमुत्तमम् ॥ व्रतेनानेन सदृशं सर्वकामसमृद्धिदम् ॥ ३३ ॥

हे वत्स, यों करने मात्र से होम की संख्या पूरी होती है। आचार्य पूजा कर भूयसी दक्षिणा दे स्वयं भोजन करे ॥३१॥ बुद्धिमान् इष्ट बन्धुजनों के तथा कुटुम्बियों के साथ भोजन करे। ऐसा करने मात्र से सब इच्छा प्राप्त कर लेता है। जो-जो इस संसार में इष्ट है वह सब प्राप्त कर लेता है ॥ ३२ ॥ हे वत्स, यह उत्तम 'पिठोर व्रत' आप से मैंने कहा। यह समृद्धि

दाता है इस व्रत के तुल्य अन्य नहीं है ।। ३३ ।। शिव को प्रीति देनेवाला है। ऐसा व्रत हुआ न होगा। हे वत्स,

शिवप्रीतिकरं चैव न भूतं न भविष्यति ।। भित्तौ यद्यल्लिखेद्वस्तु तत्तदाप्नोति निश्चितम् ।। ३४ ।।
इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अमावास्यायां पिठोरव्रतकथनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ।। २५ ।।

ईश्वर उवाच ।। यत्कर्तव्यं नभोमासि अमावास्यादिने भवेत्। प्रसङ्गतश्च यच्चान्यत्स्मृतं तदपि ते ब्रुवे ।। १ ।। पुरा नानाविधैर्दैत्यैर्महाबलपराक्रमैः ।। जगद्विध्वंसकैर्दुष्टैर्देवतोच्छेदकारिभिः ।। २ ।। संग्रामा बहवो जाता आरुह्य वृषभं शुभम् ।। महासत्त्वो महावीर्यो न कदाचिज्जहौ च माम् ।। ३ ।। अन्धकासुरयुद्धे तु तेन छिन्नतनुः कृतः ।। भिन्नत्वग्रुधिरस्रावी प्राणमात्रा-

जो जो दिवाल में लिखता है वह वह उसे निश्चित प्राप्त होता है ।। ३४ ।।

ईश्वर ने कहा— जो सावन महीने की अमावास्या रोज करना चाहिये। वह प्रसंग वश जो कुछ याद हो गया है उसे मैं आप से कहूँगा ।।१।। मैंने पहले महाबली पराक्रमी संसार विध्वंसक देवतोच्छेदनकारी दुष्ट दैत्यों के साथ ।। २ ।। रमणीय शुभ वृषभ पर आरूढ़ हो बहुत बार संग्राम किया। पर महा महाबली, पराक्रमी वृषभ ने मुझे युद्ध में कभी नहीं

त्यागा ॥ ३ ॥ अन्धकासुर युद्ध में उसने वृषभ के शरीर छिन्न कर दिया उसकी देह से भिन्न छिन्न होने से रुधिर बहने लगा और प्राणमात्र ही अवशिष्ट रह गया ॥ ४ ॥ फिर भी धीरता रख जब उस खल को मैं मारने लगा तब तक वृषभ ने मेरा वहन किया। मैंने उस नन्दीश्वर के पराक्रम को देखा ॥ ५ ॥ मैंने अन्धक दैत्य का वध कर प्रसन्न

वशेषितः ॥ ४ ॥ तथापि धैर्यमालम्ब्य यावद्धन्मि च तं खलम् ॥ उवाह तावन्मां नन्दी तस्य तज्ज्ञातवानहम् ॥ ५ ॥ हत्वा तमन्धकं दैत्यं दुष्टोऽहं नन्दिनं तदा ॥ कर्मणा ते प्रसन्नोऽस्मि वरं वरय सुव्रत ॥ ६ ॥ व्रणास्ते प्रथमं यान्तु निरोगो बलवान्भव ॥ पूर्वस्मादपि ते वीर्यं रूपं चापि विवर्धताम् ॥ ७ ॥ यं यं वरं याचसे त्वं तं तं दास्याम्यसंशयम् ॥ ८ ॥ नन्दिकेश्वर उवाच ॥ ममास्ति याचनीयं न देवदेव महेश्वर ॥ ममोपरि प्रसन्नोऽसि किं वैभवमतः परम् ॥ ९ ॥ तथापि भगवन् याचे लोकोपकृतये शिव ॥ अद्यामा श्रावणस्यास्ति यस्यां तुष्टो भवान्मम ॥ १० ॥

हो नन्दी से कहा—हे सुव्रत, मैं तेरे इस काम से सन्तुष्ट हूँ मेरे से तुम वर माँगो ॥ ६ ॥ तेरे व्रण अच्छे हों नीरोगी बली हो और पहले से अधिक रूप वीर्य बढ़े ॥ ७ ॥ तुम जो जो वर माँगो उसे-उसे मैं निश्चित दूँगा ॥८॥ नन्दिकेश्वर ने कहा— दे देवदेव, हे महेश्वर, मुझे कुछ नहीं चाहिये। मेरे पर सन्तुष्ट हैं तो इससे बढ़ कर क्या वैभव होगा ॥९॥ हे भगवन्, हे शिव, फिर भी संसार के उपकार के लिए आप से याचना करता हूँ, आज सावन मास की अमा है जिसमें

आप मेरे पर सन्तुष्ट हैं ॥ १० ॥ इसमें गौ के सहित मृत्तिका बैलों का पूजन तथा आज ही अमावस्या रोज कामधेनु सदृश जन्म हो ॥ ११ ॥ इस अमा को और भी वर दो । जिससे इच्छित वर प्रद हो । भक्ति द्वारा प्रत्येक गौ तथा बैल का पूजन करें ॥ १२ ॥ गेरु आदि धातुओं को देह में प्रयत्नों से विभूषित कर सींगों में सोने चाँदी का पट्टा आदि

एतस्यां वृषथाः पूज्या गोभिर्युक्ताः सुमृन्मयाः ॥ अद्यैवामादिने जन्म कामधेनूपमं भवेत् ॥ ११ ॥ अतोऽप्यस्यां वरं देहि भवत्वेषेच्छितप्रदा ॥ प्रत्यत्तं वृषभा गावः पूजनीयाश्च भक्तितः ॥ १२ ॥ धातुभिर्गैरिकाद्यैश्च भूषणीयाः प्रयत्नतः ॥ शृंगेषु स्वर्णरौप्यादिपट्टिकाबन्धशोभनम् ॥ १३ ॥ कौशेयगुच्छान्महतः शृङ्गयोरपि बन्धयेत् ॥ पृष्ठं नानाविधैर्वर्णैश्चित्रितेन सुवाससा ॥ १४ ॥ अच्छादयेद् गले घण्टां बध्नीयाद्रम्यशब्दिताम् ॥ दिनाष्टांशे बहिर्नीत्वा सायं ग्रामं प्रवेशयेत् ॥ १५ ॥ पिण्यातकं च नैवेद्यं अन्यं नानाविधं च यत् ॥ अर्पयेत्तस्य भवतु गोधनं वृद्धिगं सदा ॥१६॥ गावो यत्र गृहे न स्युः श्मशानसदृशं च तत् ॥ पञ्चामृतं पञ्चगव्यं न भवेद् गोरसं

लगा विभूषित करें ॥ १३ ॥ दोनों सींगों में रेशमी गुच्छे बाँध चित्र विचित्र नानारंग से चित्रित कपड़े से पीठ पर ॥१४॥ ढक कर कण्ठ में रमणीय सुमधुर शब्द करने वाले घण्टे को बाँधे । दिन के आठवें हिस्से में गाँव के बाहर तथा साम को फिर गाँव में ले आवे ॥ १५ ॥ खली, बिनौले आदि के नैवेद्यों तथा नाना तरह के अन्नों को समर्पण करें । निरन्तर

उसके यहाँ गो धन की वृद्धि होती है ॥ १६ ॥ जिसके घर में गौ नहीं होती वह श्मशान के तुल्य होता है। क्योंकि गोरस बिना पञ्चामृत और पंञ्चगव्य नहीं होता ॥ १७ ॥ और गोमय के विना घर का सम्मार्जन नहीं होता। क्योंकि चींटी आदि जन्तुओं का उपद्रव वहाँ रहता है ॥ १८ ॥ गोमूत्र का जहाँ प्रोक्षण नहीं होता। हे सुरोत्तम, हे महादेव,

विना ॥ १७ ॥ सम्मार्जनं पूततमं गोमयेन विना न हि ॥ पिपीलिकादिजन्तूनामुपसर्गाश्च तत्र हि ॥ १८ ॥ प्रोक्षणं यत्र गोमूत्रान्न भवेच्च सुरोत्तम ॥ भोजनस्य महादेव को रसो गोरसं विना ॥ १६ ॥ एतेऽन्येऽपि वरा देयाः प्रसन्नोऽसि यदि प्रभो ॥ इति नन्दिवचः श्रुत्वा तुष्टोऽहमधिक तदा ॥ २० ॥ सर्वमस्तु वृषश्रेष्ठ यथा ते याचितं तथा ॥ अन्यच्च शृणु भो नन्दिन् नामास्य तु दिनस्य यत् ॥ २१ ॥ न वाह्यते यो वृषभः केनचित्कर्मणि क्वचित् ॥ तृणमश्नन्पिबन्नीरं तूष्णीं यो वर्धते वृषः ॥२२॥ महावीरश्च बलवान् पोल इत्युच्यते हि सः ॥ तन्नाम्नेदं दिनं

गोरस बिना भोजन का क्या रस ही है ॥ १६ ॥ हे प्रभो, यदि आप सन्तुष्ट हैं तो ये तथा और भी वरों को दें। इस प्रकार नन्दी की वाणी सुनकर अधिक मैं प्रसन्न हुआ ॥२०॥ हे वृष श्रेष्ठ, जो माँगा है सब मिलेगा। हे नन्दिन्, और भी सुनो। जो आज दिन का नाम है ॥२१॥ जो वृषभ को किसी काम में न लगावे बैल तृण खाता और जल पान करता रहे ॥ २२ ॥ उसे महावीर बलवान् 'पोल' नाम ही से कहते हैं। हे नन्दिन्, उसी नाम द्वारा आज का दिन भी पोल

नाम से होगा ॥ २३ ॥ उसमें बड़ा कार्य इष्ट-बन्धुजनों सहित उत्सव करे। मैंने इन उत्तम वरों को दिया। इससे यह उत्तम दिन लोगों द्वारा 'पोला' नाम से होगा ॥ २४ ॥ आज सब इच्छाओं के देने वाले बैलों का बड़ा उत्सव करे। अनन्तर आज ही कुशग्रह विधि कहूँगा ॥ २५ ॥ सावन अमा रोज शुचि हो कुशा उखाड़ लेने से वे कुशा बारंबार कार्य

नन्दिन् पोला इति भविष्यति ॥ २३ ॥ तत्रोत्सवो महान्कार्य इष्टबन्धुजनैः सह ॥ इति दत्ता मया धत्स्व वराः श्रेष्ठा हि तद्दिने ॥ तेन श्रेष्ठदिनं चैतत्पोलासंज्ञं मतं जनैः ॥ २४ ॥ अत्रोत्सवो महान्कार्यो वृषाणां सर्वकामदः ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि अस्यामेव कुशाग्रहम् ॥ २५ ॥ नभोमासस्य दर्शे तु शुचिर्दर्भान्समाहरेत् ॥ अयातयामास्ते दर्भा विनियोज्यः पुनः पुनः ॥ २६ ॥ कुशाः काशा यवा दूर्वा उशीराश्च सकुन्दकाः ॥ गोधूमा व्रीहयो मौञ्ज्या दश दर्भाः सबल्वजाः ॥ २७ ॥ विरिञ्चिना सहोत्पन्न परमेष्ठीनिसर्गज ॥ नुद पापानि सर्वाणि दर्भ स्वस्तिकरो भव ॥ २८ ॥ एवं सन्मन्त्रमुच्चार्य ततः पूर्वोत्तरामुखः ॥ हुंफट्कारेण मन्त्रेण सकृच्छित्त्वा समुद्धरेत्

में लिये जाने पर भी शुद्ध रहती है ॥ २६ ॥ कुश, काश, यव, दूर्वा, खश, कुन्दक, गेहूँ, धान, मूंज और घास ये दस कुशा के ही भेद हैं ॥२७॥ ब्रह्मा स्वभावे उत्पन्न दर्भ, ब्रह्मा सहित उत्पन्न दर्भ, मेरे सब पापों को नष्ट करे। स्वस्तिकर हो ॥२८॥ यों मन्त्र कह पूर्व उत्तर के बीच ईशान कोण मुखकर 'हुँ फट्' इस मन्त्र से एक ही बार कुश उखाड़े ॥२९॥

जिन कुशों के अग्रभाग हों रूखे न हों ऐसे हरे रंग के कुश देवकार्य और जपादि कर्म में तथा जड़रहित कुशा पितृकार्य में रक्खे ॥ ३० ॥ देव तथा पितृ कार्य में सात पत्र के कुश उत्तम कहे हैं। मध्य में पत्र न हों, ऐसे अग्रभाग सहित प्रादेश प्रमाण कुश पवित्र में ग्रहण करने योग्य हैं ॥ ३१ ॥ ब्राह्मण के वास्ते चार कुश का पवित्र क्षत्रिय आदि के लिए

॥ २६ ॥ अच्छिन्नाग्रा अशुष्काग्राः पत्रे तु हरिताः स्मृताः ॥ अमूला देवकार्येषु प्रयोज्याश्च जपादिषु ॥ ३० ॥ सप्तपत्राः कुशाः शस्ता दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥ अनन्तगर्भिणौ साग्रौ प्रादेशौ च पवित्रके ॥ ३१ ॥ चतुर्भिर्दर्भपिञ्जूलैः पवित्रं ब्राह्मणस्य तु ॥ एकैकं न्यूनमुद्दिष्टं वर्णे वर्णे यथाक्रमम् ॥ ३२ ॥ सर्वेषां वा भवेद् द्वाभ्यां पवित्रं ग्रन्थिशोभितम् ॥ इदं तु धारणार्थं स्यात्पवित्रं कथितं तव ॥ ३३ ॥ दर्भद्वयं तु सर्वेषां भवेदुत्पवनाय च ॥ पञ्चाशता भवेद्ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरः ॥ ३४ ॥ निष्कासनीयं नो हस्तादाचमे तु पवित्रकम् ॥ विकिरेऽग्नौ कृते चैव कृते पाद्ये तु सन्त्यजेत् ॥ ३५ ॥ नास्ति दर्भसमं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ॥

क्रम से एक एक कुश न्यून कर दे ॥ ३२ ॥ या सभी के लिये दो का शोभन ग्रन्थियुक्त पवित्र दे। मैंने तुमसे यह धारण योग्य पवित्र कहा ॥ ३३ ॥ उत्पवनार्थ के लिए वर्णों के लिए दो पवित्र होता है। पचास का ब्रह्मा तथा पचीस का विष्टर होता है ॥ ३४ ॥ पवित्र को आचमन समय हाथ से न निकाले। विकिर, अग्नौकरण तथा पाद्य समाप्ति पर

पवित्र त्यागे ॥३५॥ दर्भ तुल्य पुण्य दाता अन्य पवित्र पाप नाशक नहीं है। जितने दैव और पितृ कार्य हैं वे सब दर्भाधीन हैं ॥ ३६ ॥ अमावास्या के रोज ऐसे दर्भों को स्वीकार करे। वे कभी दर्भ बासी नहीं होते। इससे विशेष क्या सावन अमा का माहात्म्य कहूँ ॥ ३७ ॥ यह सावन अमा दिन का कृत्य कहा। सावन महीने का जो कार्य है उसे

दर्भाधीनानि कर्माणि दैवपित्र्याणि सर्वशः ॥ ३६ ॥ तादृग्विधानां दर्भाणाममायां ग्रहणं भवेत् ॥ अयातयामता चैव किं वर्ण्याऽमा नभस्यतः ॥ ३७ ॥ इत्येतत्कथितं कृत्यममायां श्रावणे तु यत् ॥ अन्यच्च श्रावणे कृत्यं तच्चापि कथयामि ते ॥ ३८ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावण मासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अमायां वृषभपूजनं कुशग्रहणं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥२६॥

ईश्वर उवाच ॥ अथातः श्रावणे कर्कसिंहसंक्रान्तिसम्भवः ॥ प्राप्ते तत्र हि यत्कृत्यं तच्चापि कथयामि ते ॥ १ ॥ सिंहकर्कटयोर्मध्ये सर्वा नद्यो रजस्वलाः ॥ तासु स्नानं न कुर्वीत वर्जयित्वा समुद्रगाः ॥ २ ॥ अगस्त्योदयपर्यन्तं केचिदूचुर्महर्षयः ॥ यावन्नोदेति भगवान् द-

भी मैं कहता हूँ ॥ ३८ ॥

ईश्वर ने कहा—अनन्तर सावन महीने में कर्क तथा सिंह संक्रान्ति जन्य जो कुछ कार्य है उसे भी आपसे मैं कहता हूँ ॥ १ ॥ कर्क संक्रान्ति से सिंह की संक्रान्ति तक सब नदी रजस्वला हो जाती हैं। उस काल उनमें स्नान न

करे। समुद्र सम्बन्धी नदी में दोष नहीं है ॥ २ ॥ कुछ महर्षियों का कथन है कि कर्क संक्रान्ति से दक्षिण दिशा स्थित भगवान् अगस्त्य के उदय काल तक रजस्वला नदी रहती है ॥ ३ ॥ ग्रीष्म में भूमि पर जो नदी सूखती हैं वे अल्प जलवाली रजस्वला नदी तबतक रहती हैं ॥ ४ ॥ अपने आप जिन नदियों की गति आठ हजार धनुष (बत्तीस हाथ)

क्षिणाशविभूषणः ॥ ३ ॥ तावद्रजोवहा नद्य अल्पतोयाः प्रकीर्तिताः ॥ या शेषमुपगच्छन्ति ग्रीष्मे तु सरितो भुवि ॥ ४ ॥ तासु प्रावृषि न स्नायादपूर्णे दशवासरे ॥ धेनुः सहस्राण्यष्टौ च गतिर्यासां स्वतो न हि ॥ ५ ॥ न ता नदीशब्दवाच्या गर्तास्ते परिकीर्तिताः ॥ प्रारम्भे कर्कसंक्रान्तेर्महानद्यो रजस्वलाः ॥ ६ ॥ त्रिदिनं तु चतुर्थेऽह्नि शुद्धाः स्युर्योषितो यथा ॥ महा नदीः प्रवक्ष्यामि श‍ृणुष्वावहितो मुने ॥ ७ ॥ गोदावरी भीमरथी तुङ्गभद्रा च वेणिका ॥ तापी पयोष्णी विन्ध्यस्य दक्षिणे षट् प्रकीर्तिताः ॥ ८ ॥ भागीरथी नर्मदा च यमुना च सरस्वती ॥

नहीं है उन नदियों में वर्षा ऋतु में दस दिन तक स्नान न करे ॥ ५ ॥ उन नदियों को नदी न कह गर्त शब्द से कहे। आरम्भ में कर्क संक्रान्ति में महानदी रजस्वला होती हैं ॥ ६ ॥ जैसे स्त्रियाँ तीन रोज अपवित्र रह चौथे रोज पवित्र हो जाती हैं। तैसे ही महानदी भी तीन रोज अपवित्र रह शुद्ध होती हैं। हे मुने, उन को कहूँगा सावधान हो आप सुनो ॥७॥ गोदावरी, भीमरथी, तुङ्गभद्रा, वेणिका, तापी और पयोष्णी विन्ध्य-पर्वत के दक्षिण ये छह नदी हैं ॥ ८ ॥ भागीरथी,

नर्मदा, यमुना, सरस्वती, विशोका तथा वितस्ता विन्ध्य-पर्वत के उत्तर ये छ महानदी हैं ॥ ६ ॥ बारह महानदी देवर्षिक्षेत्र से प्रादुर्भूत हैं। देविका, कावेरी, बञ्जरा और ॥ १० ॥ कृष्णा ये महानदी चार कर्क संक्रान्ति हो जानेपर एक रोज रजस्वला होती हैं। कर्क संक्रान्ति से तीन रोज गौतमी नदी रजस्वला हो जाती हैं ॥ ११ ॥ चन्द्रभागा, सती, सिन्धु,

विशोका च वितस्ता च मध्यस्योत्तरतोऽपि षट् ॥ ६ ॥ कृष्णा द्वादशैता महानद्यो देवर्षिक्षेत्र-सम्भवाः ॥ महानद्यो देविका च कावेरी वञ्जरा तथा ॥ १० ॥ कृष्णा रजस्वला एताः कर्कटादौ त्र्यहं नृप ॥ कर्कटादौ रजोदुष्टा गौतमी वासरत्रयम् ॥ ११ ॥ चन्द्रभागा सती सिन्धुः सरयूर्नर्मदा तथा ॥ गङ्गा च यमुना चैव प्लक्षजाला सरस्वती ॥ १२ ॥ रजसा नाभिभूयन्ते ये चान्ये नदसंज्ञिताः ॥ शोणः सिन्धुर्हिरण्याख्यः कोकिलाऽऽहितघर्घरा ॥ १३ ॥ शतद्रुश्च नदा सप्त पावनाः परिकीर्तिताः ॥ गङ्गा धर्मद्रवः पुण्या यमुना च सरस्वती ॥ १४ ॥ अन्तर्गता रजोदोषाः सर्वावस्थासु चामलाः ॥ अपामयं रजोदोषो न भवेत्तीरवासिनाम् ॥ १५ ॥ जलं

सरयू, नर्मदा, गंगा, यमुना, प्लक्षजाला तथा सरस्वती ॥ १२ ॥ ये नव नदी एवं नद नाम से सुविख्यात शोण, सिन्धु, हिरण्य, कोकिल, आहित, घर्घर ॥१३॥ शतद्रु ये सात पवित्र हैं। ये रजस्वला नहीं होती हैं। धर्मद्रवा, गंगा, यमुना तथा सरस्वती ॥ १४ ॥ ये सब काल में रजोदोष वाली गुप्त होती हैं। ये सर्वदा पवित्र हैं। जो नदी तट निवासी हैं उन्हें

रजस्वलाजन्य पाप नहीं लगता ॥ १५ ॥ रजोदुष्ट जल भी गंगाजल के मिलने से पवित्र होता है । बकरी, गौ, भैंस, प्रसूता स्त्री ॥ १६ ॥ और भूमि में नवीन जल दस रात बाद शुद्ध होते हैं । जहाँ कूप तथा बावली न हो वहाँ नदी जल अमृततुल्य है ॥ १७ ॥ रजोदुष्ट समय में भी ग्रामनिवासियों को पाप नहीं होता । अन्य द्वारा जल के निर्गत करने

रजोदुष्टमपि गङ्गातोयेन पावनम् ॥ अजा गावो महिष्यश्च योषितश्च प्रसूतिकाः ॥ १६ ॥
भूमेर्नवोदकं चैव दशरात्रेण शुध्यति ॥ अभावे कूपवापीनामन्यासां च पयोऽमृतम् ॥ १७ ॥
रजोदुष्टेऽपि वयसि ग्रामभोगो न दुष्यति ॥ अन्येन चोद्धृते नीरे रजोदोषो न विद्यते ॥ १८ ॥
उपाकर्मणि चोत्सर्गे प्रातःस्नाने विपत्सु च ॥ चन्द्रसूर्यग्रहे चैव रजोदोषो न विद्यते ॥ १९ ॥
अतः परं प्रवक्ष्यामि सिंह गोप्रसवो यदि ॥ भानौ सिंहगते चैव यस्य गौः संप्रसूयते ॥ २० ॥
मरणं तस्य निर्दिष्टं षड्भिर्मासैर्न संशयः ॥ तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि येन सम्पाद्यते सुखम् ॥ २१ ॥
प्रसूतां तत्क्षणादेव तां गां विप्राय दापयेत् ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत घृताक्तै राजसर्षपैः ॥ २२ ॥

पर भी रजोजन्य पाप नहीं होता ॥ १८ ॥ श्रावणी, उत्सर्ग, प्रातःस्नान, विपत्ति, चन्द्रग्रहण, और सूर्यग्रहण समय में रजोदोष नहीं होता ॥१९॥ सिंहसंक्रान्ति पर गोप्रसवफल कहूँगा । जिसकी सिंह के सूर्य हो जाने पर गौ व्यायी हो ॥२०॥ उसका महीने में मरण निश्चय होता है । उस समय की शान्ति मैं कहूँगा जिसे करने मात्र से सुखी होता है

है ॥ २१ ॥ उस काल में गौ व्यायी ब्राह्मण को ही उसी समय उसको दे पीली सरसों तथा घृत से होम करे ॥ २२ ॥ एक सहस्र आठ आहुति घी और तिल से व्याहृति से दे ॥ २३ ॥ उपवास कर निश्चित ब्राह्मण को दक्षिणा दे । सिंह राशि के सूर्य के आने पर गौ व्यायी हो ॥ २४ ॥ निश्चित कुछ अनिष्ट होगा उसके शान्ति के लिए

आहुतीनां घृताक्तानां तिलानां जुहुयात्ततः ॥ सहस्रेण व्याहृतिभिरष्टसंख्याधिकेन च ॥ २३ ॥
सोपवासः प्रयत्नेन दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ॥ सिंहराशौ गते सूर्ये गोप्रसूतिर्यदा भवेत् ॥ २४ ॥
तदाऽनिष्टं भवेत्किञ्चित्तच्छान्त्यै शान्तिकं चरेत् ॥ अस्यावामेति सूक्तेनत द्विष्णोरिति मन्त्रतः ॥२५॥
जुहुयाच्च तिलाज्येन शतमष्टोत्तराधिकम् ॥ मृत्युञ्जयविधानेन जुहुयाच्च तथाऽऽयुतम् ॥ २६ ॥
श्रीसूक्तेन ततः स्नायाच्छान्तिसूक्तेन वा पुनः ॥ एवं कृतविधानेन न भयं जायते क्वचित् ॥ २७ ॥
एवमेव नभोमासि सूयेत वडवा दिने ॥ अत्रापि शान्तिकं कार्यं तदा दोषो विनश्यति ॥ २८ ॥
कर्के सिंहे नभोदानमथ वक्ष्ये शुभप्रदम् ॥ घृतधेनुप्रदानं च कर्कटस्थे दिवाकरे ॥ २९ ॥

शान्ति करे 'अस्यावाम' इस सूक्त से तथा 'तद्विष्णोः' इस मन्त्र से ॥ २५ ॥ तिल, घी से एक सौ आठ होम दे तथा मृत्युञ्जय विधान द्वारा दस हजार हवन करे ॥ २६ ॥ श्रीसूक्त या शान्तिसूक्त द्वारा स्नान करे । ऐसा करने से किसी प्रकार का डर होता नहीं ॥ २७ ॥ इस प्रकार सावन महीने के रोज घोड़ी व्यायी हो तो शान्ति करने मात्र से दोष नष्ट

हो जाता है ॥ २८ ॥ कर्क या सिंह की संक्रान्ति सावन महीने में होने से शुभप्रद दान कहूँगा। कर्क सूर्य में दान घृत धेनु का करे ॥ २६ ॥ सोने तथा छाते का दान सिंह संक्रान्ति में करे। सावन महीने में कपड़े का दान बड़े फल को देता है ॥३०॥ घृत, घृतकुंभ, घृतधेनु तथा फल सावन महीना भगवान् श्रीधर प्रीति के लिए विद्वान् को दे ॥३१॥

ससुवर्णं छत्रदानं शस्तं सिंहे निगद्यते ॥ श्रावणे वस्त्रदानस्य कीर्तितं सुमहत्फलम् ॥ ३० ॥
घृतं च घृतकुम्भाश्च घृतधेनुः फलानि च ॥ श्रावणे श्रीधरप्रीत्यै दातव्यानि विपश्चिते ॥ ३१ ॥
अन्यान्यपि च दानानि मत्तोषाय कृतानि च ॥ अक्षय्यफलदानि स्युरन्यमासेभ्य एव हि ॥ ३२ ॥
द्वादशस्वपि मासेषु नास्ति चैतादृशः प्रियः ॥ आगच्छति नभोमासि प्रतीक्षां च करोम्यहम् ॥ ३३ ॥
करिष्यते व्रतं योऽत्र स मे प्रियतरो भवेत् ॥ ब्राह्मणानां विधू राजा सूर्यः प्रत्यक्षदैवतम् ॥ ३४ ॥
ममाक्षिणी तयोरत्र संक्रान्ती भवतो यतः ॥ कर्कसंज्ञा सिंहसंज्ञा माहात्म्यं किमतः परम् ॥ ३५ ॥

अन्य भी दान मेरे सन्तोषार्थ इस महीने में करे। अन्य महीनों की अपेक्षा अक्षय फल देनेवाला होता है ॥ ३२ ॥ इस मास से प्रिय बारह महीनों में अन्य महीना नहीं है । सावन महीने के आ जाने की प्रतीक्षा मैं करता हूँ ॥ ३३ ॥ मेरा अधिक प्रिय पात्र होगा। जो इसमें व्रत करेगा। क्योंकि ब्राह्मणों का राजा चन्द्रमा और प्रत्यक्ष देवता सूर्य हैं ॥३४॥ इसमें दोनों मेरे नेत्र हैं उसकी संक्रान्ति संज्ञा कर्क संज्ञा तथा सिंह संज्ञा हुई। इससे अधिक माहात्म्य क्या कहूँ ॥३५॥

जो प्राणी एक महीने तक सुबह नहाता है उसे बारह महीने में सुबह नहाने का फल मिल जाता है ॥३६॥ जो सावन महीने में प्राणी सुबह नहाता नहीं उसके बारह महीने के किये हुए काम व्यर्थ होते हैं ॥ ३७ ॥ हे महादेव, हे दया-सिन्धो, श्रावण महीने में संयत हो मैं सुबह नहाऊँगा । हे प्रभो, आप निर्विघ्न कार्य करो ॥ ३८ ॥ स्नान और शिव

प्रातःस्नानं मासमात्रमत्र यः कुरुते नरः ॥ द्वादशस्वपि मासेषु प्रातःस्नानफलं लभेत् ॥ ३६ ॥ न करोति नभोमासि प्रातःस्नानं यदा नरः ॥ द्वादशस्वपि मासेषु कृतं निष्फलतामियात् ॥ ३७ ॥ महादेव दयासिन्धो श्रावणे मासि संयतः ॥ प्रातःस्नानं करिष्यामि निर्विघ्नं कुरु मे प्रभो ॥ ३८ ॥ स्नात्वा शिवं समभ्यर्च्य नभोमाहात्म्यसत्कथाम् ॥ शृणुयात्प्रत्यहं भक्त्या एवं मासं नयेत्सुधीः ॥ ३९ ॥ अन्यत्र मासः कृष्णादिरत्र शुक्लादिरिष्यते ॥ नभोमासकथायास्तु माहात्म्यं केन वर्ण्यते ॥ ४० ॥ सप्तधापि च या वन्ध्या सा पुत्रं लभते शुभम् ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां बलार्थी लभते बलम् ॥ ४१ ॥ रोगी चारोग्यमाप्नोति बद्धो मुच्येत बन्धनात् ॥ धनं धनार्थी लभते

पूजा कर सावन महीने का माहात्म्य कथा भक्ति युक्त रोज सुने । इस प्रकार विद्वान् महीने भर वितावे ॥ ३९ ॥ अन्यत्र कृष्णादि महीना लिया है पर सावन महीना शुक्लादि अभीष्ट है। सावन महीने का माहात्म्य कौन वर्णन कर सकता है ॥ ४० ॥ सात तरह की वन्ध्या कही गयी हैं । वे भी शुभ पुत्र प्राप्त करती हैं । विद्या विद्यार्थी, बल बलार्थी प्राप्त

करता है ॥ ४१ ॥ रोगी आरोग्यता, मनुष्य बन्धन से बँधा हुआ छूट जाता है। धन धनार्थी तथा धर्म में प्रेम करता है ॥ ४२ ॥ भार्यार्थी स्त्री को प्राप्त करता है। हे मानद, जो-जो इच्छा करता है, वह सब निश्चित मिलता है ॥ ४३ ॥ अन्त में मेरे पुर में जाकर मेरे समीप हर्ष प्राप्त करता है। व्यास की पूजा अच्छी प्रकार कपड़े, अलंकार आदि से करे

धर्मे चैव रतिर्भवेत् ॥४२॥ भार्यार्थी लभते भार्यां किं बहूक्तेन मानद ॥ यद्यत्कामयते तत्तत्प्राप्नोत्यत्र न संशयः ॥ ४३ ॥ अन्ते मम पुरं प्राप्य मोदते मम सन्निधौ ॥ पूजयेद्वाचकं सम्यग्वासोऽलङ्क-रणादिभिः ॥ ४४ ॥ वाचकस्तोषितो येन तेनाहं तोषितः शिवः ॥ श्रुत्वा श्रावणमाहात्म्यं वाचकं यो न पूजयेत् ॥ ४५ ॥ छिनत्ति रविजस्तस्य कर्णौ स बधिरो भवेत् ॥ तस्माच्छक्त्या प्रकुर्वीत वाचकस्य सुपूजनम् ॥ ४६ ॥ इदं श्रावणमाहात्म्यं यः पठेच्छृणुयादपि ॥ श्रावयेद्वापि सद्भक्त्या तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कु-मारसंवादे नदीरजोदोषसिंहकर्कटश्रावणस्तुतिवाचकपूजाकथनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

॥ ४४ ॥ जिसने व्यास प्रसन्न किया, शिव को उसने राजी किया और जो सावन माहात्म्य को सुन व्यास पूजा नहीं करता ॥४५॥ यमराज उसके कान काटते हैं, जिससे वह बहिरा होता है। अतः व्यास की यथाशक्ति पूजा करे ॥४६॥ जो उत्तम भक्ति द्वारा इस सावन महीने के माहात्म्यको पढ़ता, सुनता या सुनाता है उसे अनन्त पुण्य हो जाता है॥४७॥

ईश्वर ने कहा—इसके बाद अगस्त्य अर्घ्य विधि को कहूँगा। हे वैधात्र, जिसके करने मात्र से सब इच्छाओं को प्राप्त कर लेता है ॥ १ ॥ अगस्त्योदय से पहले ही समय का निश्चित करे। सात रात उदय हो जाने में अवशिष्ट हो तो पहले सात रात पूर्व से ॥ २ ॥ अर्घ्य रोज दे। उसके विधान को मैं आप से कहता हूँ। गृही सुबह श्वेत तिल से नहा

ईश्वर उवाच ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि अगस्त्यार्घ्यविधिं परम् ॥ येन चीर्णेन वैधात्र सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ १ ॥ कालस्तस्य च विज्ञेयः अगस्त्यस्योदयात्पुरा ॥ सप्तरात्राद्भवेद्याव-दुदयः सप्तरात्रकम् ॥ २ ॥ दद्यादर्घ्यं प्रत्यहं च तद्विधिं ते वदाम्यहम् ॥ प्रातः शुक्लतिलैः स्नात्वा शुक्लमाल्याम्बरो गृही ॥ ३ ॥ स्थापयेदव्रणं कुम्भं सुवर्णादिविनिर्मितम् ॥ पञ्चरत्न-समायुक्तं घृतपात्रेण संयुतम् ॥ ४ ॥ नानाभक्ष्यफलैर्युक्तं माल्यवस्त्रविभूषितम् ॥ ताम्रेण पूर्णपात्रेण उपरिस्थेन भूषितम् ॥ ५ ॥ कुम्भोद्भवस्य प्रतिमां तत्र पात्रे निधापयेत् ॥ अङ्गुष्ठ-मात्रं पुरुषं सौवर्णं च चतुर्भुजम् ॥ ६ ॥ पीनात्यायतदोर्दण्डं दक्षिणाभिमुखं मुनिम् ॥ सुशोभनं

सफेद कपड़ा तथा माला धारण करे ॥ ३ ॥ सोने आदि से निर्मित व्रण रहित कुम्भ का स्थापन कर पंचरत्न युक्त घी पात्र युक्त ॥ ४ ॥ अनेक तरह के भोजनीय फल संयुक्त माला तथा कपड़े से विभूषित कर उसके ऊपर ताँबे का पूर्णपात्र रखे ॥ ५ ॥ उसपर कुम्भोद्भव अगस्त्य ऋषि की प्रतिमा रखे। सोने की अंगुष्ठ मात्र की वह प्रतिमा चतुर्भुज हो ॥ ६ ॥

प्रतिमा मोटी लम्बी हाथों युक्त, दक्षिणा मुख, जटामण्डलधारी और सुशोभन शान्त ॥ ७ ॥ हाथ में कमण्डलु, बहुत शिष्यों से घिरी दर्भ-अक्षतधारी तथा लोपामुद्रा सहित हो ॥ ८ ॥ उसमें आवाहन कर गन्ध, पुष्प आदि सोलह उपचार से पूजन करे। बहुत विस्तार द्वारा नैवेद्य समर्पण करे ॥ ९ ॥ सभक्ति मन से दध्योदन बलि तथा अर्घ्य दे। उसके

प्रशान्तं च जटामण्डलधारिणम् ॥ ७ ॥ कमण्डलुकरं शिष्यैर्बहुभिः परिवारितम् ॥ यथा दर्भाक्षतधरं लोपामुद्रासमन्वितम् ॥ ८ ॥ आवाहयेत्पूजयेच्च गन्धपुष्पादिभिस्तथा ॥ उपचारैः षोडशभिर्नैवेद्यैर्बहुविस्तरैः ॥ ९ ॥ दध्योदनबलिं दद्याद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ततश्चार्घः प्रदातव्यस्तस्य चैव विधिं शृणु ॥ १० ॥ सौवर्णे वाथ रौप्ये वा ताम्रे वेणुमयेऽथवा ॥ पात्रे नारिङ्गखर्जूरनारिकेलफलानि च ॥ ११ ॥ कूष्माण्डकारवल्लीनि कदली दाडिमानि च ॥ वृन्ताकबीजपूराणि अक्षोटाः पिस्तकास्तथा ॥ १२ ॥ नीलोत्पलानि पद्मानि कुशदूर्वाङ्कुरास्तथा ॥ अन्यान्यपि च साध्यानि फलानि कुसुमानि च ॥ १३ ॥ नानाप्रकारभक्ष्याणि सप्तधान्यानि

विधान सुनो ॥ १० ॥ सोने, चाँदी, ताँबा या वेणु में नारंगी, खजूर, नारिकेल फल ॥ ११ ॥ कूष्माण्ड, कारवल्ली, करेला, केला, अनार, भण्टा, बिजोरा नीबू, अखरोट, पिस्ता ॥१२॥ नील कमल, कमल, कुश, दूर्वा तथा अन्य सुसाध्य फल एवं पुष्प ॥ १३ ॥ अनेक तरह के भक्ष्य, सातों धान, सात अंकुर, पञ्च पल्लव, पाँच कपड़े ॥ १४ ॥ इन पदार्थोंको

रख अच्छी प्रकार पात्र की पूजा करे। पृथिवी में घुटनों के बल स्थित हो पात्र को सिर में लगा ॥ १५ ॥ मस्तक को झुका कुम्भोद्भव मुनि का ध्यान कर श्रद्धा भक्ति युक्त अर्घ्य दे ॥ १६ ॥ कहे काशपुष्प तुल्य वाले, वह्निमारुत सम्भव, हे मित्रावरुण, कुम्भयोने, आप को नमस्कार है ॥ १७ ॥ हे विन्ध्यवृद्धिक्षयकर, हे मेघतोयविषापह, हे रत्नवल्लभ,

चैव हि ॥ सप्ताङ्कुरा पल्लवाश्च पञ्च वस्त्राणि चैव हि ॥ १४ ॥ एतान्पदार्थान् संस्थाप्य पात्रं सम्यक्प्रपूजयेत् ॥ जानुभ्यामवनिं गत्वा तत्पात्रं नम्रमूर्धनि ॥ १५ ॥ धृत्वा वाचिमुखो भूत्वा ध्यायेत्कुम्भोद्भवं मुनिम् ॥ दद्यादर्घ्यं प्रयत्नेन श्रद्धाभक्तिपुरःसरम् ॥ १६ ॥ काशपुष्पप्रतीकाश वह्निमारुतसम्भव ॥ मित्रावरुणायाः पुत्र कुम्भयोने नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥ विन्ध्यवृद्धिक्षयकर मेघतोयविषापह ॥ रत्नवल्लभदेवर्षे लङ्कावास नमोऽस्तु ते ॥ १८ ॥ आतापी भक्षितो येन वातापी च महाबलः ॥ लोपामुद्रापतिः श्रीमान्योऽसौ तस्मै नमो नमः ॥ १९ ॥ येनोदितेन पापानि विलयं यान्ति चाधयः ॥ व्याधयस्त्रिविधास्तापास्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ २० ॥ यादःपूर्णः

हे देवर्षे, हे लङ्कावास! आप को नमस्कार है ॥ १८ ॥ जिसने आतापी और महाबली वातापी को भक्षण किया। जो श्रीमान् लोपामुद्रा के पति हैं, उन्हें नमस्कार है ॥ १९ ॥ जिसके उदय से पाप विलीन होते हैं। त्रिविध व्याधि, त्रिविध ताप नष्ट होते हैं। उनको नित्य नमस्कार है ॥२०॥ जिसने प्रथम जलजन्तु परिपूर्ण समुद्र पान किया। ऐसे पुत्र, शिष्य,

स्त्री सहित मुनि को नमस्कार है ॥ २१ ॥ वैदिक 'अगस्त्यस्य' से स्त्री तथा शूद्र, पौराणिक मन्त्र द्वारा अगस्त्य को अर्घ्य दे प्रणाम करे ॥२२॥ हे राजपुत्रि, हे महाभागे, हे ऋषिपत्नि, हे वरानने, हे लोपामुद्रे, आप को नमस्कार है। मेरे इस अर्घ्य को स्वीकार करें ॥ २३ ॥ मन्त्रवेत्ता घी द्वारा अर्घ्यमन्त्र से एक हजार आठ या एक सौ आठ आहुति दे ॥२४॥

सरिन्नाथो येन वै शोषितः पुरा ॥ सपुत्राय सशिष्याय सपत्नीकाय वै नमः ॥ २१ ॥ अगस्त्यस्येदमर्घ्यं वै द्विजातिर्वेदमन्त्रतः ॥ शूद्रः पौराणमन्त्रेण दत्त्वार्घ्यं प्रणमेत्सुधीः ॥ २२ ॥ राजपुत्रि महाभागे ऋषिपत्नि वरानने ॥ लोपामुद्रे नमस्तुभ्यमर्घ्यं मे प्रतिगृह्यताम् ॥ २३ ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत अर्घ्यमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ आज्येनाष्टसहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा ॥ २४ ॥ कृत्वैवं च ततोऽगस्त्यं प्रणिपत्य विसर्जयेत् ॥ अचिन्त्यचरितागस्त्य यथागस्त्यः प्रपूजितः ॥ २५ ॥ ऐहिकामुष्मिकं गत्वा कार्यसिद्धिं व्रजस्व भोः ॥ विसर्जयित्वाऽगस्त्यं तं विप्राय प्रतिपादयेत् ॥ २६ ॥ वेदवेदाङ्गविदुषे दरिद्राय कुटुम्बिने ॥ अगस्त्यो द्विजरूपेण प्रतिगृह्णातु सस्कृतः ॥ २७ ॥ अगस्त्यः

इस प्रकार होम कर अगस्त्य को प्रणाम कर विसर्जन करे। हे अचिन्त्य चरिता अगस्त्य, आप का यथाविधि पूजन किया ॥ २५ ॥ इस संसार तथा परलोक कार्य सिद्धि कर यहाँ से आप जाओ। यों अगस्त्य का विसर्जन कर उसी प्रतिमा को ब्राह्मण को दे ॥२६॥ वेद-वेदाङ्ग का ज्ञाता दरिद्र तथा कुटुम्बी को सत्कार कर दे। चित्त में यह भावना हो कि अगस्त्य

मुनि इसको द्विजरूप से स्वीकार करें ॥ २७ ॥ इसे अगस्त्य ऋषि ग्रहण करते तथा अगस्त्य ऋषि देते हैं। दोनों के तारक अगस्त्य हैं। अतः अगस्त्य को नमस्कार है ॥ २८ ॥ दोनों मन्त्रों से ब्राह्मण दान करे। द्विज वैदिक और शूद्र पौराणिक मन्त्र पढ़े ॥ २९ ॥ सोनेके सींग वाली, दूध वाली दे, वस्त्रयुक्ता, चाँदी के खुरों वाली, ताम्र पीठ वाली,

प्रतिगृह्णाति अगस्त्यो वै ददाति च ॥ उभयोस्तारकोऽगस्त्यो ह्यगस्त्याय नमो नमः ॥ २८ ॥ मन्त्रद्वयेन दद्यात्तु ब्राह्मणस्य जपेदमुम् ॥ वैदिकं पूर्वविहितं पौराणं शूद्र एव तु ॥ २९ ॥ श्वेतां धेनुं ततो दद्याद्धेमशृङ्गीं पयस्विनीम् ॥ सहवत्सां रौप्यखुरां ताम्रपृष्ठीं सुशोभनाम् ॥ ३० ॥ कांस्यदोहनिकायुक्तां घण्टावस्त्रसमन्विताम् ॥ एवं सप्तदिनं दत्त्वा अर्घ्यं प्रागुदयान्मुने ॥ ३१ ॥ सप्तमे दिवसे धेनुं प्रदद्याच्च सदक्षिणाम् ॥ एवं कृत्वा सप्तवर्षमकामश्चेन्न जन्मभाक् ॥ ३२ ॥ सकामश्चक्रवर्तित्वं रूपारोग्यसमन्वितः ॥ ब्राह्मणः स्याच्चतुर्वेदसर्वशास्त्रविशारदः ॥ ३३ ॥ क्षत्रियः पृथिवीं सर्वां प्राप्नोत्यर्णवमेखलाम् ॥ वैश्यश्चेद्धान्यनिष्पत्तिं गोधनं चापि विन्दति

सुशोभना सफेद वर्ण की धेनु दान करे ॥३०॥ दोहनार्थ कांस्य पात्र, घण्टा वस्त्रयुक्त दान तथा हे मुने, अगस्त्योदय के पहले सात रोज तक अर्घ्य दान करे ॥ ३१ ॥ सातवें रोज दक्षिणा सहित धेनु का दान दे। इस तरह निष्काम हो सात रात अर्घ्य दान से जन्म भय रहित होता है ॥ ३२ ॥ सकाम रूप हो आरोग्य समन्वित चक्रवर्ती होता है। ब्राह्मण

चारों वेदों, छः शास्त्रों का ज्ञाता हो जाता है॥ ३३॥ क्षत्रिय समुद्र तक भूमि प्राप्त कर लेता है। वैश्य को धान्य तथा गोधन मिलता है ॥ ३४ ॥ शूद्र धन, आरोग्य और सत्य प्राप्त करता है। स्त्री तथा पुत्र, सौभाग्य तथा ऋद्धि युक्त घर पा लेती है ॥ ३५ ॥ हे विधिनन्दन, बड़ा पुण्य विधवा को होता है। कन्या को सुपति मिलता है तथा दुःखी व्याधि

॥ ३४ ॥ शूद्राणां धनमारोग्यं सत्यं चैवाधिकं भवेत् ॥ स्त्रीणां पुत्राः प्रजायन्ते सौभाग्यं गृहमृद्धिमत् ॥ ३५ ॥ विधवानां महत्पुण्यं वर्धते विधिनन्दन ॥ कन्या भर्तारमाप्नोति व्याधेर्मुच्येत दुःखितः ॥ ३६ ॥ येषु देशेष्वगस्त्यस्य पूजनं क्रियते नरैः ॥ तेषु देशेषु पर्जन्यः कामवर्षी प्रजायते ॥ ३७ ॥ ईतयः प्रशमं यान्ति नश्यन्ति व्याधयस्तथा ॥ पठन्ति ये त्वगस्त्यस्य अर्घ्यं शृण्वन्ति केचन ॥३८॥ ते सर्वे पापनिर्मुक्ताश्चिरं स्थित्वा महीतले ॥ हंसयुक्तविमानेन स्वर्गं यान्ति नरोत्तमाः ॥३९॥ यावज्जीवं करिष्यन्ति निष्कामं मुक्तिभागिनः ॥ ४० ॥ इति श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अगस्त्यार्घ्यविधिर्नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

रहित हो जाता है ॥ ३६ ॥ जिन देशों में अगस्त्यार्चन प्राणी करते हैं, उन देशों में कामवर्षी हो जाते हैं ॥ ३७ ॥ ईतियों का शमन तथा व्याधियों का नाश हो जाता है। जो अगस्त्यार्घ्य का पाठ तथा जो उसे सुनते हैं ॥३८॥ वे सब पापों से रहित हो इस भूमितल में बहुत कालतक रहते हुए नरोत्तम हंसयुक्त विमान से स्वर्ग जाते हैं ॥ ३९ ॥ जो निष्काम हो यावज्जीवन करेंगे, वे मुक्तिपथ के अधिकार हो जाते हैं ॥ ४० ॥

ईश्वर ने कहा—हे सनत्कुमार, कहे हुए व्रतकर्मों को कहूँगा। किस समय क्या करे, हे महामुने! उसे सुनो ॥१॥ सावन महीने की तिथि किस समय की लेनी चाहिये। किस समय क्या प्रधान है। पूजन तथा जागरण आदि कैसे करे ॥ २ ॥ उस काल में किस का समय कहा है। नक्तव्रत का उस व्रतकर्म में काल कहा ॥ ३ ॥ प्रधान में रात में

ईश्वर उवाच—सनत्कुमार वक्ष्यामि उक्तानां व्रतकर्मणाम्॥ काले कदा तु किं कार्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ १ ॥ का तिथिः श्रावणे मासि किं कालव्यापिनी भवेत्॥ ग्राह्या प्रधानं किं तत्र पूजा जागरणादिकम् ॥ २ ॥ तत्तत्कथनकाले तु केषाञ्चित् काल ईरितः ॥ नक्तव्रतस्य कालस्तु उक्तस्तद्व्रतकर्मणि ॥ ३ ॥ प्रधानं रात्रिभुक्तिस्तु भोजनाभावयुग्दिवा ॥ उद्यापनं तु सर्वेषां तत्तद्व्रततिथौ भवेत् ॥ ४ ॥ असम्भवे तु पञ्चाङ्गं शुद्धे स्यादधिवासनम् ॥ द्वितीयदिवसे कुर्याद्धोमादिविधिमाहृतः ॥ ५ ॥ धारणा पारणा चैव ह्रासवृद्धी न कारणम् ॥ नभःशुक्लप्रतिपदि सङ्कल्प्योपोषणं चरेत् ॥ ६ ॥ द्वितीयदिवसे भुक्तिस्ततोऽन्यस्मिन्नुपोषणम् ॥ एवं क्रमेण

भोजन तथा भोजनाभाव दिन में कहा। प्रातःकाल उन-उन व्रतकाल में उद्यापन कहा ॥ ४ ॥ असम्भव में पञ्चांग से शुद्ध में अधिवासन करे तो दूसरे रोज विधि द्वारा होम करे ॥५॥ धारणा तथा पारणा में ह्रास वृद्धि नहीं होती। सावन शुक्ल प्रतिपदा रोज संकल्प कर उपवास करे ॥६॥ अन्य रोज भोजन, दूसरे दिन हविष्यान्न पारण में स्वीकार करे ॥७॥

पारणा रोज एकादशी हो तो उपवास तीन करे। रविवार व्रतार्चन का काल सुबह ही है ॥ ८ ॥ सोमवार में समय सायंकाल को प्रधान कहा है। मंगल, बुध तथा गुरु की पूजा में मुख्य सुबह समय कहा है ॥ ९ ॥ शुक्र पूजा में सुबह तथा रात में जागरण करे। नृसिंह पूजा शनि के शाम को करे ॥ १० ॥ शनि व्रत दान में मध्याह्न मुख्य है। हनुमान्

कुर्वीत हविष्याशी तु पारणे ॥ ७ ॥ एकादशीपारणाहे उपवासत्रयं तथा ॥ रविवारव्रतार्चायाः कालः स्यात्प्रातरेव हि ॥ ८ ॥ सोमवारे प्रधानः स्यात्सायङ्कालः प्रकीर्तितः ॥ भौमे बुधे गुरौ मुख्यः प्रातःकालश्च पूजने ॥ ९ ॥ शुक्रवारे पूजनं स्यात्कल्ये रात्रौ च जागरः ॥ नृसिंहपूजने मन्दे सायङ्कालश्च पूजनम् ॥ १० ॥ शनिव्रते शनेर्दाने मध्याह्नो मुख्य इष्यते ॥ हनूमतोऽपि मध्याह्नः प्रातरश्वत्थपूजनम् ॥ ११ ॥ रोटकाख्ये व्रते वत्स प्रतिपत्सोमसंयुता ॥ त्रिमुहूर्तोत्तरा सा स्यादन्यथा पूर्वयोगिनी ॥ १२ ॥ औदुम्बरी द्वितीया तु सायाह्नव्यापिनी मता ॥ तृतीया संयुता ग्राह्या द्वयोश्चेत्पूर्ववेधिता ॥ १३ ॥ तृतीया स्वर्णगौर्याख्या सा चतुर्थीयुता भवेत् ॥

की पूजा मध्याह्न तथा अश्वत्थ पूजा सुबह में होती है ॥ ११ ॥ हे वत्स, रोटक व्रत में प्रतिपदा तथा सोमवार सहित त्रिमुहूर्तोत्तर स्वीकृत है, नहीं तो पहले की तिथि ग्राह्य है ॥ १२ ॥ उदुम्बरी द्वितीया सायाह्न व्यापिनी तृतीयायुक्त है। दोनों रोज सायं व्यापिनी हो पूर्ववेधित ले ॥ १३ ॥ स्वर्णगौरी में चतुर्थीयुक्ता तृतीया है। गणेश में तृतीयाविद्ध चतुर्थी

है ॥ १४ ॥ नाग पूजा में षष्ठीयुक्त पञ्चमी है। सूपौदन व्रत में सायंव्यापिनी सप्तमीयुक्त षष्ठी है ॥१५॥ शीतला व्रत में मध्याह्न व्यापिनी सप्तमी है। देवी के पवित्रारोपण में रात्रियुक्ता अष्टमी तिथि है ॥ १६ ॥ कुमारी में रात्रि व्यापिनी नवमी उत्तम है। आशा में रात्रि व्यापिनी दशमी है ॥१७॥ हे मुने, दशमी विद्धा एकादशी अग्राह्य है। उसके वेध को

चतुर्थी गणनाथस्य मातृविद्धा प्रशस्यते ॥ १४ ॥ नागानां पूजने शस्ता षष्ठीयुक्ता च पञ्चमी ॥ सूपौदनव्रते षष्ठी सायाह्ने सप्तमीयुता ॥ १५ ॥ मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या सप्तमी शीतलाव्रते ॥ पवित्रारोपणोऽष्टम्यां देव्या रात्रियुता तिथिः ॥ १६ ॥ कुमारी नवमी नक्तव्यापिनी तु प्रशस्यते ॥ आशासंज्ञा तु दशमी सा नक्तव्यापिनी भवेत् ॥ १७ ॥ त्याज्या विद्धैकादशी तु तत्र वेधं मुने शृणु ॥ अरुणोदयवेधस्तु दशम्यां वैष्णवान्प्रति ॥ १८ ॥ आदित्योदयवेधस्तु स्मार्तानां निन्द्य एव सः ॥ अरुणोदयकालस्तु यामार्धं चरमां निशि ॥ १९ ॥ एवं रीत्या यस्य भवेद् द्वादशी सा पवित्रके ॥ त्रयोदशी त्वनङ्गस्य व्रते स्याद्रात्रियोगिनी ॥ २० ॥ द्वितीययामे तत्रापि सा

सुनो। अरुणोदय समय दशमी वेध वैष्णवों के यहाँ होता है ॥ १८ ॥ सूर्योदय समय में स्मार्तों के यहाँ दशमी वेध होता है, यह वेध निन्द्य ही है। रात की अन्तिम प्रहर आधा हिस्सा अरुणोदय समय होता है ॥१९॥ इस रीति द्वारा द्वादशी पवित्रारोपण में वही है। अनंगव्रत में रात्रिव्यापिनी त्रयोदशी है ॥२०॥ द्वितीय प्रहर व्यापिनी हो जाने से

प्रशस्ततर होती है । शिव पवित्रारोपण में चतुर्दशी रात्रिव्यापिनी है ॥ २१ ॥ अर्धरात व्यापिनी अधिक उत्तम है। उपाकर्म तथा उत्सर्ग में पूर्णिमा और श्रवण नक्षत्र ग्राह्य है ॥ २२ ॥ यदि अन्य रोज पूर्णिमा तीन मुहूर्त है तो दूसरे दिन करे। नहीं तो ऋग्वेदी तैत्तिरीय शाखा वाले को पहले रोज करे ॥ २३ ॥ तैत्तिरीय शाखा वाले यजुर्वेदियों को

प्रशस्ततरा भवेत् ॥ पवित्रारोपणे शम्भो रात्रिगा स्याच्चतुर्दशी ॥ २१ ॥ अतिप्रशस्ता तत्रापि निशीथव्यापिनी तु या ॥ उपाकर्मणि चोत्सर्गे पूर्णिमा श्रवणं च भम् ॥ २२ ॥ त्रिमुहूर्तं द्वितीयेऽह्नि तदा ग्राह्यं परं दिनम् ॥ नोचेदनुष्ठितः पूर्वं तैत्तिराणां च बह्वृचाम् ॥ २३ ॥ तैत्तिरीयां च यजुषां मुहूर्तत्रयगामपि ॥ उत्तरस्मिन्पूर्वमेव दिनं स्यात्कर्मणि द्वयोः ॥ २४ ॥ मुहूर्तानन्तरं पूर्वदिने चेत्सङ्गतिर्भवेत् ॥ पूर्णिमा श्रवणर्क्षं च मुहूर्तद्वितयात् पुरा ॥ २५ ॥ उत्तरस्मिन्समाप्तं चेत्तदा पूर्वदिनं भवेत् ॥ हस्तभं त्वपराह्णे स्याद् ग्राह्यं तत्सामवेदिभिः ॥ २६ ॥ दिनद्वये तदा स्याच्चेत्पूर्वमेव दिनं भवेत् ॥ उपाकर्मप्रयोगाऽन्ते कालो दीपस्य संसदः ॥ २७ ॥

अन्य रोज पूर्णिमा तीन मुहूर्त रहने पर भी उपाकर्म और उत्सर्ग दोनों पूर्व रोज करे ॥ २४ ॥ पूर्व रोज पूर्णिमा तथा श्रवण नक्षत्र एक मुहूर्तोत्तर सम्बन्ध हो तो और अन्य रोज दो मुहूर्त के भीतर पूर्णिमा श्रवण नक्षत्र ॥ २५ ॥ समाप्त हो तो पूर्व रोज करे। अपराह्णकाल में सामवेदियों को हस्त नक्षत्र हो तो उपाकर्म उत्सर्ग करे ॥२६॥ दोनों रोज हस्त

नक्षत्र अपराह्णकाल व्यापिनी हो तो पहले रोज कर उपाकर्मोत्तर सभादीप करे ॥ २७ ॥ जो समय श्रावणी कर्म में कहा वही सर्पबल्यर्थ है पर रात में स्व-स्वगृह्यसूत्र के अनुसार करे ॥ २८ ॥ श्रवणाकर्म तथा सर्पबलि के सूर्यास्त समय व्यापिनी पूर्णिमा उत्तम है। हयग्रीवोत्सव में पूर्णिमा मध्याह्न व्यापिनी ले ॥ २९ ॥ रक्षाबन्धन कार्य में अपराह्न

श्रवणाकर्मणि प्रोक्तः कालः सर्पबलौ तथा ॥ पर्वणोऽह्नि भवेद्रात्रौ स्व-स्वगृह्यानुसारतः ॥ २८ ॥
पौर्णिमाऽत्र प्रशस्ता वा स्यादस्तमययोगिनी ॥ हयग्रीवोत्सवे पूर्णा मध्याह्नव्यापिनी भवेत् ॥ २९ ॥
अपराह्णव्यापिनी स्याद्रक्षाबन्धनकर्मणि ॥ चन्द्रोदयव्यापिनी च स्यात् सङ्कष्टचतुर्थिका ॥ ३० ॥
उभयत्र यदा सा स्यान्न स्याद्वा पूर्वगा भवेत् ॥ चतुर्थी च तृतीयायां महापुण्यफलप्रदा ॥ ३१ ॥
कर्तव्या व्रतिभिर्वत्स गणनाथसुतोषिणी ॥ गणेशगौरीबहुलाव्यतिरिक्ताः प्रकीर्तिताः ॥ ३२ ॥
चतुर्थ्यः पञ्चमीविद्धा देवतान्तपूजने ॥ निशीथव्यापिनी ग्राह्या कृष्णजन्माष्टमी तिथिः ॥ ३३ ॥

व्यापिनी पूर्णिमा ग्राह्य है। चन्द्रोदय व्यापिनी सङ्कट चतुर्थी स्वीकृत है ॥ ३० ॥ चतुर्थी चन्द्रोदय व्यापिनी दोनों दिन हो या न हो तो पहले रोज करे। क्योंकि तृतीया रोज चतुर्थी हो जाने से महत्पुण्य फल प्रद होती है ॥३१॥ हे वत्स, व्रती पहले रोज गणनाथ को राजी करने वाली चतुर्थी का व्रत करे। गणेश, गौरी, तथा बहुला छोड़ ॥ ३२ ॥ चतुर्थी दूसरे देवों की पूजा में पञ्चमी विद्धा ली है। श्रीकृष्ण पूजा में अर्द्धरात्रि व्यापिनी अष्टमी तिथि है ॥ ३३ ॥ तिथि

निर्णय के बारे में सर्वत्र छः मानी गयी है। एक तो दोनों रोज पूर्ण व्याप्ति, दोनों दिन केवल अव्याप्ति ॥३४॥ दोनों रोज अंश द्वारा सम व्याप्ति, दोनों रोज अंश द्वारा विषम व्याप्ति तथा अन्य दिन अंश द्वारा व्याप्ति ॥ ३५ ॥ पूर्व रोज अंश से व्याप्ति अन्य रोज अव्याप्ति, इन छह पक्षों में से तीन पक्षों में सन्देह नहीं उसे कहता हूँ, आप उसे सुनें ॥३६॥

षट्प्रकारा तु सर्वत्र निर्णये तिथिरिष्यते ॥ पूर्णाव्याप्तिर्द्वयोरह्नोरव्याप्तिरपि केवला ॥ ३४ ॥ अंशतश्च समा व्याप्तिरंशतो विषमो तथा ॥ सम्पूर्णाव्याप्तिरेकत्र अंशतश्च परेऽहनि ॥ ३५ ॥ अंशतो व्याप्तिरेकत्र अव्याप्तिर्परत्र च ॥ पक्षत्रये तु सन्देहो यथा नास्ति तथा शृणु ॥ ३६ ॥ अंशतो विषमव्याप्तावधिका व्याप्तिरुत्तमा ॥ एकत्र पूर्णा चान्येऽत्र सा पूर्णा चोच्यते तिथिः ॥ ३७ ॥ अव्याप्तिरंशतो व्याप्तिस्तत्रांशव्याप्तिरुत्तमा ॥ अंशव्याप्तिर्यदा पूर्णा अंशतश्च समा यदा ॥ ३८ ॥ संशयस्तत्र भवति तस्य स्यान्निर्णयो भिदा ॥ क्वचिद्भवेद्युग्मवाक्याद्वारनक्षत्र-

विषमव्याप्ति में अंशव्याप्ति से अधिकव्याप्ति श्रेष्ठ होती है। एक रोज जो पूर्ण तिथि है वही अन्य रोज अपूर्णा कही जाती है ॥ ३७ ॥ एक रोज अव्याप्ति अन्य दिन अंशव्याप्ति हो तो श्रेष्ठ अंश व्याप्ति होती है। अंशव्याप्ति जब हो तथा वह सम हो तो ॥ ३८ ॥ वहाँ संशय हो जाता है तो भेदवाक्य निर्णय करे। युग्म वाक्य से कहीं-कहीं वार नक्षत्र

योगबल से ॥ ३६ ॥ कहीं प्रधान दो योग से। कहीं पारणा योग से, जन्माष्टमी व्रत में सन्देह हो याने इन पक्षों में परा हो ॥ ४० ॥ अष्टम्यन्त में पारण करे। यदि तीन पहर अष्टमी समाप्त हो या बाद तक रहती हो तो सुबह में पारण करे ॥ ४१ ॥ पिठोरी व्रत में अमा शुभ मध्याह्नव्यापिनी है। वृषभार्चन में सायंकाल व्यापिनी अमा ली है ॥ ४२ ॥

योगतः ॥ ३६ ॥ प्रधानद्वययोगेन पारणायोगतः क्वचित् ॥ जन्माष्टम्यां तु सन्देहे त्रिपक्षे तु परा भवेत् ॥ ४० ॥ अष्टम्यन्ते पारणं स्याद्यदि यामत्रयात्पुरा ॥ समाप्येत तदूर्ध्वं चेदष्टम्युषसि पारणा ॥ ४१ ॥ व्रतं पिठोरीसंज्ञाऽमा मध्याह्नव्यापिनी शुभा ॥ वृषभाणां पूजने तु अमा सायन्तनी भवेत् ॥ ४२ ॥ दर्भाणां सञ्चये चैव सङ्गवः काल ईरितः ॥ त्रिंशत्पुण्याः पूर्वनाड्यः कर्कसंक्रमणे रवेः ॥ ४३ ॥ पुण्याः षोडश नाड्यस्तु सिंहे पूर्वाः परा अपि ॥ केचिदिच्छन्ति मुनयः पूर्वा एव तु षोडश ॥ ४४ ॥ अगस्त्यार्घ्यस्य कालस्तु व्रत एव प्रकीर्तितः ॥ अयं ते कथितो वत्स कर्मणां कालनिर्णयः ॥ ४५ ॥ य इदं शृणुतेऽध्यायं यश्चापि परिकीर्तयेत् ॥

दर्भों के संचय में संगव समय है। सूर्य की कर्कसंक्रान्ति में तीस घड़ी पहले पुण्य समय माना है ॥ ४३ ॥ सिंहसंक्रान्ति में सोलह घड़ी पहले तथा सोलह घड़ी में पुण्य समय हो जाता है। कुछ ऋषि सिंह संक्रान्ति के पहले सोलह घड़ी पुण्य

समय कहते हैं ॥ ४४ ॥ अगस्त्यार्घ्य समय व्रत-विधि सहित ही कहा है। हे वत्स, यह कर्मों का काल निर्णय

नभोमासि कृतानां स व्रतानां लभते फलम् ॥ ४६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये सनत्कुमारसंवादे व्रतनिर्णयकालनिर्णयकथनं नाम एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

ईश्वर उवाच—कियत्कियत्ते कथितं माहात्म्यं श्रावणस्य हि ॥ सर्वं वर्णयितुं शक्यं नालं वर्षशतैरपि ॥ १ ॥ प्रियेयं मम कल्याणि हुत्वा दक्षाध्वरे तनुम् ॥ हिमाचलसुता जाता तेनेयं योजिता मया ॥ २ ॥ सेवने श्रावणे मासि तेन मे प्रियकृन्नभः ॥ नातिशीतो नाति-चोष्णः श्रावणे मासि भूपतिः ॥ ३ ॥ उद्धूलयित्वा स्वतनुं सर्वां श्रौतेन भस्मना ॥ श्वेतेनाथ

कहा ॥ ४५ ॥ इस अध्याय को जो श्रवण करता है तथा जो इसे कहता है उसे श्रावण महीने के सब व्रतों का फल मिलता है ॥ ४६ ॥

ईश्वर ने कहा—आप से मैंने जो कुछ सावन महीने का माहात्म्य कहा तथा सौ सालों में भी नहीं मास का वर्णन हो सकता ॥ १ ॥ इस मेरी प्रिया सती ने दक्षप्रजापति के यज्ञ में अपने देह का होम कर हिमालय की पुत्री हो इसी सावन महीने का सेवन किया। जिसके द्वारा मुझे फिर प्राप्त किया ॥ २ ॥ अतः यह महीना मुझे बहुत प्रिय है। इसी महीने में न तो अति ठंडक न अति गरम होता है। इस सावन महीने में राजा या प्रजा ॥ ३ ॥ अपनी देह

में वैदिक मन्त्र द्वारा सफेद भस्म को लगाता है या जल मिश्रित बारह त्रिपुण्ड धारण करता है ॥ ४ ॥ मस्तक, छाती, नाभि, दोनों भुजा, दोनों कूर्प, दोनों कन्धा, कण्ठ, सिर और पीठ में ॥ ५ ॥ 'मानस्तोके' इस मन्त्र से 'सद्योजातादि' इससे षडक्षर मंत्र से सर्वाङ्ग में भस्म लगा सुशोभित करे ॥ ६ ॥ शरीर में एक सौ आठ रुद्राक्ष को धारण करे। बत्तीस

जलार्द्रेण त्रिपुण्ड्रान् द्वादशांश्चरेत् ॥ ४ ॥ भाले वक्षसि नाभौ च बाह्वोः कूर्परयोस्तथा ॥ मणि-बन्धद्वये चैव कण्ठे मूर्धनि पृष्ठके ॥ ५ ॥ मानस्तोकेति मन्त्रेण सद्योजातादिमन्त्रतः ॥ षडक्षरेण मन्त्रेण भस्मना शोभयेत्तनुम् ॥ ६ ॥ धारयेच्चैव रुद्राक्षानष्टाधिकशतं तनौ ॥ द्वात्रिं-शद्धारयेत्कण्ठे मूर्ध्नि द्वाविंशतिस्तथा ॥ ७ ॥ कर्णद्वये द्वादशैव चतुर्विंशत्करद्वये ॥ अष्टा-ष्टभुजयोर्भाले एकमेकं शिखाग्रगम् ॥ ८ ॥ एवं कृत्वा तु मामर्च्य जपेत्पश्चात्तरं मनुम् ॥ श्रावणे मासि विप्रेन्द्र सोऽहमेव न संशयः ॥ ९ ॥ ज्ञात्वेमं मत्प्रियं मासं मम तोषाय केशवः ॥ कृष्णाष्टमी

रुद्राक्ष कण्ठ में बाइस मस्तक में ॥ ७ ॥ बारह दोनों कानों में, चौबीस दोनों हाथ में, आठ-आठ दोनों भुजा में, एक भाल में और एक शिखाग्र भाग में ग्रहण करे ॥ ८ ॥ इस प्रकार एक सौ आठ अपनी देह को सुशोभित कर मेरी पूजा करे। 'पंचाक्षर मन्त्र' जापी हो। हे विप्रेन्द्र, ऐसा करने मात्र से सावन महीने में हम ही वह हैं। सन्देह इसमें नहीं है ॥ ९ ॥ सावन महीने को मेरा प्रिय जान इस महीने में केशव तथा मेरी पूजा करे। मुझे उसमें कृष्णाष्टमी अधिक

तिथि प्रिय है ॥ १० ॥ इसी रोज देवकीगर्भ से हरि प्रादुर्भूत हुए। हे विप्रेन्द्र, यह मैंने सावन महीने का माहात्म्य लेशमात्र कहा और आप क्या सुनेंगे ॥ ११ ॥ सनत्कुमार ने कहा—हे पार्वतीश, सावन महीने के जिन कर्मों को कहा, आपने वे सब सुनने के समय आनन्द रूपी अर्णव में मग्न हो जाने से तथा बहुत हो जाने के निमित्त याद नहीं

च तत्रापि मम प्रियतरा तिथिः ॥ १० ॥ देवक्या जठरात्तस्मिन्दिने प्रादुरभूद्धरिः ॥ एतत्ते कथितं लेशात्किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ ११ ॥ सनत्कुमार उवाच—यद्यत्कृतं पार्वतीश नभोमासि त्वयेरितम् ॥ आनन्दाब्धौ निमग्नत्वाद् बहुत्वाच्चावधारणा ॥ १२ ॥ न स्थिता क्रमशो नाथ ब्रूहि सर्वं यथा तथा ॥ श्रुत्वा चाव्यवधानेन धारयिष्यामि भक्तितः ॥ १३ ॥ ईश्वर उवाच—शृणुष्वावहितो भूत्वा अनुक्रमणिकां शुभाम् ॥ आदौ प्रश्नः शौनकस्य ततः सूतस्य चोत्तरम् ॥ १४ ॥ श्रोतुर्गुणास्तव प्रश्ना निरुक्तिः श्रावणस्य च ॥ तस्य स्तुतिः पुनः प्रश्नस्तत्र विस्तरतो मुने ॥ १५ ॥ मम स्तुतिस्त्वत्कृता च नामनिर्वचनादिना ॥ भूयो ममोत्तरं तत्र उद्देशः क्रमतो-

है ॥ १२ ॥ हे नाथ, तथ्यरूप से आप कहे जिस क्रम से पता हो तथा मैं सावन द्वारा भक्ति से ग्रहण करूँगा ॥१३॥ ईश्वर ने कहा, समाहित हो शुभअनुक्रमणिका सुनो। शौनक का पूर्व प्रश्न है अनन्तर सूत का उत्तर है ॥१४॥ सुनने वालों के गुणों की कथा, आपके प्रश्न और सावन मास की निरुक्ति तथा सावन की स्तुति हे मुने, फिर सविस्तर प्रश्न

आपका हुआ ॥ १५ ॥ मेरी आप से स्तुति नाम निर्वचन आदि सहित हुई । फिर उत्तर क्रम से जिसमें सब उद्देश्य हैं ॥१६॥ विशिष्ट तरह से आपका प्रश्न, नक्तव्रत रुद्राभिषेक तथा लक्ष पूजन विधान, ॥ १७ ॥ दीपदान माहात्म्य, किसी प्रिय चीज का छोड़ना, रुद्राभिषेक फल, रुद्राभिषेक का पंचामृत से फल, ॥ १८ ॥ भूमि शयन तथा मौनव्रत फल, धारण

ऽखिलम् ॥ १६ ॥ विशेषतस्तव प्रश्नस्ततो नक्तव्रते विधिः ॥ रुद्राभिषेककथनं लक्षपूजाविधिस्ततः ॥ १७ ॥ दीपदानं परित्यागः कस्यचित्प्रियवस्तुनः ॥ फलं रुद्राभिषेकेण तथा पञ्चामृतेन च ॥ १८ ॥ फलं भूशयनस्थापि तथा मौनव्रतस्य च ॥ धारणा पारणा चैव ततो मासोपवासने ॥ १६ ॥ सोमाख्याने ततो लक्षरुद्रवर्तिविधिः स्मृतः ॥ कोटिलिङ्गविधाने च व्रतं चानौदनाभिधम् ॥ २० ॥ हविष्याशनमप्यत्र पत्रावल्यां च भोजनम् ॥ शाकत्यागो भूशयनं प्रातःस्नानं दमः शमः ॥ २१ ॥ स्फटिकादिषु लिङ्गेषु अजाजपफलं ततः ॥ प्रदक्षिणा नमस्कारान् वेदपारायणं तथा ॥ २२ ॥ विधिः पुरुषसूक्तस्य ग्रहयज्ञविधिस्ततः ॥ रविचन्द्रकुजानां च क्रमशो

पारणा विधि, मासोपवास कथन ॥ १६ ॥ सोमाख्यान में लक्षवर्ती विधि कथन, कोटिलिंग विधान, अनोदनव्रत कथन, ॥ २० ॥ हविष्यान्न भोजन, पत्तल में भोजन, पाक त्याग, भूशयन, सुबह नहाना, दम तथा शम कथन, ॥ २१ ॥ स्फटिक आदि तथा लिंगों में, अजा जप फल, प्रदक्षिणा, नमस्कार, वेद पारायण. ॥ २२ ॥ पुरुषसूक्त विधि, ग्रहयज्ञ

विधि, क्रम से रवि: चन्द्र तथा भौम का व्रत कथन ॥ २३ ॥ बुध और गुरु व्रत शुक्र रोज जीवन्तिका व्रत, शनि रोज नृसिंह व्रत, शनि, हनुमान् और पीपल व्रत कथन ॥ २४ ॥ रोटकव्रत तथा औदुम्बरव्रत माहात्म्य, स्वर्णगौरी तथा दूर्वागणपति व्रत कथन ॥ २५ ॥ पंचमी में नागव्रत, षष्ठी को सुपौदन व्रत, सप्तमी को शीतलाव्रत तथा पवित्रारोपण

व्रतविस्तारः ॥ २३ ॥ बुधगुर्वोर्व्रतं पश्चाच्छुक्रे जीवन्तिकाव्रतम् ॥ शनौ नृसिंहस्य शनेरनिला-श्वत्थयोस्तथा ॥ २४ ॥ रोटकव्रतमाहात्म्यं तत औदुम्बरव्रतम् ॥ स्वर्णगौरीव्रतं पश्चाद् दूर्वागण पतिव्रतम् ॥ २५ ॥ नागव्रतं च पञ्चम्यां षष्ठ्यां सूपौदनव्रतम् ॥ शीतलाख्यं व्रतं देव्याः पवित्रा रोपणं ततः ॥ २६ ॥ दुर्गाकुमारीपूजा च आशाव्रतमतः परम् ॥ उभयैकादशी पश्चात्पवित्रारोपणं हरेः ॥ २७ ॥ अनङ्गस्य त्रयोदश्यां ततः शम्भोः पवित्रकम् ॥ उपाकर्मोत्सर्जने च श्रावणीकर्म चैव हि ॥ २८ ॥ ततः सर्पबलिर्वाजिग्रीवजन्ममहोत्सवः ॥ सभादीपस्तथा रक्षाबन्धः सङ्कटनाशने

विधि ॥ २६ ॥ नवमी को दुर्गाकुमारी पूजा, दशमी को आशाव्रत, एकादशी द्वय व्रत, द्वादशी को विष्णु प्रीत्यर्थ पवित्रारोपण ॥ २७ ॥ त्रयोदशी को कामदेव व्रत, चतुर्दशी को शिव प्रीत्यर्थ पवित्रारोपण, पूर्णिमा को उपाकर्म उत्सर्ग तथा श्रावणीकर्म विधि ॥ २८ ॥ सर्पबलि, हयग्रीव जयन्ती महोत्सव, सभादीप, रक्षाबन्धन तथा गणेश का संकष्टनाशन व्रत ॥ २९ ॥ कृष्णजन्माष्टमी व्रत तथा कथाविधि, पिठोरव्रत, पोलासंज्ञक वृषभव्रत ॥ ३० ॥ दर्भ संग्रह, नदियों का

रजस्वला समय, सिंह संक्रान्ति में गो प्रसव पर शान्ति, कर्क सिंह सावन में ॥ ३१ ॥ दान, स्नान, युक्त मासमाहात्म्य श्रवण कथन, व्यास पूजा, अगस्त्य ऋष्य अर्घ्य विधि ॥३२॥ कर्म तथा व्रतों का फल निर्णय तथा मासमाहात्म्य श्रावण द्वारा महीने के सब व्रतों का फल भागी होना ॥ ३३ ॥ हे सनत्कुमार, आप अपने मन में इसी क्रम को ग्रहण

॥ २६ ॥ व्रतं ततः कृष्णजन्माष्टमीव्रतकथानकम् ॥ व्रतं पीठासंज्ञं तु पोलासंज्ञं वृषव्रतम् ॥ ३० ॥
दर्भाणां संग्रहश्चैव नदीनां सरजस्कता ॥ सिंहे गोप्रसवे शान्तिः कर्कसिंहनभेषु च ॥ ३१ ॥
दानानि स्नानमाहात्म्यं श्रवणं कथनं तथा ॥ ततो वाचकपूजा च अगस्त्यार्घ्यं ततः परम् ॥ ३२ ॥
कर्मणां च व्रतानां च कालनिर्णय ईरितः ॥ एतन्मासि कृतानां स व्रतानां फलभाग्भवेत् ॥३३॥
सनत्कुमार हृदये धारयस्व क्रमं शुभम् ॥ ३४ ॥ य इमं शृणुतेऽध्यायं माहात्म्यं श्रावणस्य यत् ॥
तत्फलं समवाप्नोति व्रतानां चैव यत्फलम् ॥ ३५ ॥ किं बहूक्तेन विप्रर्षे श्रावणे विहितं तु यत् ॥
तस्य चैकस्य कर्तापि मम प्रियतरो भवेत् ॥ ३६ ॥ सूत उवाच—सनत्कुमारः पीत्वेवं शिववा-

करें ॥ ३४ ॥ इस अध्याय को जो श्रवण करता है तथा सावन महीने के माहात्म्य को श्रवण करता है वह महीने के सब व्रतों का फल प्राप्त करता है ॥ ३५ ॥ हे विप्रर्षे, अधिक कहने से क्या। इस सावन महीने में किसी एक व्रत से वह मेरा प्रिय पात्र होता है ॥ ३६ ॥ सूत ने शौनक आदि ऋषियों से कहा—हे देवर्षिगण, अमृत कान में पानकर

आनन्दित हो गये तथा कृतकृत्य हो गये ॥ ३७ ॥ देवर्षि रुत्तम सनत्कुमार सावन महीने की स्तुति और शंभु को अपने

क्यामृतं परम् ॥ श्रुतिद्वारा चाप मोदं कृतकृत्यो बभूव ह ॥ ३७ ॥ नभोमासं स्तुवन् शम्भुं स्मरन् स्वहृदये शिवम् ॥ शङ्करेणाभ्यनुज्ञातो ययौ देवर्षिसत्तमः ॥ ३८ ॥ इदं रहस्यं परमं नाख्येयं यस्य कस्यचित् ॥ भवतो योग्यतां दृष्ट्वा मयैतत्कथितं प्रभो ॥ ३९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अनुक्रमणिकाकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ इति श्रावणमासमाहात्म्यं समाप्तम् ॥

हृदय में याद कर उनकी आज्ञा द्वारा अपनी जगह गये ॥ ३८ ॥ जिस किसी से इस परम रहस्य को न कहे । हे प्रभो, आपको योग्यता देख मैंने कहा ॥ ३९ ॥

—०—

पुस्तक मिलने का पता—ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर

राजादरवाजा, वाराणसी ।

मुद्रक—मुकुन्द लाल अग्रवाल, बाम्बे मुद्रण प्रेस, नाटी इमली, वाराणसी ।

इति

श्रावणमासमाहात्म्य

पुस्तक मिलने का पता—

ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर

राजादरवाजा, वाराणसी।

हनुमान तो पूछता ये किस जन्म का बैर चुकाये

विख्यात कवि पं० चन्द्रशेखर मिश्र का कुँअर सिंह (भोजपुरी का
काव्य) और द्रौपदी काव्य हिन्दी जगत में ख्याति प्राप्त कर चुका
ने उत्तर रामचरित को दृष्टिगत करते हुए सीता काव्य की रचना
ली है। 'चेतनालोक' ने उसे धारावाहिक प्रकाशित करने का संकल्प
उसकी प्रथम कड़ी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। —सम्पादक]

ल्मीकि आश्रम के समीप, गंगा जी के उस पार रामजी द्वारा त्यागी गई
छोड़कर लक्ष्मण जी अयोध्या लौट रहे हैं। सीता जी को वन में छोड़ने
लक्ष्मण द्वारा कराया गया। वही लक्ष्मण जिनके समक्ष सीता जी की
क्षा हुई थी। ऐसा कुकृत्य करके लौट रहे सौमित्र ग्लानि से भर गये हैं।

न्वी के तट उस पार छोड़ जानकी को,
नाव पर बैठ लक्ष्मण चलने लगे।
के प्रताप ताप की लपट सह नहीं—
पाये, हिम सम नयनों से गलने लगे।
हुई है रवि वंश की सुछवि हाय,
धिक ! धिक ! राम कह रवि ढलने लगे।
राज्य में हुआ है घोर अपकर्म सोच,
लखन से लखन ही प्रश्न करने लगे।

ने कहा लक्ष्मण से अब आज से तू है अधर्म का राही।
चाहिए था तुमको, हुई तेरे ही कारण सारी तबाही।
वंश के लायक है नहीं, जा मुख ऊपर पोत ले स्याही।
दण्ड नहीं मिलता यदि तू निर्भीक हो देता गवाही।

सी विडम्बना है यह धीरजधारी से धैर्य गया न सँभाला।
र्ति कलंकित राघव की हुई, मेरे गले अपकीर्ति की माला।
नते क्या ? यदि मैं कहता 'प्रभु ! सीय को दे नहीं देश निकाला।'
म का वाक्य था लौटने वाला न मेरा कलंक है छूटने वाला।

क्ष को लक्ष बनाकर रावन पूत की शक्ति थी छूटी।
रा तब भी मैं नहीं तकदीर हमारी उसी क्षण फूटी।
रण. अंजनी नन्दन, अन्तिम साँस हमारी न टूटी।
ान तू बैरी हुए मम, नाहक लाये संजीवनी बूटी।

ों मरने न दिया हमको तब, दुर्दिन ये अब सामने आये।
री के देश से लाकर वैद्य को नाहक नाड़ी हमारी धराये।
रचय है विधि वाम, तभी तो गया हुआ प्राण भी वापस लाये।
मिलते हनुमान तो पूछता, 'ये किस जन्म का बैर चुकाये।'

ी उस घोर समरांगण में. नष्ट-भ्रष्ट हो गई समस्त शक्ति आसुरी।
ोघ शक्ति तूने व्यर्थ कर डाली, हो गई नगण्य शूल मेघनाद की छुरी।
ाप्ति में तू बाधक न होते यदि, मेरे द्वारा सीय बनती न कभी बापुरी।
ढती न होता कुकर्म यह, रहता न बाँस और बजती न बाँसुरी।

—क्रमशः